का हमें अमूल्य सहयोग एवं सहायता मिली है अथवा यों कहना चाहिए कि पंडित मुनिश्री की कृपा का ही यह फल है कि हम इन थोकड़ों को इस रूप में रखने में समर्थ हो सके हैं। इसके लिए हम मुनिश्री के अत्यन्त आभारी हैं। इसी प्रकार श्रावकवर्य श्रीमान् हीरालालजी सा० मुकीम ने भी इन थोकड़ों के संकलन और संशोधन में हमें काफी सहयोग दिया है, इसके लिए हम उनका भी आभार मानते हैं।

चिरंजीव जेठमल ने बड़ी लगन, रुचि और परिश्रम के साथ इन थोकड़ों का संग्रह किया है। आशा है, धार्मिक ज्ञान के प्रति उनकी जो लगन और रुचि है, वह उत्तरोत्तर वृद्धिंगत होती रहे, जिससे समाज को ज्ञान का अधिकाधिक लाभ मिलता रहे।

प्रूफ संशोधन की पूर्ण सावधानी रखते हुए भी दृष्टिदोष से कुछ अशुद्धियां रह गई हैं। खास अशुद्धियां शुद्धिपत्र में निकाल दी गई हैं। कई जगह रेफ, सकार और मात्रा आदि कम उठे हैं उन्हें पाठक स्वयं शुद्ध कर लेने की कृपा करें। इनके अतिरिक्त कोई शब्द सम्बन्धी या विषयसम्बन्धी अशुद्धि नजर आवे तो पाठक हमें सूचित करने की कृपा करें ताकि आगामी आवृत्ति में उचित संशोधन कर दिया जाय।

निवेदक—
भैरोदान सेठिया

—०००—

श्री भगवतीजी सूत्र के पहले शतक के पहले उद्देशे में ९ बोल का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं–

१–अहो भगवान्! *क्या चलमाणे चलिए, २ उदीरिज्जमाणे उदीरिए, ३ वेइज्जमाणे वेइए, ४ पहीज्जमाणे पहीणे, ५ छिज्जमाणे छिण्णे, ६ भिज्जमाणे भिण्णे, ७ डज्झमाणे दड्ढे, ८ मिज्जमाणे मडे, ९ णिज्जरिज्जमाणे णिज्जिण्णे कहना चाहिए? हाँ गौतम! चलमाणे चलिए यावत् णिज्जरिज्जमाणे णिज्जिण्णे कहना चाहिए।

---

* अहो भगवान्! क्या चलमाणे चलिए–जो चल रहा है उसको चला हुआ कहना चाहिए? इसी तरह २–उदीरिज्जमाणे उदीरिए–जिस कर्म की उदीरणा की जा रही है उसको उदीरणा किया हुआ, ३ वेइज्जमाणे वेइए–जिस कर्म को वेदा जा रहा है उसको वेदा हुआ—भोगा हुआ, ४ पहीज्जमाणे पहीणे–पड़ते हुए को पड़ा हुआ, ५ छिज्जमाणे छिण्णे–छिदते हुए को छिदा हुआ, ६ भिज्जमाणे भिण्णे—भेदन किये जाते हुए को भेदन किया हुआ, अर्थात् तीव्र रस से मंद रस करते हुए को मंद रस किया हुआ, ७ डज्झमाणे दड्ढे—जलते हुए को जला हुआ–नष्ट होते हुए को नष्ट हुआ, ८ मिज्जमाणे मडे—आवीचि मरण (जैसे एक तरंग–लहर के बाद दूसरी तरंग आती है और वह नष्ट होती जाती है, इसी तरह एक के बाद एक एक क्षण आयुष्य का नष्ट होता जाता है, इस नाश को आवीचि मरण कहते हैं) द्वारा प्रतिक्षण

२—अहो भगवान् ! क्या ये ६ पद *एगट्ठा, णाणा घोसा णाणा वंजणा है अथवा णाणट्ठा, णाणा घोसा, णाणा वंजणा है ? हे गौतम ! पहले के ४ पद (चलमाणे चलिए यावत् पहीज्जमाणे पहीणे तक) तो एगट्ठा णाणा घोसा णाणा वंजणा उत्पन्न पक्ष आसरी केवलज्ञान उत्पन्न कराते हैं और आगे के ५ पद (छिज्जमाणे छिण्णे यावत् णिज्जरिज्जमाणे णिज्जिण्णे तक) णाणट्ठा णाणा घोसा णाणा वंजणा विगत पक्ष आसरी सिद्धगति प्राप्त कराते हैं।

‡ सेवं भंते ! सेवं भंते !!

मरते हुए को मरा हुआ, ९ णिज्जरिज्जमाणे णिज्जिण्णे—जिस कर्म की निर्जरा की जा रही है उसको निर्जरा किया हुआ कहना चाहिए ? हाँ गौतम ! चलमाणे चलिए यावत् णिज्जरिज्जमाणे णिज्जिण्णे कहना चाहिए।

* एगट्ठा—एक अर्थ वाला। णाणाघोसा—उदात्त अनुदात्त आदि विविधप्रकार के घोष वाले। णाणा वंजणा—विविधप्रकार के व्यञ्जन यानी अक्षर वाले।

णाणट्ठा—अनेक अर्थ वाले। णाणाघोसा—अनेक घोष वाले। णाणा वंजणा—अनेक व्यञ्जन वाले। इसमें चौभंगी बनती है।

१ समान अर्थ समान व्यञ्जन—जैसे क्षीरं, क्षीरं=दूध।

२ समान अर्थ विविध व्यञ्जन—जैसे—क्षीरं, पयः=दूध।

३ भिन्न अर्थ समान व्यञ्जन—जैसे—आक का दूध, गाय का दूध।

४ भिन्न अर्थ भिन्न व्यञ्जन—जैसे—घट पट=घड़ा कपड़ा आदि।

‡ श्री गौतम स्वामी श्रमण भगवान् महावीर स्वामी से अर्ज करते हैं कि—भंते-हे भगवन् ! सेवं—जैसा आप फरमाते हैं वैसा ही है अर्थात् जिस प्रकार आपने तत्त्व फरमाये हैं वे सत्य हैं, तथ्य हैं, यथार्थ हैं। आपका फरमाना यथार्थ है।

थोकड़ा नम्बर

श्री भगवतीजी सूत्र के पहले शतक के पहले उद्देशे में ४५ बोल का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

४५ द्वार की गाथाएँ—

ठिई उस्सासाहारे किं वाहारेंति सव्वओ वावि ।
कइभागं सव्वाणि व कीस व भुज्जो परिणमंति ॥ १ ॥
परिणय चिया य उवचिया, उदीरिया वेइया य णिज्जिण्णा ।
एक्केक्कम्मि पयम्मि, चउव्विहा पोग्गला होंति ॥ २ ॥
भेइय चिया उवचिया, उदीरिया वेइया य णिज्जिण्णा ।
उव्वट्टण संकामण णिहत्तण णिकायणे तिविह कालो ॥ ३ ॥
बंधोदयवेदोयट्टसंकमे तह णिहत्तण णिकाये ।
अचलियकम्मं तु ए भवे, चलियं जीवाओ णिज्जरए ॥ ४ ॥

१—अहो भगवान् ! नारकी के नेरीयों की स्थिति कितने काल की कही गई है ? हे गौतम ! जघन्य दस हजार वर्ष की, उत्कृष्ट ३३ सागरोपम की ।

२—अहो भगवान् ! नारकी के नेरीये कितने काल से श्वासोच्छ्वास लेते हैं ? हे गौतम ! लोहार की धमण की तरह निरन्तर श्वासोच्छ्वास लेते हैं ।

३—अहो भगवान् ! क्या नारकी के नेरीये आहारट्ठी (आहार करने की इच्छा वाले) होते हैं ? हाँ, गौतम ! आहारट्ठी होते हैं ।

४—अहो भगवान्! नारकी के नेरीयों का आहार कितने प्रकार का है? हे गौतम! दो प्रकार का है–आभोग णिवत्तिए (जानते हुए आहार करना), २ अणाभोगणिवत्तिए (नहीं जानते हुए आहार करना)।

५—अहो भगवान्! नारकी के नेरीये कैसे पुद्गलों का आहार ग्रहण करते हैं? हे गौतम! द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव यावत् २८८ बोलों का आहार लेते हैं। जिस तरह श्री पन्नवणाजी सूत्र के २८ वें आहारपद में कहा गया है उस तरह से कह देना चाहिए। नियमा (निश्चित रूप से) ६ दिशा का लेते हैं। बहुत करके (प्रायः) वे वर्ण में काले और नीले वर्ण का, गन्ध में दुर्गन्ध का, रस में तीखे और कड़वे रस का, स्पर्श में ४ अशुभ स्पर्शों (खरदरा, भारी, शीत, लूच) का आहार लेते हैं। पहले के वर्णादि गुणों को मिटाकर नये वर्णादि गुण प्रकट करते हैं।

६—अहो भगवान्! क्या नारकी के नेरीये सव्वओ आहारेंति (सब आत्म प्रदेशों से आहार लेते हैं)? हे गौतम! सव्वओ आहारेंति यावत् ❀ १२ बोलों से आहार लेते हैं।

❀ १ सव्वओ आहारेंति—सब आत्म प्रदेशों से आहार करते हैं।
२ सव्वओ परिणमेंति—सब आत्मप्रदेशों से परिणमाते हैं।
३ सव्वओ ऊससंति—सब आत्मप्रदेशों से उच्छ्वास लेते हैं।
४ सव्वओ नीससंति—सब आत्मप्रदेशों से श्वास छोड़ते हैं।

७—अहो भगवान् ! नारकी के नेरीये आहार लेने योग्य पुद्गलों का कितना भाग आहार लेते हैं और कितना भाग आस्वादते हैं ? हे गौतम ! असंख्यातवें भाग आहार लेते हैं और अनन्तवें भाग आस्वादते हैं।

८—अहो भगवान् ! नारकी के नेरीये जिन पुद्गलों को आहारपणे परिणमाते हैं, क्या उन सब पुद्गलों का आहार करते हैं अथवा सब पुद्गलों का आहार नहीं करते हैं ? हे गौतम ! परिशेष रहित सब पुद्गलों का (सव्वे अपरिसेसिए) आहार करते हैं।

९—अहो भगवान् ! नारकी के नेरीये जिन पुद्गलों को आहार रूप से ग्रहण करते हैं उन पुद्गलों को किस रूप से परिणमाते हैं ? हे गौतम ! श्रोत्रेन्द्रियपणे यावत् स्पर्शेन्द्रियपणे परिणमाते हैं, अनिष्टपणे अकान्तपणे यावत् दुःखरूप से परिणमाते हैं, सुख रूप से नहीं।

---

५ अभिक्खणं आहारेंति—बारबार आहार करते हैं।
६ अभिक्खणं परिणमेंति—बारबार आहार परिणमाते हैं।
७ अभिक्खणं ऊससंति—बारबार उच्छ्वास लेते हैं।
८ अभिक्खणं नीससंति—बारबार निःश्वास छोड़ते हैं।
९ आहच्च आहारेंति—कदाचित् आहार करते हैं।
१० आहच्च परिणमेंति—कदाचित् आहार परिणमाते हैं।
११ आहच्च ऊससंति—कदाचित् उच्छ्वास लेते हैं।
१२ आहच्च नीससंति—कदाचित् निःश्वास छोड़ते हैं।

१०—अहो भगवान्! नारकी के नेरीयों ने जिन पुद्गलों का पहले आहार किया है क्या वे पुद्गल परिणत हुए हैं?, २ अथवा जिन पुद्गलों का भूतकाल में आहार नहीं किया है किन्तु वर्तमान काल में आहार किया जा रहा है वे पुद्गल परिणत हुए हैं? ३ अथवा जिन पुद्गलों का भूतकाल में आहार नहीं किया है किन्तु भविष्यत् काल में आहार किया जायगा वे पुद्गल परिणत हुए हैं? ४ अथवा जिन पुद्गलों का भूतकाल में आहार नहीं किया है और भविष्यत् काल में भी आहार नहीं किया जायगा वे पुद्गल परिणत हुए हैं? हे गौतम! आहार किये हुए पुद्गल परिणत हुए हैं, २ आहार किया हुआ और आहार किये जाते हुए पुद्गल परिणत हुए हैं और परिणत होवेंगे, ३ आहार नहीं किये हुए पुद्गल और आहार किये जाने वाले पुद्गल परिणत नहीं हुए किन्तु परिणत होवेंगे, ४ आहार नहीं किये हुए पुद्गल और आहार नहीं किये जाने वाले पुद्गल परिणत नहीं हुए और परिणत नहीं होवेंगे।

११ से १५ तक—चिणया, उपचिणया, उदीरिया, वेदया और निर्जरया ये पांच बोल दसवें द्वार के अनुसार कह देने चाहिए।

१६—अहो भगवान्! नारकी के नेरीये कितने प्रकार के पुद्गलों का भेदन करते हैं (भिज्जंति)? हे गौतम! कर्म

द्रव्य वर्गणा की अपेक्षा से दो प्रकार के पुद्गलों का भेदन करते हैं–सूक्ष्म और बादर।

१७—अहो भगवान्! नारकी के नेरीये कितने प्रकार के पुद्गलों का चय (इकट्ठा) करते हैं? हे गौतम! आहार द्रव्य वर्गणा की अपेक्षा दो प्रकार के पुद्गलों का चय करते हैं–सूक्ष्म और बादर।

१८—चय कहा इस तरह ही उपचय कह देना चाहिये।

१६, २०, २१—अहो भगवान्! नारकी के नेरीये कितने प्रकार के पुद्गलों की उदीरणा, वेदन और निर्जरा करते हैं? हे गौतम! कर्म द्रव्य वर्गणा की अपेक्षा से दो प्रकार के पुद्गलों की उदीरणा, वेदन और निर्जरा करते हैं– सूक्ष्म और बादर।

२२–३३–अहो भगवान्! क्या नारकी के नेरीयों ने कर्मों का उद्वर्तन, अपवर्तन, संक्रमण निधत्त और निकाचित किये हैं, करते हैं, करेंगे? हे गौतम! नारकी के नेरीयों ने कर्मों का १ उद्वर्तन अपवर्तन, २ संक्रमण, ३ निधत्त और ४ निकाचित किये हैं, करते हैं, और करेंगे। ४×३=१२ अलावा हुए।

३४—अहो भगवान्! क्या नारकी के नेरीये तैजस कार्मण शरीरपणे पुद्गलों को ग्रहण करते हैं? यदि ग्रहण करते हैं तो क्या भूतकाल के समय से ग्रहण करते हैं? अथवा वर्तमान काल के समय से ग्रहण करते हैं? अथवा आगामी काल

के समय से ग्रहण करते हैं ? नारकी के नेरीये तैजसकार्मण शरीरपणे पुद्गलों को वर्तमान काल के समय से ग्रहण करते हैं किन्तु भूतकाल और आगामी काल के समय से नहीं।

३५, ३६, ३७—अहो भगवान्! नारकी के नेरीयों ने तैजस कार्मण शरीरपणे जिन पुद्गलों का ग्रहण किया है उनकी उदीरणा करते हैं ? अथवा वर्तमान काल में ग्रहण करते हैं उनकी उदीरणा करते हैं ? अथवा आगामी काल में ग्रहण करेंगे उनकी उदीरणा करते हैं ? हे गौतम! नारकी के नेरीयों ने तैजसकार्मण शरीरपणे जिन पुद्गलों को ग्रहण किया है उनकी उदीरणा करते हैं किन्तु वर्तमान काल में जिन पुद्गलों को ग्रहण करते हैं और आगामी काल में ग्रहण करेंगे उनकी उदीरणा नहीं करते हैं।

इसी तरह वेदन करने का और निर्जरा करने का भी कह देना चाहिये।

३८—अहो भगवान्! नारकी के नेरीये चलित (जीव प्रदेशों से चले हुए) कर्म बांधते हैं ? अथवा अचलित (नहीं चले हुए) कर्म बांधते हैं ? हे गौतम! अचलित कर्म बांधते हैं, चलित कर्म नहीं बांधते हैं।

३९-४४—अहो भगवान्! नारकी के नेरीये चलित कर्म की उदीरणा करते हैं ? अथवा अचलित कर्म की उदीरणा करते

हैं ? हे गौतम ! अचलित कर्म की उदीरणा करते हैं, चलित की नहीं। इसी तरह वेदन, उद्वर्तन अपवर्तन, संक्रमण, निधत्त, निकाचित कह देना चाहिए।

४५—अहो भगवान् ! नारकी के नेरीये चलित कर्म की निर्जरा करते हैं ? अथवा अचलित कर्म की निर्जरा करते हैं ? हे गौतम ! चलित कर्म की निर्जरा करते हैं, अचलित की नहीं।

देवता के १३ दण्डक (१० भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिषी और वैमानिक) पर ४५ द्वार कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! १३ दण्डक के देवता की स्थिति कितनी कितनी है ? हे गौतम ! असुरकुमार के देवों की स्थिति जघन्य (थोड़ी से थोड़ी) १०००० वर्ष की, उत्कृष्ट (अधिक से अधिक) १ सागर भाभेरी * । नव निकाय के देवों की स्थिति जघन्य १०००० वर्ष की, उत्कृष्ट देशऊणी (कुछ कम) दो पल्योपम (पल) की, वाणव्यन्तर देवों की स्थिति जघन्य १०००० वर्ष की, उत्कृष्ट १ पल्योपम (पल) की। ज्योतिषी देवों की स्थिति जघन्य पल्योपम का आठवां भाग, उत्कृष्ट १ पल्योपम एक लाख वर्ष की। पहले देवलोक के देवता की स्थिति जघन्य १ पल्योपम की, उत्कृष्ट २ सागर (सागरोपम)

---

* भाभेरी—कुछ अधिक से लेकर दुगुनी से कुछ कम रहे तब तक के परिमाण को भाभेरी कहते हैं।

की। दूसरे देवलोक के देवता की स्थिति जघन्य १ पल झाझेरी, उत्कृष्ट २ सागर झाझेरी। तीसरे देवलोक के देवता की स्थिति जघन्य २ सागर की, उत्कृष्ट ७ सागर की। चौथे देवलोक के देवता की स्थिति जघन्य २ सागर झाझेरी, उत्कृष्ट ७ सागर झाझेरी। पांचवें देवलोक के देवता की स्थिति जघन्य ७ सागर की, उत्कृष्ट १० सागर की। छठे देवलोक के देवता की स्थिति जघन्य १० सागर की, उत्कृष्ट १४ सागर की। सातवें देवलोक के देवता की स्थिति जघन्य १४ सागर की, उत्कृष्ट १७ सागर की। आठवें देवलोक के देवता की स्थिति जघन्य १७ सागर की, उत्कृष्ट १८ सागर की। नववें देवलोक के देवता की स्थिति जघन्य १८ सागर की, उत्कृष्ट १९ सागर की। दसवें देवलोक के देवता की स्थिति जघन्य १९ सागर की, उत्कृष्ट २० सागर की। ग्यारहवें देवलोक के देवता की स्थिति जघन्य २० सागर की, उत्कृष्ट २१ सागर की। बारहवें देवलोक के देवता की स्थिति जघन्य २१ सागर की, उत्कृष्ट २२ सागर।

पहले	ग्रैवेयकके	देवताकी	स्थिति	जघन्य	२२ सागर	उत्कृष्ट	२३	साग
दूसरे	,,	,,	,,	,,	२३ ,,	,,	२४	,,
तीसरे	,,	,,	,,	,,	२४ ,,	,,	२५	,,
चौथे	,,	,,	,,	,,	२५ ,,	,,	२६	,,
पांचवें	,,	,,	,,	,,	२६ ,,	,,	२७	,,
छठे	,,	,,	,,	,,	२७ ,,	,,	२८	,,

सातवें ग्रैवेयक के देवता की स्थिति जघन्य २८ सागर उत्कृष्ट २९ सागर
आठवें „ „ „ „ २९ „ „ ३० „
नवें „ „ „ „ ३० „ „ ३१ „
चार अनुत्तर विमानों की स्थिति जघन्य ३१ सागर की उत्कृष्ट ३३ सागर की। सर्वार्थसिद्ध विमान की स्थिति नोजघन्य नोउत्कृष्ट ३३ सागर की है।

२ अहो भगवान्! १३ दण्डक के देवता कितने काल से श्वासोच्छ्वास लेते हैं? हे गौतम! असुरकुमार के देवता जघन्य ७ थोव (स्तोक)* से, उत्कृष्ट १ पक्ष झाझेरे से। नवनिकाय के देवता और वाणव्यन्तर देवता जघन्य ७ थोव से, उत्कृष्ट ‡प्रत्येक मुहूर्त से। ज्योतिषी देवता जघन्य उत्कृष्ट प्रत्येक मुहूर्त से। पहले देवलोक के देवता जघन्य प्रत्येक मुहूर्त से, उत्कृष्ट २ पक्ष से। दूसरे देवलोक के देवता जघन्य प्रत्येक मुहूर्त झाझेरे से, उत्कृष्ट २ पक्ष झाझेरे से। तीसरे देवलोक के देवता जघन्य २ पक्ष से, उत्कृष्ट ७ पक्ष से। चौथे देवलोक के देवता जघन्य २ पक्ष झाझेरे से, उत्कृष्ट ७ पक्ष झाझेरे से। पांचवें देवलोक के देवता जघन्य ७ पक्ष से, उत्कृष्ट

---

* थोव (स्तोक)=हृष्ट पुष्ट नीरोग मनुष्य जो एक उच्छ्वास और निःश्वास लेता है उसे प्राण कहते हैं। ७ प्राण का एक स्तोक होता है। ७ स्तोक का एक लव होता है। ७७ लव का एक मुहूर्त होता है। ३० मुहूर्त का एक अहोरात्र होता है। १५ अहोरात्र का एक पक्ष होता है।

‡ २ से लेकर ९ तक की संख्या को प्रत्येक (पृथक्त्व) कहते हैं।

१० पक्ष से। छठे देवलोक के देवता जघन्य १० पक्ष से, उत्कृष्ट १४ पक्ष से। सातवें देवलोक के देवता जघन्य १४ पक्ष से, उत्कृष्ट १७ पक्ष से। आठवें देवलोक के देवता जघन्य १७ पक्ष से उत्कृष्ट १८ पक्ष से। नववें देवलोक के देवता जघन्य १८ पक्ष से, उत्कृष्ट १९ पक्ष से। दसवें देवलोक के देवता जघन्य १९ पक्ष से, उत्कृष्ट २० पक्ष से। ग्यारहवें देवलोक के देवता जघन्य २० पक्ष से, उत्कृष्ट २१ पक्ष से। बारहवें देवलोक के देवता जघन्य २१ पक्ष से उत्कृष्ट २२ पक्ष से।

पहले	ग्रैवेयक	के	देवता	जघन्य	२२	पक्ष से	उत्कृष्ट	२३	पक्ष से
दूसरे	,,	,,	,,	,,	२३	,,	,,	२४	,,
तीसरे	,,	,,	,,	,,	२४	,,	,,	२५	,,
चौथे	,,	,,	,,	,,	२५	,,	,,	२६	,,
पांचवें	,,	,,	,,	,,	२६	,,	,,	२७	,,
छठे	,,	,,	,,	,,	२७	,,	,,	२८	,,
सातवें	,,	,,	,,	,,	२८	,,	,,	२९	,,
आठवें	,,	,,	,,	,,	२९	,,	,,	३०	,,
नववें	,,	,,	,,	,,	३०	,,	,,	३१	,,

चार अनुत्तर विमान के देवता जघन्य ३१ पक्ष से, उत्कृष्ट ३३ पक्ष से। सर्वार्थसिद्ध विमान के देवता नो जघन्य नो उत्कृष्ट *३३ पक्ष से श्वासोच्छ्वास लेते हैं।

---

*जितने सागर की स्थिति होती है उतने ही पक्ष से श्वासोच्छ्वास लेते हैं

३—अहो भगवान् ! क्या १३ दण्डक के देवता आहारट्ठी हैं (आहार की इच्छा वाले हैं) ? हाँ गौतम ! आहारट्ठी (आहार की इच्छा वाले) हैं।

४—अहो भगवान् ! १३ दण्डक के देवता कितने प्रकार का आहार लेते हैं ? हे गौतम ! दो प्रकार का—१ आभोगणिव्वत्तिए (आभोगनिवर्तित-जानते हुए आहार करना), २ अणाभोगणिव्वत्तिए (अनाभोगनिवर्तित-नहीं जानते हुए आहार करना)। अहो भगवान् ! १३ दण्डक के देवता कितने समय से आहार लेते हैं ? हे गौतम ! अणाभोगणिव्वत्तिए तो अनुसमय अविरह (विरह रहित निरन्तर) लेते हैं। आभोग णिव्वत्तिए असुरकुमार देवता जघन्य चउत्थ भत्त (चतुर्थ भक्त-एक दिन छोड़कर दूसरे दिन) से लेते हैं और उत्कृष्ट १००० वर्ष भाभेरे से लेते हैं। नवनिकाय के देवता और वाणव्यंतर देवता जघन्य चउत्थ भक्त से, उत्कृष्ट प्रत्येक दिवस (२ दिन से लेकर ९ दिन तक) से लेते हैं। ज्योतिषी देवता जघन्य उत्कृष्ट प्रत्येक दिवस से लेते हैं। पहले देवलोक के देवता जघन्य प्रत्येक दिवस से उत्कृष्ट २००० वर्ष से लेते हैं। इसी तरह सर्वार्थसिद्ध तक के देवता का कह देना चाहिए नवरं (किन्तु इतनी विशेषता है) पल्योपम में प्रत्येक दिवस कहना चाहिए और सागरोपम में १००० वर्ष कहना चाहिए। जिन देवों की स्थिति जितने सागर की होती है वे उतने ही हजार वर्षों से आहार ग्रहण करते हैं।

५—अहो भगवान् ! १३ दण्डक के देवता कैसे पुद्गलों का आहार लेते हैं ? हे गौतम ! द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव यावत् २८८ बोलों का नियमा (निश्चित रूप से) ६ दिशा का आहार लेते हैं। बहुल प्रकार से (प्रायः-अधिकतर) वर्ण में पीला और सफेद, गंध में सुरभिगंध, रस में खट्टा और मीठा, स्पर्श में चार शुभस्पर्श (कोमल, लघु, उष्ण, स्निग्ध) पुद्गलों का आहार लेते हैं। पहले के खराब पुद्गलों को अच्छा बनाकर मनोज्ञ पुद्गलों का आहार लेते हैं।

६—अहो भगवान्! क्या १३ दंडक के देवता सव्वओ आहारेंति (सब आत्मप्रदेशों से आहार लेते हैं)? हे गौतम! सब आत्म-प्रदेशों से आहार लेते हैं यावत् १२ बोलों से आहार लेते हैं।

७—अहो भगवान्! १३ दण्डक के देवता आहार लेने योग्य पुद्गलों का कितना भाग आहार लेते हैं और कितना भाग आस्वादते हैं? हे गौतम! असंख्यातवें भाग आहार लेते हैं और अनन्तवें भाग आस्वादते हैं।

८—अहो भगवान्! १३ दण्डक के देवता जिन पुद्गलों को आहारपणे परिणमाते हैं क्या उन सब पुद्गलों का आहार करते हैं अथवा सब पुद्गलों का आहार नहीं करते हैं? हे गौतम! परिशेष रहित सब पुद्गलों का आहार करते हैं।

६—अहो भगवान्! १३ दण्डक के देवता आहार रूप से ग्रहण किये हुए पुद्गलों को किस रूप से परिणमाते हैं? हे

गौतम ! श्रोत्रेन्द्रियपणे यावत् स्पर्शेन्द्रियपणे परिणमाते हैं, सुख रूप से परिणमाते हैं, दुःखरूप से नहीं परिणमाते हैं।

१० से ४५ तक ये ३६ द्वार नारकी के नेरीयों की तरह कह देने चाहिये।

पांच स्थावर पर ४५ द्वार—

१—अहो भगवान्! पांच स्थावर की स्थिति कितनी है? हे गौतम! पृथ्वीकाय की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त की, उत्कृष्ट २२००० वर्ष की। अप्काय की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त की, उत्कृष्ट ७००० वर्ष की। तेउकाय की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त की, उत्कृष्ट ३ अहोरात्रि की। वायु काय की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त की, उत्कृष्ट ३००० वर्ष की,। वनस्पतिकाय की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त की, उत्कृष्ट १०००० वर्ष की।

२–अहो भगवान्! पांच स्थावर कितने समय से श्वासोच्छ्वास लेते हैं? हे गौतम! *वेमाया (विमात्रा) से श्वासोच्छ्वास लेते हैं।

अहो भगवान्! क्या पांच स्थावर के जीव आहार की इच्छा करते हैं? हाँ, गौतम! आहार की इच्छा करते हैं।

---

* विषम अथवा विविध काल विभाग को वेमाया (विमात्रा) कहते हैं अर्थात् 'यह इतने समय से श्वासोच्छ्वास लेता है' इस प्रकार निश्चय न किया जा सके उसको वेमाया (विमात्रा) कहते हैं।

४—अहो भगवान् ! पांच स्थावर के जीव कितने समय से आहार लेते हैं ? हे गौतम ! अनुसमय अविरह (निरन्तर) अणाभोग णिव्वत्तिए आहार लेते हैं ।

५—अहो भगवान् ! पांच स्थावर के जीव कैसा आहार लेते हैं ? हे गौतम ! द्रव्य क्षेत्र काल भाव यावत् २८८ बोलों का आहार लेते हैं । व्याघात आसरी जघन्य ३ दिशा का, मध्यम ४ दिशा का उत्कृष्ट ५ दिशा का लेते हैं । निर्व्याघात आसरी नियमा ६ दिशा का लेते हैं । वर्ण में काला नीला लाल पीला और सफेद, गंध में सुरभिगंध दुरभिगंध, रस में तीखा, कड़वा, कषैला, खट्टा मीठा । स्पर्श में कर्कश आदि आठों स्पर्श का आहार लेते हैं ।

६—अहो भगवान् ! क्या पांच स्थावर के जीव सब आत्मप्रदेशों से आहार लेते हैं ? हाँ गौतम ! सब आत्मप्रदेशों से यावत् १२ बोलों से आहार लेते हैं ।

७—अहो भगवान् ! पांच स्थावर आहार लेने योग्य पुद्गलों का कितना भाग आहार लेते हैं, कितना भाग स्पर्श करते हैं ? हे गौतम ! असंख्यातवें भाग आहार लेते हैं और अनन्तवें भाग स्पर्श करते हैं ।

८—अहो भगवान् ! पांच स्थावर जिन पुद्गलों को आहारपणे परिणमाते हैं क्या उन सब पुद्गलों का आहार करते हैं या सब पुद्गलों का आहार नहीं करते हैं ? हे गौतम पुद्गलों का आहार करते हैं ।

६—अहो भगवान् ! पांच स्थावर जिन पुद्गलों को आहार रूप से ग्रहण करते हैं। उन पुद्गलों को किस रूप से परिणमाते हैं? हे गौतम! विविध रूप से स्पर्शेन्द्रियपने परिणमाते हैं।

१० से ४५ तक के ३६ द्वार नारकी की तरह कह देने चाहिये।

तीन विकलेन्द्रियों पर ४५ द्वार—

१—अहो भगवान् ! विकलेन्द्रियों की स्थिति कितनी है? हे गौतम! विकलेन्द्रियों की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त की, उत्कृष्ट बेइन्द्रिय की १२ वर्ष की, तेइन्द्रिय की ४६ अहोरात्रि की, चौइन्द्रिय की ६ महीनों की है।

२—अहो भगवान् ! विकलेन्द्रिय कितने समय से श्वासोच्छ्वास लेते हैं। हे गौतम! वेमाया (विमात्रा) से श्वासोच्छ्वास लेते हैं।

३—अहो भगवान् ! क्या विकलेन्द्रिय आहार की इच्छा करते हैं? हाँ, गौतम! आहार की इच्छा करते हैं।

४—विकलेन्द्रिय कितने समय से आहार लेते हैं? हे गौतम! अणाभोगणिव्वत्तिए आहार तो विरह रहित निरन्तर लेते हैं और आभोगणिव्वत्तिए आहार असंख्यात समय के अन्तर्मुहूर्त से लेते हैं।

५—अहो भगवान् ! तीन विकलेन्द्रिय कैसे पुद्गलों का आहार लेते हैं? हे गौतम! द्रव्य क्षेत्र काल भाव यावत् २८८

४–अहो भगवान् ! पांच स्थावर के जीव कितने समय से आहार लेते हैं ? हे गौतम ! अनुसमय अविरह (निरन्तर) अणाभोग णिव्वत्तिए आहार लेते हैं।

५–अहो भगवान् ! पांच स्थावर के जीव कैसा आहार लेते हैं ? हे गौतम ! द्रव्य क्षेत्र काल भाव यावत् २८८ बोलों का आहार लेते हैं। व्याघात आसरी जघन्य ३ दिशा का, मध्यम ४ दिशा का उत्कृष्ट ५ दिशा का लेते हैं। निर्व्याघात आसरी नियमा ६ दिशा का लेते हैं। वर्ण में काला नीला लाल पीला और सफेद, गंध में सुरभिगंध दुरभिगंध, रस में तीखा, कड़वा, कषैला, खट्टा मीठा। स्पर्श में कर्कश आदि आठों स्पर्श का आहार लेते हैं।

६—अहो भगवान् ! क्या पांच स्थावर के जीव सब आत्मप्रदेशों से आहार लेते हैं ? हाँ गौतम ! सब आत्मप्रदेशों से यावत् १२ बोलों से आहार लेते हैं।

७—अहो भगवान् ! पांच स्थावर आहार लेने योग्य पुद्गलों का कितना भाग आहार लेते हैं, कितना भाग स्पर्श करते हैं ? हे गौतम ! असंख्यातवें भाग आहार लेते हैं और अनन्तवें भाग स्पर्श करते हैं।

८—अहो भगवान् ! पांच स्थावर जिन पुद्गलों को आहारपणे परिणमाते हैं क्या उन सब पुद्गलों का आहार करते हैं या सब पुद्गलों का आहार नहीं करते हैं ? हे गौतम ! सब पुद्गलों का आहार करते हैं।

९—अहो भगवान् ! पांच स्थावर जिन पुद्गलों को आहार रूप से ग्रहण करते हैं। उन पुद्गलों को किस रूप से परिणमाते हैं ? हे गौतम ! विविध रूप से स्पर्शेन्द्रियपने परिणमाते हैं ।

१० से ४५ तक के ३६ द्वार नारकी की तरह कह देने चाहिये ।

तीन विकलेन्द्रियों पर ४५ द्वार—

१—अहो भगवान् ! विकलेन्द्रियों की स्थिति कितनी है ? हे गौतम ! विकलेन्द्रियों की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त की, उत्कृष्ट बेइन्द्रिय की १२ वर्ष की, तेइन्द्रिय की ४९ अहोरात्रि की, चौइन्द्रिय की ६ महीनों की है ।

२—अहो भगवान् ! विकलेन्द्रिय कितने समय से श्वासोच्छ्वास लेते हैं। हे गौतम ! वेमाया (विमात्रा) से श्वासोच्छ्वास लेते हैं ।

३—अहो भगवान् ! क्या विकलेन्द्रिय आहार की इच्छा करते हैं ? हाँ, गौतम ! आहार की इच्छा करते हैं ।

४—विकलेन्द्रिय कितने समय से आहार लेते हैं ? हे गौतम ! अणाभोगणिव्वत्तिए आहार तो विरह रहित निरन्तर लेते हैं और आभोगणिव्वत्तिए आहार असंख्यात समय के अन्तर्मुहूर्त से लेते हैं ।

५—अहो भगवान् ! तीन विकलेन्द्रिय कैसे पुद्गलों का आहार लेते हैं ? हे गौतम ! द्रव्य क्षेत्र काल भाव यावत् २८८

बोलों का नियमा ६ दिशा का आहार लेते हैं। वर्णादिक के पहले के गुण मिटा कर नये गुण प्रकट करते हैं।

६—अहो भगवान्! क्या तीन विकलेन्द्रिय सब आत्मप्रदेशों से आहार लेते हैं? हाँ, गौतम! सब आत्मप्रदेशों से यावत् १२ बोलों से आहार लेते हैं।

७—अहो भगवान्! तीन विकलेन्द्रिय आहार लेने योग्य पुद्गलों का कितना भाग आहार लेते हैं, कितना भाग आस्वाद करते हैं? हे गौतम! असंख्यातवें भाग आहार लेते हैं और अनन्तवें भाग आस्वाद करते हैं।

८—अहो भगवान्! तीन विकलेन्द्रिय जिन पुद्गलों को आहारपणे परिणमाते हैं क्या उन सब पुद्गलों का आहार करते हैं या सब पुद्गलों का आहार नहीं करते हैं? हे गौतम! विकलेन्द्रिय का आहार दो प्रकार का है–रोम आहार (रुवों द्वारा समय समय लेवे), कवल आहार (प्रक्षेप आहार–जो मुँह द्वारा खाया जाय)। रोम आहारपणे ग्रहण किये हुवे सब पुद्गल खा लेते हैं। कवल आहार में लेने योग्य पुद्गलों का असंख्यातवां भाग का आहार करते हैं और अनेक हजारों भाग बेइन्द्रिय में स्वाद लिये बिना और स्पर्श किये बिना नष्ट हो जाते हैं। तेइन्द्रिय चौइन्द्रिय में सूंघे बिना, स्वाद लिये बिना, स्पर्श किये बिना नष्ट हो जाते हैं। बेइन्द्रिय में सब से थोड़ा पुद्गल अस्वाद्या उससे अस्पर्श्या पुद्गल अनन्तगुणा। तेइ-

न्द्रिय चौइन्द्रिय में सबसे थोड़ा पुद्गल असंख्या उससे अस्वाद्या पुद्गल अनन्तगुणा उससे अस्पर्श्या पुद्गल अनन्तगुणा।

९—अहो भगवान्! तीन विकलेन्द्रिय आहारपणे ग्रहण किये हुए पुद्गलों को किस रूप में परिणमाते हैं? हे गौतम! बेइन्द्रिय वेमाया से रसनेन्द्रियपणे स्पर्शेन्द्रियपणे परिणमाते हैं। तेइन्द्रिय वेमाया से घ्राणेन्द्रिय रसनेन्द्रिय स्पर्शेन्द्रियपणे परिणमाते हैं। चौइन्द्रिय वेमाया से चक्षुइन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय रसनेन्द्रिय स्पर्शेन्द्रियपणे परिणमाते हैं।

१० से ४५ तक के ३६ द्वार नारकी की तरह कह देने चाहिए।

तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य पर ४५ द्वार—

१—अहो भगवान्! तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय की और मनुष्य की स्थिति कितनी है? हे गौतम! जघन्य अन्तर्मुहूर्त की, उत्कृष्ट ३ पल्योपम की।

२—अहो भगवान्! तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य कितने समय से श्वासोच्छ्वास लेते हैं? हे गौतम! वेमाया (विमात्रा) से श्वासोच्छ्वास लेते हैं।

३—अहो भगवान्! क्या तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य आहार की इच्छा करते हैं? हाँ गौतम! आहार की इच्छा करते हैं।

४—अहो भगवान् ! तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य कितने समय से आहार लेते हैं ? हे गौतम ! तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य अणाभोग णिव्वत्तिय आहार तो विरह रहित निरन्तर लेते हैं । आभोगणिव्वत्तिय आहार जघन्य अन्तर्मुहूर्त से और उत्कृष्ट तिर्यंच पंचेन्द्रिय दो दिन के अन्तर से और मनुष्य तीन दिन के अन्तर से लेते हैं ।

५—अहो भगवान् ! तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य कैसे पुद्गलों का आहार लेते हैं ? हे गौतम ! द्रव्य क्षेत्र काल भाव यावत् २८८ बोलों का नियमा ६ दिशा का आहार लेते हैं पहले के वर्णादिक गुण मिटा कर नये गुण प्रकट करते हैं ।

६—अहो भगवान् ! क्या तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य सब आत्म प्रदेशों से आहार लेते हैं ? हाँ गौतम ! सब आत्म प्रदेशों से यावत् १२ बोलों से आहार लेते हैं ।

७—अहो भगवान् ! तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य आहार लेने योग्य पुद्गलों का कितना भाग आहार लेते हैं, कितना भाग आस्वाद करते हैं ? हे गौतम ! असंख्यातवां भाग आहार लेते हैं और अनन्तवां भाग आस्वाद करते हैं ।

८—अहो भगवान् ! तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य जिन पुद्गलों को आहारपणे परिणमाते हैं, क्या उन सब पुद्गलों का आहार करते हैं या सब पुद्गलों का आहार नहीं करते हैं ? हे गौतम ! अणाभोगणिव्वत्तिय आहार तो विरह रहित निरन्तर लेते हैं ।

आभोगणिव्वत्तिय आहार लेने योग्य पुद्गलों का असंख्यातवां भाग लेते हैं। अनेक हजारों भाग पुद्गल सूंघे बिना स्वाद लिये बिना स्पर्श किये बिना नष्ट हो जाते हैं।

९—अहो भगवान्! तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य आहारपणे ग्रहण किये हुए पुद्गलों को किस रूप से परिणमाते हैं? हे गौतम! वेमाया से श्रोत्रेन्द्रियपणे यावत् स्पर्शेन्द्रियपणे परिणमाते हैं।

१० से ४५ तक के ३६ द्वार नारकी की तरह कह देने चाहिए।

सेवं भंते! सेवं भंते!!

(थोकड़ा नं० ३)

श्री भगवतीजी सूत्र के पहले शतक के पहले उद्देशे में *आत्मारम्भी परारम्भी* का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान्! क्या जीव *आत्मारम्भी है या परारम्भी है या तदुभयारम्भी है या अनारम्भी है? हे गौतम! जीव

---

*आरम्भ का अर्थ है ऐसा सावद्य कार्य करना जिससे किसी जीव को कष्ट पहुँचता हो या उसके प्राणों का घात होता हो अर्थात् आश्रवद्वार में प्रवृत्ति करना आरम्भ कहलाता है।

आत्मारम्भ के दो अर्थ हैं—आश्रव द्वार में आत्मा को प्रवृत्त करना और आत्मा द्वारा स्वयं आरम्भ करना। जो ऐसा करता है वह आत्मा-

परभविक नहीं है, तदुभयभविक नहीं है। इसी तरह तप और संयम भी इहभविक हैं किन्तु परभविक और तदुभयभविक नहीं है।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ५)

श्री भगवतीजी सूत्र के पहले शतक के पहले उद्देशे में 'संवुडा असंवुडा अणगार' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! क्या असंवुडा अणगार (जिसने आश्रवों को नहीं रोका है ऐसा साधु) सिद्ध होता है ? बोध (केवलज्ञान) को प्राप्त करता है, ? मुक्त होता है ? निर्वाण को प्राप्त होता है ? सब दुःखों का अन्त करता है ? हे गौतम ! णो इणट्ठे समट्ठे (यह बात नहीं हो सकती)। अहो भगवान् ! इसका क्या कारण है ? हे गौतम ! आयुष्य कर्म को छोड़ कर बाकी ७ कर्म ढीले (शिथिल) हों तो गाढे (मजबूत) करता है, थोड़े काल की स्थिति हो तो दीर्घ काल की स्थिति करता है, मन्द रस हो तो तीव्र रस करता है, थोड़े प्रदेश वाले कर्मों को बहुत प्रदेश वाले करता है। आयुष्य कर्म कदाचित् बांधता है, कदाचित् नहीं बांधता। असाता वेदनीय कर्म बारबार बांधता है। अनन्त संसार में परिभ्रमण करता है। इस कारण से असंवुडा अनगार सिद्ध नहीं होता यावत् सब दुःखों का अन्त नहीं करता।

२—अहो भगवान् ! क्या संवुडा अनगार (जिसने आश्रवों को रोक दिया है ऐसा साधु) सिद्ध होता है यावत् सब दुःखों का अन्त करता है ? हाँ, गौतम ! संवुडा अनगार सिद्ध होता है यावत् सब दुःखों का अंत करता है । अहो भगवान् ! इसका क्या कारण है ? हे गौतम ! संवुडा अनगार आयुष्य कर्म को छोड़ कर बाकी सात कर्मों को गाढ़े हों तो ढीला करता है, बहुत काल की स्थिति हो तो थोड़े काल की स्थिति करता है, तीव्र रस हो तो मंद रस करता है, बहुत प्रदेश वाले कर्मों को थोड़े प्रदेश वाले करता है । आयुष्य कर्म को नहीं बांधता । असाता वेदनीय कर्म बारबार नहीं बांधता । अनादि अनंत चतुर्गति रूप संसार में परिभ्रमण नहीं करता । इसलिये संवुडा (, संवृत) अनगार सिद्ध होता है यावत् सब दुःखों का अन्त करता है ।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ६)

श्री भगवतीजी सूत्र के पहले शतक के दूसरे उद्देशे में १०० बोल का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं-

१—अहो भगवान् ! क्या एक जीव अपने किये हुए दुःख को भोगता है ? हे गौतम ! कोई जीव भोगता है और कोई जीव नहीं भोगता है । अहो भगवान् ! इसका क्या कारण है ? हे गौतम ! जिस जीव के कर्म उदय में आया है वह भोगता है और जिसके उदय में नहीं आया है वह नहीं भोगता है । इसी

तरह एक जीव आसरी २४ दण्डक कह देने चाहिए। समुच्च
एक जीव का १ अलावा (आलापक-भेद) और २४ दण्ड
के २४ अलावा। ये कुल २५ अलावा हुए।

२—अहो भगवान्! क्या बहुत जीव अपने किये हुए दुःख
को भोगते हैं? हे गौतम! कोई भोगते हैं और कोई नहीं भो
हैं। अहो भगवान्! इसका क्या कारण है? हे गौतम!
जीवों के कर्म उदय में आये हैं वे भोगते हैं और जिनके
में नहीं आये हैं वे नहीं भोगते हैं। इसी तरह बहुत जीव
२४ दण्डक कह देने चाहिए। समुच्चय बहुत जीव आसरी
अलावा और २४ दण्डक के २४ अलावा। ये कुल २
अलावा हुए।

३—अहो भगवान्! क्या एक जीव अपने बांधे हुए आयुष्
कर्म को भोगता है? हे गौतम! कोई भोगता है और कोई न
भोगता है। अहो भगवान्! इसका क्या कारण है? हे गौतम
जिस जीव के आयुष्य कर्म उदय में आया है वह भोगता
और जिस जीव के आयुष्य कर्म उदय में नहीं आया है वह न
भोगता है। इसी तरह एक जीव आसरी २४ दण्डक कह दे
चाहिए। १+२४=२५ अलावा हुए।

४—अहो भगवान्! क्या बहुत जीव अपने बांधे हुए आयु
कर्म को भोगते हैं? हे गौतम! कोई भोगते हैं और कोई न
भोगते हैं। अहो भगवान्! इसका क्या कारण है? हे गौतम

जिन जीवों के आयुष्य कर्म उदय में आया है वे भोगते हैं और जिन जीवों के उदय में नहीं आया है वे नहीं भोगते हैं। इसी तरह बहुत जीव आसरी २४ दण्डक कह देने चाहिये। १+२४=२५ अलावा हुए। २५+२५+२५+२५=१०० कुल १०० अलावा हुए।

सेवं भंते! सेवं भंते!!

(थोकड़ा नं० ७)

श्री भगवतीजी सूत्र के पहले शतक के दूसरे उद्देशे में १२४२ अलावों का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

आहारसमसरीरा, उस्सासे कम्म वण्ण लेस्सासु।
समवेयण समकिरिया, समाउया चेव बोद्धव्वा॥

अर्थ—आहार द्वार, २ समशरीर द्वार, ३ श्वासोच्छ्वास द्वार, ४ कर्म द्वार, ५ वर्ण द्वार, ६ लेश्या द्वार, ७ समवेदना द्वार, ८ समक्रिया द्वार, ९ सम आयुष्य द्वार।

इन नौ द्वारों का विस्तार श्री पन्नवणा सूत्र के १७ वें पद के पहले उद्देशे के अनुसार कह देना चाहिए *।

---

* यह थोकड़ा इस संस्था से प्रकाशित 'श्री पन्नवणा सूत्र के थोकड़ों का दूसरा भाग' नामक पुस्तक के पत्र ५६ से ६१ तक में है।

१२४२ अलावों की गिनती इस प्रकार है—

समुच्चय के	२१६
सलेशी के	२१६
कृष्ण नील कपोत लेश्या के	५६४
तेजो लेश्या के	१६२
पद्मलेश्या के	२७
शुक्ल लेश्या के	२७

कुल १२४२ अलावा हुए।

सेवं भंते! सेवं भंते!!

(थोकड़ा नं० ८)

श्री भगवतीजी सूत्र के पहले शतक के दूसरे उद्देशे में 'संसार संचिट्ठण काल' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

चउ संचिट्ठणा होइ, कालो सुण्णासुण्ण मीसो।
तिरियाणं सुण्णवज्जो, सेसे तिण्णि अप्पाबहू॥

१—अहो भगवान्! *संसार संचिट्ठण काल (संसार संस्थान काल) कितने प्रकार का है? हे गौतम! चार प्रकार

* 'यह जीव अतीत (भूत) काल में किस गति में रहा था' यह बतलाना 'संसार संचिट्ठणकाल' कहलाता है।

का है—१ नारकी संसार संचिट्ठण काल, २ तिर्यंच संसार संचिट्ठण काल, ३ मनुष्यसंसार संचिट्ठणकाल, ४ देवसंसारसंचिट्ठण काल।

२—अहो भगवान्! नारकीसंसारसंचिट्ठणकाल कितने प्रकार का है? हे गौतम! तीन प्रकार का—१ सुण्णकाल (शून्य-काल), २ असुण्ण काल (अशून्य काल), ३ मिश्र काल। इसी तरह मनुष्य और देवता में भी संसार संचिट्ठण काल तीन तीन पाते हैं। तिर्यंच में संसारसंचिट्ठण काल दो पाते हैं—असुण्णकाल और मिश्रकाल।

---

१ एक नारकी का नेरीया नारकी से निकल कर दूसरी गति में उत्पन्न हुआ, वहाँ से फिर पीछा नारकी में उत्पन्न हुआ, वह जितने नेरीयों को सातों नारकियों में छोड़ कर गया था उनमें से एक भी वहाँ न मिले अर्थात् नरकों से निकल कर दूसरी गतियों में चले गये हों उसे सुण्णकाल (शून्यकाल) कहते हैं।

२ एक नारकी का नेरीया नरक से निकल कर दूसरी गति में उत्पन्न हुआ, फिर वहाँ से वापिस नरक में उत्पन्न हुआ, वह जितने नेरीयों को छोड़ कर गया था उतने सब वहाँ मिलें अर्थात् वहाँ से एक भी मरा न हो और एक भी नया आकर उत्पन्न न हुआ हो उसे असुण्णकाल (अशून्यकाल) कहते हैं।

३ एक नारकी का नेरीया नरक से निकल कर दूसरी गति में उत्पन्न हुआ, वहाँ से वापिस पीछा नरक में उत्पन्न हुआ, वह जितने नेरीयों को छोड़कर गया था उनमें से कुछ निकल कर दूसरी गति में चले गये हों और कुछ नये उत्पन्न हो गये हों, यहाँ तक कि पहले नेरीयों में से एक भी नेरीया वहाँ मिले उसे मिश्र काल कहते हैं।

३—अहो भगवान् ! नारकी में कौनसा काल थोड़ा (अल्प) है और कौनसा काल बहुत है ? हे गौतम ! सब से थोड़ा असुण्ण काल, उससे मिश्रकाल अनन्तगुणा, उससे सुण्णकाल अनन्तगुणा । इसी तरह मनुष्य देवता की अल्पाबोध (अल्प बहुत्व) कह देनी चाहिए । तिर्यञ्च में सबसे थोड़ा असुण्णकाल, उससे मिश्रकाल अनन्तगुणा है ।

४—अहो भगवान् ! चार प्रकार के संसारसंचिट्ठणकाल में कौन सा थोड़ा और कौन सा बहुत है ? हे गौतम ! सब से थोड़ा मनुष्यसंसारसंचिट्ठण काल, उस से नारकी संसार संचिट्ठणकाल, असंख्यातगुणा, उससे देवता संसारसंचिट्ठण काल असंख्यातगुणा, उससे तिर्यंच संसार संचिट्ठण काल अनन्तगुणा है ।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ९)

श्री भगवतीजी सूत्र के पहले शतक के दूसरे उद्देशे में 'असंजति (असंयत) भव्य द्रव्य देव' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! *असंजति (असंयत) भव्य द्रव्य

*ऊपर से साधु की क्रिया करने वाले किन्तु भाव मे चारित्र के परिणामों से रहित मिथ्यादृष्टि जीव असंजति (असंयत) भव्य द्रव्यदेव कहे गये हैं ।

देव मर कर कहाँ उत्पन्न होता है ? हे गौतम ! जघन्य भवनपति में, उत्कृष्ट ऊपर के (नववें) ग्रैवेयक में उत्पन्न होता है।

२—अहो भगवान् ! अविराधक साधुजी मर कर कहाँ उत्पन्न होते हैं ? हे गौतम ! जघन्य पहले देवलोक में, उत्कृष्ट सर्वार्थसिद्ध में उत्पन्न होते हैं।

३—अहो भगवान् ! विराधक साधुजी मर कर कहाँ उत्पन्न होते हैं ? हे गौतम ! जघन्य भवनपति में, उत्कृष्ट पहले देवलोक में उत्पन्न होते हैं।

४—अहो भगवान् ! अविराधक श्रावक मर कर कहाँ उत्पन्न होते हैं ? हे गौतम ! जघन्य पहले देवलोक में, उत्कृष्ट बारहवें देवलोक में उत्पन्न होते हैं।

५—अहो भगवान् ! विराधक श्रावक मर कर कहाँ उत्पन्न होते हैं ? हे गौतम ! जघन्य भवनपति में, उत्कृष्ट ज्योतिषी में उत्पन्न होते हैं।

६—अहो भगवान् ! असन्नी (बिना मन वाले जीव अकाम निर्जरा करने वाले) तिर्यंच मर कर कहाँ उत्पन्न होते हैं ? हे गौतम ! जघन्य भवनपति में, उत्कृष्ट वाणव्यन्तर में उत्पन्न होते हैं।

७—अहो भगवान् ! कन्द मूल भक्षण करने वाले तापस मर कर कहाँ उत्पन्न होते हैं ? हे गौतम ! जघन्य भवनपति में, उत्कृष्ट ज्योतिषी में उत्पन्न होते हैं।

८—अहो भगवान् ! कन्दर्पिया-कान्दर्पिक (हँसी मजाक करने वाले) साधु मर कर कहाँ उत्पन्न होते हैं ? हे गौतम ! जघन्य भवनपति में, उत्कृष्ट पहले देवलोक में उत्पन्न होते हैं।

९—अहो भगवान् ! चरक, परिव्राजक, अम्बड़जी के मत के संन्यासी मर कर कहाँ उत्पन्न होते हैं ? हे गौतम ! जघन्य भवनपति में, उत्कृष्ट पांचवें देवलोक में उत्पन्न होते हैं।

१०—किल्विषी भावना वाले तथा आचार्य उपाध्याय आदि के अवर्णवाद बोलने वाले साधु मर कर कहाँ उत्पन्न होते हैं ? हे गौतम ! जघन्य भवनपति में, उत्कृष्ट छठे देवलोक में उत्पन्न होते हैं।

११—अहो भगवान् ! देशविरति सम्यग्दृष्टि सन्नी तिर्यञ्च मर कर कहाँ उत्पन्न होते हैं ? हे गौतम ! जघन्य भवनपति में, उत्कृष्ट आठवें देवलोक में उत्पन्न होते हैं।

१२—अहो भगवान् ! आजीविय–आजीविक (गोशालक) मत के मानने वाले साधु मर कर कहाँ उत्पन्न होते हैं ? हे गौतम ! जघन्य भवनपति में, उत्कृष्ट बारहवें देवलोक में उत्पन्न होते हैं।

१३—अहो भगवान् ! आभियोगिक (मंत्र जंत्रादि करने वाले साधु) मर कर कहाँ उत्पन्न होते हैं ? हे गौतम ! जघन्य भवनपति में, उत्कृष्ट बारहवें देवलोक में उत्पन्न होते हैं।

१४—अहो भगवान् ! सलिंगी दंसण वावण्णगा (साधु के लिंग को धारण करने वाले समकित से भ्रष्ट निन्हव आदि) मर कर कहाँ उत्पन्न होते हैं ? हे गौतम ! जघन्य भवनपति में, उत्कृष्ट ऊपर के (नववें) ग्रैवेयक में उत्पन्न होते हैं।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० १०)

श्री भगवतीजी सूत्र के पहले शतक के दूसरे उद्देशे में '*असन्नी-असंज्ञी आयुष्य' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! असंज्ञी आयुष्य कितने प्रकार का है ? हे गौतम ! चार प्रकार का है—नारकी असंज्ञी आयुष्य, तिर्यंच असंज्ञी आयुष्य, मनुष्य असंज्ञी आयुष्य, देव असंज्ञी आयुष्य।

२—अहो भगवान् ! असंज्ञी आयुष्य की स्थिति कितनी है ? हे गौतम ! नारकी देवता के असंज्ञी आयुष्य की स्थिति जघन्य १०००० वर्ष की, उत्कृष्ट पल्योपम के असंख्यातवें भाग

*असन्नी-असंज्ञी आयुष्य-जो जीव असंज्ञी अवस्था में अगले भव का आयुष्य बांधे उसको यहां पर 'असन्नी-असंज्ञी आयुष्य' कहा गया है।

की। मनुष्य, तिर्यंच के असंज्ञी आयुष्य की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त की, उत्कृष्ट पल्योपम के असंख्यातवें भाग की है।

३—अहो भगवान्! इस चार प्रकार के असंज्ञी आयुष्य में कौन थोड़ी और कौन बहुत है? हे गौतम! सब से थोड़ी देवता असंज्ञी आयुष्य, २ उससे मनुष्य असंज्ञी आयुष्य असंख्यात गुणा, ३ उससे तिर्यंच असंज्ञी आयुष्य असंख्यात गुणा, ४ उससे नारकी असंज्ञी आयुष्य असंख्यातगुणा।

सेवं भंते! सेवं भंते!!

(थोकड़ा नं० ११)

श्री भगवतीजी सूत्र के पहले शतक के तीसरे उद्देशे में 'कंखा मोहनीय' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

कड चिया उवचिया, उदीरिया वेइया य णिज्जिण्णा।
आदितिए चउभेया, तियभेया पच्छिमा तिण्णि॥ १॥

१—अहो भगवान्! क्या जीव *कंखामोहनीय (कांक्षा-मोहनीय-मिथ्यात्व मोहनीय) कर्म करता है? हाँ, गौतम! करता है।

---

* मोहनीय कर्म के दो भेद हैं—दर्शन मोहनीय और चारित्र मोहनीय। यहाँ दर्शन मोहनीय की अपेक्षा से कंखा मोहनीय कहा है।

२—अहो भगवान्! क्या ※देश (अंश) से देश करता है (जीव का एक अंश, कंखामोहनीय कर्म के एक अंश को करता है)? अथवा देश से सर्व करता है? अथवा सर्व से देश करता है? अथवा सर्व से सर्व करता है? हे गौतम! देश से देश नहीं करता, देश से सर्व नहीं करता, सर्व से देश नहीं करता, किन्तु सर्व से सर्व करता है। इसी तरह नारकी आदि २४ ही दण्डक कह देने चाहिए। समुच्चय जीव और २४ दण्डक, ये २५ अलावा हुए।

तीन काल आसरी—जीव ने कंखामोहनीय कर्म किया था, करता है और करेगा, ये ७५ अलावा हुए। २५ (समुच्चय के) +७५ (तीन काल आसरी) ये १०० अलावा हुए।

इसी तरह ‡चय के १०० अलावा होते हैं (समुच्चय के

※ यहाँ चार भांगे हैं—

१ देसेणं देसे
२ देसेणं सव्वे
३ सव्वेणं देसे
४ सव्वेणं सव्वे

जीव के प्रदेश जितने आकाश प्रदेश ओघाये हैं (आकाश प्रदेश पर रहे हुए हैं), वहाँ पर रहे हुए कर्म वर्गणा के पुद्गल जो एक समय में लेने योग्य होते हैं, उन सब को जीव लेता है इसीलिए 'सव्वेणं सव्वे' भांगा बनता है। शेष तीन भांगे नहीं बनते।

‡ चय-कर्मों के प्रदेश और अनुभाग का एक बार बढ़ना 'चय' कहलाता है और बारम्बार बढ़ना 'उपचय' कहलाता है।

२५ और तीन काल आसरी चय किया, चय करता है, च
करेगा, ये ७५=१०० अलावा हुए)। इसी तरह उपचय के भ
१०० अलावा होते हैं। ‡उदीरणा, वेदना, निर्जरा इन ती
पदों में समुच्चय के नहीं कहना, तीन काल आसरी कहना—
उदीरणा की थी उदीरणा करता है, उदीरणा करेगा। वेदा वेदन
किया था वेदता है (वेदन करता है) वेदेगा (वेदन करेगा।
निर्जरा की थी, निर्जरा करता है, निर्जरा करेगा । इस प्रक
उदीरणा, वेदना, और निर्जरा इन तीन पदों के २२५ अला
हुए। सब मिला कर ५२५ अलावा हुए।

१ उदय में आये हुए कर्मों को वेदना, २ उदयमें नहीं आ
हुए कर्मों को उपशमाना, ३ उदय में आने वाले कर्मों की उदीर
करना, ४ उदय में आये हुए कर्मों को भोगना, ५ भोगे हुए कर्मों व
निर्जरा करना, इन सब में १ उट्ठाण (उत्थान), २ कर्म, ३ ब

---

‡ उदीरणा—उदय में नहीं आये हुए कर्मों को करणविशेष से उदय
लाना उदीरणा कहलाती है।

वेदना—कर्मों का अनुभव करना वेदना कहलाता है।

निर्जरा—आत्मप्रदेशों से कर्मों का पृथक् हो जाना निर्जरा क
लाती है।

कड (किया), चय, उपचय इन तीन में १००-१०० अलावा हो
हैं, इसका कारण यह है कि इन तीनों का काल लम्बा है। उदीरणा
वेदना, निर्जरा इन तीनों का काल थोड़ा होने से समुच्चय के २५ अला
नहीं होते हैं। सिर्फ ७५—७५ अलावा ही होते हैं।

४ वीर्य, ५ पुरुषकार पराक्रम इन ५ शक्ति का प्रयोग करना =५×५=२५ द्वार हुए। ये २५ द्वार समुच्चय जीव और २४ दण्डक पर कहना=२५×२५=६२५ अलावा हुए।

समुच्चय जीव और पंचेन्द्रिय के १६ दण्डक (नारकी का १, भवनपति के १०, वाण व्यन्तर का १, ज्योतिषी का १, वैमानिक का १, तिर्यञ्च पंचेन्द्रिय का १ और मनुष्य का १ ये १६) ये १६ दण्डक के जीव और समुच्चय जीव ये १७ मिथ्यात्वी की बात सुन कर नाना कारण से १ संका (शंका), २ कंखा, (कांक्षा), ३ वितिगिच्छा (विचिकित्सा, ४ मति भेद और ५ कलुष भाव इन पांच बोलों से कंखा मोहनीय (मिथ्यात्व मोहनीय) कर्म वेदते हैं =१७×५=८५ अलावा हुए।

५ स्थावर, ३ विकलेन्द्रिय ये आठ दण्डक के जीव शंका आदि ५ बोलों से कंखा मोहनीय कर्म अजानते हुए वेदते हैं =८×५=४० अलावा हुए।

❀ (१) ज्ञान, (२) दर्शन, (३) चारित्र, (४) लिंग, (५) प्रवचन, (६) प्रावचनिक (बहुश्रुत), ७ कल्प (जिनकल्प स्थविर कल्प), ८ मार्ग (परम्परा की समाचारी–कायोत्सर्ग करना आदि) ९ मत (आचार्यों का अभिप्राय) १० भंग (भांगा) ११ नय (नैगम आदि सात नय), १२

❀ इन तेरह बोलों का अन्तर विस्तार पूर्वक इससे आगे के थोकड़े नं० १२ में दिया गया है।

नियम (प्रतिज्ञा, अभिग्रह), १३ प्रमाण (प्रत्यक्ष आ
प्रमाण)। इन तेरह बोलों में परस्पर अन्तर जान कर श्रम
निर्ग्रन्थ कंखा मोहनीय कर्म वेदता है। जो जीव भगवान्
वचनों में संका कंखा नहीं करते हैं वे आज्ञाके आराध
होते हैं।

१ अज्ञान, २ संशय, ३ मिथ्याज्ञान, ४ राग, ५ द्वेष,
मतिभ्रम, ७ धर्म में अनादर, ८ अशुभ योग, इन आठ प्रक
के प्रमाद से और योग के निमित्त से जीव कंखा मोहनीय क
बान्धता है।

प्रमाद योग से उत्पन्न होता है, योग वीर्य से, वीर्य शर
से और शरीर जीव से उत्पन्न होता है। इसलिए उत्थान, क
बल, वीर्य पुरुषकार पराक्रम हैं।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० १२)

श्री भगवतीजी सूत्र के पहले शतक के तीस
उद्देशे में 'श्रमण निर्ग्रन्थ १३ कारणों से कंख
मोहनीय कर्म वेदते हैं' जिसका थोकड़ा चलता है स
कहते हैं—

अहो भगवान् ! क्या श्रमण निर्ग्रन्थ कंखा मोहनीय क
वेदते हैं ? हाँ गौतम ! वेदते हैं। अहो भगवान् ! इसका क्य
कारण है ? हे गौतम ! १३ कारण हैं—

१ नाणंतरेहिं (ज्ञानान्तर से)—एक ज्ञान से दूसरे ज्ञान के विषय में शंका उत्पन्न होती है, जैसे—अवधिज्ञानी १४ राजुलोक के परमाणु आदि सब रूपी द्रव्यों को जानता है और मनःपर्ययज्ञानी अढाई द्वीप में संज्ञी जीव के मनकी बात को जानता है। अवधिज्ञान तीसरा ज्ञान है वह ज्यादा जानता है और मनःपर्यय ज्ञान चौथा ज्ञान है वह कम क्यों जानता है ? ऐसी शंका उत्पन्न होती है।

इसका उत्तर—अवधिज्ञान के साथ में अवधि दर्शन की सहायता है, इसलिये ज्यादा जानता देखता है। मनःपर्यय ज्ञान के साथ में दर्शन की सहायता नहीं है, इसलिये कम जानता देखता है।

२ दंसणंतरेहिं (दर्शनान्तर से)—सामान्य ज्ञान को दर्शन कहते हैं। चक्षुदर्शन और अचक्षुदर्शन अलग क्यों कहा गया ?

इसका उत्तर—अचक्षु दर्शन सामान्य रूप से देखता है, चक्षुदर्शन विशेष रूप से देखता है।

अथवा—समकित के विषय में शंका उत्पन्न होती है, जैसे—उपशम समकित और क्षायोपशमिक समकित अलग अलग क्यों कही गई ? उत्तर—क्षायोपशमिक समकित में विपाक का उपशम है और मिथ्यात्व के प्रदेशों का उदय है। उपशम समकित में मिथ्यात्व के प्रदेशों का उदय नहीं है।

३ चरित्तंतरेहिं (चारित्रान्तर से)— चारित्र के विषय में शंका उत्पन्न होती है, जैसे— सामायिक चारित्र में सर्व सावद्य का त्याग हो गया फिर छेदोपस्थापनीय चारित्र देने की क्या आवश्यकता है ? उत्तर—प्रथम तीर्थङ्कर के साधु ऋजुजड़ (ऊपर से जड़ यानी मन्द बुद्धि होते हैं किन्तु भीतर से उनका हृदय सरल होता है) होते हैं और अन्तिम तीर्थङ्कर के साधु वक्रजड़ (ऊपर से जड़ यानी मन्द बुद्धि और भीतर हृदय में छल कपट वाले) होते हैं। इसलिये प्रथम और अन्तिम तीर्थङ्कर के साधुओं को समझाने के लिये छेदोपस्थापनीय चारित्र दिया जाता है। बीच के २२ तीर्थङ्करों के साधु ऋजुप्राज्ञ (प्राज्ञ यानी ऊपर से तीक्ष्ण बुद्धि वाले और ऋजु यानी भीतर से सरल हृदय वाले) होते हैं। इसलिये उनके लिए सामायिक चारित्र ही कहा गया है।

४ लिंगंतरेहिं (लिङ्गान्तर से)—प्रथम और अन्तिम तीर्थङ्कर के साधु सिर्फ सफेद वस्त्र रखते हैं और बीच के २२ तीर्थङ्करों के साधु पांच ही वर्ण के वस्त्र रखते हैं ? यह भेद क्यों ? उत्तर— प्रथम तीर्थङ्कर के साधु ऋजुजड़ और अन्तिम तीर्थङ्कर के साधु वक्रजड़ होते हैं इसलिए उनके लिए सिर्फ सफेद वस्त्र रखने की ही आज्ञा है। बीच के २२ तीर्थङ्करों के साधु ऋजुप्राज्ञ होते हैं, इसलिए वे पांचों रंग के वस्त्र रख सकते हैं।

५ पवयणंतरेहिं (प्रवचनान्तर से)—एक तीर्थङ्कर के प्रवचन से दूसरे तीर्थङ्कर के प्रवचन में अन्तर पड़ने से शंका उत्पन्न होती है, जैसे—प्रथम और अन्तिम तीर्थङ्कर के समय में पांच महाव्रत और छठा रात्रिभोजनविरमणव्रत बतलाया गया है और बीच के २२ तीर्थंकरों के समय में चार महाव्रत और पांचमा रात्रिभोजनविरमणव्रत बतलाया गया है ऐसा क्यों ? ऐसी शंका उत्पन्न होवे ,उसका उत्तर—तीसरे प्रश्न के उत्तर के समान है। चौथे महाव्रत का पांचवें महाव्रत में समावेश किया गया है क्योंकि स्त्री परिग्रह रूप ही है। इस कारण से बीच के २२ तीर्थंकरों के समय चार महाव्रत कहे गये हैं। अलग अलग विचार करने से पांच महाव्रत हो जाते हैं।

६ पावयणंतरेहिं (प्रावचनिकान्तर से) —प्रावचनिक अर्थात् बहुश्रुत पुरुष। एक प्रावचनिक इस तरह की प्रवृत्ति करता है और दूसरा प्रावचनिक दूसरी तरह की प्रवृत्ति करता है। इन दोनों में कौन सी ठीक है ?, ऐसी शंका उत्पन्न हो, उसका उत्तर यह है कि चारित्रमोहनीय का क्षयोपशम भिन्न भिन्न होने से तथा उत्सर्ग अपवाद मार्ग होने से प्रवृत्ति में अन्तर पड़ जाता है किन्तु वही प्रवृत्ति प्रमाण रूप है जो आगम से अविरुद्ध है।

७ कप्पंतरेहिं—(कल्पान्तर से)—एक कल्प से दूसरे कल्प में अन्तर होने से शंका उत्पन्न होवे–जैसे कि—जिन-

कल्पी साधु नग्न रहते हैं और महाकष्टकारी क्रिया करते हैं स्थविरकल्पी वस्त्र पात्र रखते हैं और अल्प कष्ट वाली क्रिया करते हैं तो यह अल्प कष्टकारी क्रिया कर्म क्षय में कैसे कारण हो सकती है ? उत्तर—जिनकल्प और स्थविरकल्प दोनों ही भगवान् की आज्ञा में हैं और दोनों कर्म क्षय के कारण हैं।

८ मग्गंतरेहिं (मार्गान्तर से)—कोई आचार्य दो नमोत्थुणं देते हैं और कोई आचार्य तीन नमोत्थुणं देते हैं। कोई आचार्य अधिक कायोत्सर्ग करते हैं और कोई कम करते हैं। इनमें कौनसा मार्ग ठीक है ? ऐसी शंका होवे उसका उत्तर—गीतार्थ जिस समाचारी में प्रवृत्ति करते हैं यदि वह निषिद्ध नहीं है और निष्पाप है तो प्रमाण युक्त है।

९ मयंतरेहिं (मतान्तर से)—एक दूसरे आचार्य के मत में अन्तर पड़ने से शंका उत्पन्न होती है, जैसे कि—आचार्य सिद्धसेन दिवाकर केवलज्ञान और केवलदर्शन को एक साथ मानते हैं और आचार्य जिनभद्रगणि क्षमाश्रमण केवलज्ञान और केवलदर्शन को एक साथ नहीं मानते किन्तु भिन्न २ समय में मानते हैं। अब शंका होती है कि इन दोनों मतों में कौन सा मत सच्चा है ? उत्तर—जो मत आगम के अनुसार है वही सत्य है। पन्नवणाजी के पद ३० में इस तरह कहा है—जिस समय जानता है उस समय नहीं देखता जिस समय देखता है उस समय नहीं जानता।

१० भगंतरेहिं (भङ्गान्तर से)—हिंसा सम्बन्धी ४ भंगे होते हैं—

१ द्रव्य से हिंसा, भाव से नहीं।
२ भाव से हिंसा, द्रव्य से नहीं।
३ द्रव्य से भी नहीं, भाव से भी नहीं।
४ द्रव्य से भी हिंसा, भाव से भी हिंसा।

इन भागों में से कोई आचार्य द्विभंगी, कोई त्रिभंगी और कोई चौभंगी मानते हैं। इनमें शंका उत्पन्न होवे उसका उत्तर—ईर्यासमिति से यतनापूर्वक चलते हुए साधु के पैर नीचे कोई कीड़ी आदि जीव मर जाय तो द्रव्य हिंसा है। बिना उपयोग से चले तो भाव हिंसा है।

११—णयंतरेहिं (नयान्तर से)--एक ही वस्तु में नित्य और अनित्य ये दो विरोधी धर्म कैसे रह सकते हैं ? इसका उत्तर–द्रव्यार्थिक नय की अपेक्षा से वस्तु नित्य है और पर्यायार्थिक नय की अपेक्षा से वस्तु अनित्य है। भिन्न-भिन्न अपेक्षा से एक ही वस्तु में भिन्न-भिन्न धर्म रह सकते हैं। जैसे—एक ही पुरुष अपने पिता की अपेक्षा से पुत्र है और अपने पुत्र की अपेक्षा से वह पिता है।

१२—णियमंतरेहिं (नियमान्तर से)—जैसे कोई साधु अभिग्रह करता है, नवकारसी पौरिसी आदि पच्चक्खाण करता है। इसमें शंका उत्पन्न होवे कि साधु के तो सर्व सावद्य का

त्याग है फिर उसे अभिग्रह, नवकारसी पोरिसी आदि करने की क्या आवश्यकता है ? इसका उत्तर—साधु विशेष प्रमाद को टालने के लिये अभिग्रह आदि करते हैं।

१३—पमाणंतरेहिं (प्रमाणान्तर से)—शास्त्र में कहा है कि सूर्य समभूमि भाग से आठ सौ योजन ऊपर चलता है। हमारे चक्षु प्रत्यक्ष से तो प्रतिदिन सूर्य भूमि से निकलता हुआ दिखाई देता है। इनमें कौन सच्चा है ? इसका उत्तर—हमारे चक्षु प्रत्यक्ष से सूर्य पृथ्वी से निकलता हुआ दिखाई देता है यह चक्षु प्रत्यक्ष सत्य नहीं है क्योंकि सूर्य पृथ्वी से बहुत दूर है इसलिये हमारा चक्षुभ्रम है। शास्त्र में जो कहा है वह सत्य है।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० १३)

श्री भगवतीजी सूत्र के पहले शतक के तीसरे उद्देशे में 'अस्ति नास्ति' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान ! क्या * अस्ति पदार्थ अस्तिपणे परिणमता है और नास्ति पदार्थ नास्तिपणे परिणमता है ? हाँ,

* जो पदार्थ जिस रूप से है उसका उसी रूप में रहना 'अस्ति-पना' है और पर रूप से न रहना नास्तिपना है। प्रत्येक वस्तु अपने अपने रूप से सत् (विद्यमान) है और पर रूप से असत् (अविद्यमान) है। जैसे मनुष्य मनुष्य रूप से सर्वकाल में सत् है और मनुष्य अश्व (घोड़े) रूप से सर्वकाल में असत् है। जैसे घट (घड़ा) घट से सत् है किन्तु घट पट (कपड़ा) रूप से असत् है।

गौतम ! अस्ति पदार्थ अस्तिपणे परिणमता है और नास्ति पदार्थ नास्तिपणे परिणमता है ।

२—अहो भगवान ! जो अस्ति पदार्थ अस्तिपणे परिणमता है और नास्ति पदार्थ नास्तिपणे परिणमता है तो क्या प्रयोगसा (प्रयोग से) परिणमता है या विश्रसा (स्वाभाविक रूप से) परिणमता है ? हे गौतम ! प्रयोगसा भी परिणमता है और विश्रसा भी परिणमता है । इसी तरह गमणिज्ज (गमनीय) के भी दो अलावा (आलापक) कह देने चाहिए ।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० १४)

सूत्र श्री भगवतीजी के पहले शतक के चौथे उद्देशे में 'मोहनीय कर्म का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

कइ पयडी कह बंधइ, कइहिं च ठाणेहिं बंधइ पयडी ।
कइ वेएइ पयडी, अणुभागो कइविहो कस्स ॥

१—अहो भगवान् ! कर्म कितने हैं ? हे गौतम ! कर्म ८ हैं—ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, वेदनीय, मोहनीय, आयुष्य, नाम, गोत्र, अन्तराय * ।

---

* आठ कर्मों का विस्तृत वर्णन श्री पन्नवणासूत्र के थोकड़ा भाग तीसरा तेईसवें कर्म प्रकृति पद के पहले उद्देशा पत्र ३३ से ४२ तक में कहा गया है ।

२—अहो भगवान् ! क्या जीव मोहनीय कर्म के उदय से उवट्ठाये (उपस्थान–चार गति में परिभ्रमण करने की क्रिया) करता है ? हाँ गौतम ! करता है।

३—अहो भगवान् ! वीर्य से उपस्थान (चार गति में परिभ्रमण करने की क्रिया) करता है या अवीर्य से करता है ? हे गौतम ! वीर्य से करता है, अवीर्य से नहीं करता।

४—अहो भगवान् ! वीर्य के कितने भेद हैं ? हे गौतम ! वीर्य के तीन भेद हैं—बाल वीर्य, पण्डित वीर्य, बाल पण्डित वीर्य।

५—अहो भगवान् ! किस वीर्य से उपस्थान करता है ? हे गौतम ! बालवीर्य से उपस्थान करता है, पण्डितवीर्य से और बाल पण्डित वीर्य से उपस्थान नहीं करता है।

६—अहो भगवान् ! क्या मिथ्यात्व मोहनीय कर्म के उदय से जीव अपक्रमण करता है (ऊँचे गुणस्थान से नीचे गुणस्थान में आता है) ? हाँ, गौतम ! करता है।

७—अहो भगवान् ! कौनसे वीर्य से अपक्रमण करता है ? हे गौतम ! बालवीर्य से अपक्रमण करता है, * कदाचित् बालपण्डित वीर्य से भी अपक्रमण करता है किन्तु पण्डित वीर्य से अपक्रमण नहीं करता क्योंकि पण्डित वीर्य से जीव नीचे गुण-

---

* वाचनान्तर में कहा है कि—बालवीर्य से अपक्रमण करता है, पण्डितवीर्य से और बालपण्डितवीर्य से अपक्रमण नहीं करता है।

स्थान से ऊंचे गुणस्थान जाता है किन्तु ऊँचे गुणस्थान से नीचे गुणस्थान नहीं आता ❀।

जिस तरह मोहनीय कर्म के उदय से दो आलापक (उपस्थान और अपक्रमण) कहे हैं, उसी तरह उपशान्त मोहनीय कर्म के भी दो आलापक कह देने चाहिए, किन्तु उपशान्त

❀ (१) जब दर्शन मोहनीय (मिथ्यात्व मोहनीय) कर्म का उदय होता है तब जीव बाल वीर्य द्वारा उवट्ठाण करता है अर्थात् बालवीर्य के प्रयोग द्वारा जीव संसार परिभ्रमण की क्रिया करता है। आशय यह है कि मिथ्यादृष्टि जीव बाल वीर्य द्वारा मिथ्यात्व को ही पुष्ट करता है। पण्डित वीर्य द्वारा और बालपण्डित वीर्य द्वारा जीव उवट्ठाण (परलोक की क्रिया-संसार परिभ्रमण की क्रिया) नहीं करता है।

(२) जब जीव के मिथ्यात्व मोहनीय का उदय होता है तब बाल वीर्य द्वारा अपक्रमण करता है अर्थात् ऊपर के उत्तम गुणस्थानों से गिर कर नीचे के गुणस्थानों में आता है अर्थात् सर्व विरति संयम से, देशविरति से और समकित से गिर कर मिथ्यात्व में आता है।

प्रश्न—उदय की अपेक्षा—उवट्ठाएज्जा और अवक्कमेज्जा में क्या अन्तर है?

उत्तर—जो जीव मिथ्यात्व में रहे हुए हैं और मिथ्यात्व को ही पुष्ट करते हैं अर्थात् चार गति परिभ्रमण की क्रिया करते हैं। यह उदय की अपेक्षा उवट्ठाएज्जा है।

जो जीव उत्तम गुणस्थान (चौथा, पांचवां छठा] से गिर कर मिथ्यात्व में आकर चार गति परिभ्रमण की क्रिया करते हैं। यह उदय की अपेक्षा अवक्कमेज्जा है।

मोहनीय कर्म में पण्डित वीर्य से उपस्थान करता है और बाल
पण्डित वीर्य से अपक्रमण करता है ❀।

उपशम भाव में संयम की रुचि होती है। संयम लेक
विचरते हुए कदाचित् किसी जीव के मिथ्यात्व मोहनीय उदय
में आता है तब अपने आप संयम से भ्रष्ट हो जाता है औ
मिथ्यात्व की रुचि जगने से मिथ्यात्वी हो जाता है।

❀ (१) जब जीव के मोहनीय कर्म उपशान्त होता है
पण्डित वीर्य द्वारा उवट्ठाण करता है अर्थात् ऊपर के उत्तम गुणस्थानों
रहा हुआ जीव उन्हीं गुणस्थानों को पुष्ट करता है।

नोट—यहाँ छठे गुणस्थान की अपेक्षा पण्डित वीर्य संभवित है

(२) जब जीव के मोहनीय कर्म उपशान्त होता है तब बा
पण्डित वीर्य द्वारा अवक्रमण करता है अर्थात् नीचे के गुणस्थानों
ऊपर के गुणस्थानों में जाता है। मिथ्यात्व से निकल कर समकित
देशविरति में तथा सर्व विरति संयम में जाता है।

नोट—यहाँ पांचवें गुणस्थान की अपेक्षा बालपण्डित
संभवित है और छठे गुणस्थान की अपेक्षा पण्डित वीर्य संभवित है

प्रश्न—उपशम की अपेक्षा उवट्ठावणा और अवक्कमणेण
क्या अन्तर है?

उत्तर—जो जीव उत्तम गुणस्थानों (चौथा, पांचवां छठा
रहे हुए हैं और उन्हीं गुणस्थानों की —ते हैं। यह उपशम
अपेक्षा उवट्ठावणा है गुणस्थान में
जो जीव
पण्डित वीर्य और

जीव ने जो कर्म किये हैं, उनको आत्मप्रदेशों में निश्चय वेदता है, अनुभाग और विपाकों में वेदने की भजना है। धे हुए कर्मों को भोगे बिना छुटकारा नहीं होता। केवली गवान् सब जानते हैं कि 'यह जीव तो तपस्या से कर्मों की ीरणा करके कर्मों को वेदेगा (भोगेगा) और यह जीव र्म उदय में आने से वेदेगा'।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० १५)

श्री भगवतीजी सूत्र के पहले शतक के पांचवें देशे में क्रोधी मानी आदि के भांगों का थोकड़ा लता है सो कहते हैं—

पुढवी ठिई ओगाहण, सरीर संघयणमेव संठाणे।
लेस्सा दिट्ठि णाणे, जोगुवओगे य दस ठाणा।

अर्थ—स्थिति ४, अवगाहना ४, शरीर ५, संघयण ६, स्थान ६, लेश्या ६, दृष्टि ३, ज्ञान ८, योग ३, उपयोग २। न दस द्वारों के ४७ बोल होते हैं।

१—अहो भगवान्! पृथ्वियाँ कितनी हैं? हे गौतम! थ्वियाँ ७ हैं– रत्नप्रभा यावत् तमतमा प्रभा।

२—अहो भगवान्! सात पृथ्वियों में कितने नरकावासे

हैं ? हे गौतम ! पहली * नारकी में ३० लाख नरकावासा हैं दूसरी में २५ लाख, तीसरी में १५ लाख, चौथी में १० लाख पांचवीं में ३ लाख, छठी में पांच कम १ लाख, और सातवीं में ५ नरकावासा हैं ।

३—अहो भगवान् ! ‡ असुरकुमार आदि के कितने लाख आवास (रहने के ठिकाने) हैं ? हे गौतम ! असुर कुमार † के ६४ लाख आवास हैं, नागकुमार के ८४ लाख, सुवर्णकुमार के ७२ लाख, वायुकुमार के ९६ लाख, द्वीपकुमार, दिशाकुमार, उदधिकुमार, विद्युत्कुमार, स्तनितकुमार और अग्नि कुमार इन छह के ७६–७६ लाख आवास हैं ।

---

* तीसा य पण्णवीसा, पण्णरस दसेव य सयसहस्सा ।
तिण्णेगं पंचूणं, पंचेव अणुत्तरा णिरया ॥

‡ चउसट्ठीअसुराणं, चउरासीई य होइ णागाणं ।
बावत्तरि सुवण्णाणं, वाउकुमाराण छण्णउइ ॥ १ ॥
दीव दिसा उदहीणं, विज्जुकुमारिंद थणियमग्गीणं ।
छण्हं पि जुयलयाणं, छावत्तरिओ सयसहस्सा ॥ २ ॥

† भवनपतियों के भवन (आवास) दक्षिण और उत्तर दिशा में इस प्रकार है—

असुरकुमार के
नागकुमार के
... के

४—अहो भगवान्! पृथ्वीकाय के कितने आवास हैं? हे गौतम! असंख्याता लाख आवास हैं। इसी तरह जाव वाण-व्यंतर तक असंख्याता लाख आवास कह देना। ज्योतिषी में असंख्याता लाख विमानावास हैं।

५—अहो भगवान्! वैमानिक देवों के कितने विमानावास हैं? हे गौतम! पहले ❀ देवलोक में ३२ लाख विमानावास हैं। दूसरे में २८ लाख, तीसरे में १२ लाख, चौथे में ८ लाख, पांचवें में ४ लाख, छठे में ५० हजार, सातवें में ४०

द्वीपकुमार के	४० लाख	३६ लाख
दिशाकुमार के	" "	" "
उदधिकुमार के	" "	" "
विद्युत्कुमार के	" "	" "
स्तनितकुमार के	" "	" "
अग्निकुमार के	" "	" "
वायुकुमार के	५० लाख	४६ लाख
	४०६०००००	३६६०००००

कुल ७७२००००० भवन हैं।

❀ बत्तीसट्ठावीसा, बारस अट्ठ चउरो सयसहस्सा।
पण्णा चत्तालीसा छच, सहस्सा सहस्सारे॥ १॥
आणय पाणयकप्पे, चत्तारि सया आरणच्चुए तिण्णि।
सत्त विमाण सयाइं, चउसु वि एएसु कप्पेसु॥ २॥
एक्कारसुत्तरं हेट्ठिमेसु, सत्तुत्तरं सयं च मज्झमए।
सयमेगं उवरिमए, पंचेव अणुत्तरविमाणा॥ ३॥

हजार, आठवें में ६ हजार, नवमें दसवें में ४००, ग्यारहवें बारहवें देवलोक में ३०० विमानावास हैं। नवग्रैवेयक की नीचली त्रिक में १११, बीचली त्रिक में १०७ और ऊपरली त्रिक में १०० विमानावास हैं। पांच अनुत्तर विमानों में ५ विमानावास हैं। वैमानिक देवों के कुल ८४९७०२३ विमानावास हैं।

६—अहो भगवान् ! स्थिति कितने प्रकार की है ? हे गौतम ! स्थिति चार प्रकार की है—१ जघन्य स्थिति, २ जघन्य स्थिति से एक समय अधिक यावत् संख्याता समय तक, ३ संख्याता समय से एक समय अधिक यावत् असंख्याता समय अधिक उत्कृष्ट से एक समय कम तक, ४ उत्कृष्ट स्थिति।

७—अहो भगवान् ! अवगाहना के कितने भेद हैं। हे गौतम ! चार भेद हैं—१ जघन्य अवगाहना, २ जघन्य अवगाहना से एक आकाश प्रदेश अधिक यावत् संख्याता आकाश प्रदेश तक, ३ संख्याता आकाश प्रदेशों से एक आकाश प्रदेश अधिक, उत्कृष्ट से एक आकाश प्रदेश कम तक, ४ उत्कृष्ट अवगाहना।

८—अहो भगवान् ! शरीर, संहनन आदि के कितने भेद हैं ? हे गौतम ! शरीर के ५ भेद हैं—औदारिक, वैक्रिय, आहारक, तैजस, कार्मण। संहनन के ६ भेद हैं—वज्रऋषभनाराच, ऋषभ नाराच, नाराच, अर्द्ध नाराच, कीलिका, सेवार्त (छेवटिया)

संघयण । संस्थान के ६ भेद हैं—समचौरस (समचतुरस्र) निगोह परिमंडल न्यग्रोधपरिमंडल, सादि, वामन, कुब्ज, हुण्डक । लेश्या के ६ भेद हैं—कृष्ण, नील, कापोत, तेजो, पद्म, शुक्ल लेश्या । दृष्टि के ३ भेद हैं—समदृष्टि, मिथ्यादृष्टि, मिश्रदृष्टि । ज्ञान के ५ भेद—मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्ययज्ञान, केवलज्ञान । अज्ञान के ३ भेद—मतिअज्ञान, श्रुतअज्ञान, विभंगज्ञान । योग के ३ भेद—मनयोग, वचनयोग, काययोग । उपयोग के २ भेद—साकारवउता (साकारोपयोग) अणाकार वउता (अनाकारोपयोग) । ये सब ४७ बोल हैं—

समुच्चय नारकी में बोल पावे २६—(स्थिति के ४, अवगाहना के ४, शरीर ३, संठाण (संस्थान) १, लेश्या ३, दृष्टि ३, ज्ञान ३, अज्ञान ३, योग ३, उपयोग २)। पहली नारकी में बोल पावे २७ (समुच्चय में २६ कहे उनमें से २ लेश्या कम कहना) । पहली नारकी के ३० लाख नरकावासों में बोल पावे २७ । इनमें से चार बोलों में (स्थिति का दूसरा भेद, अवगाहना का पहला भेद और दूसरा भेद और मिश्रदृष्टि में) भांगा पावे ८० (असंयोगी ८, द्विसंयोगी २४, त्रिसंयोगी ३२, चार संयोगी १६)। बाकी २३ बोलों में भांगा पावे २७–२७ (असंयोगी १, द्विसंयोगी ६, त्रिसंयोगी १२, चारसंयोगी ८)। अशाश्वत ठिकाणे (स्थान) में भांगा पावे ८० और शाश्वत ठिकाणे में भांगा पावे २७ ।

दूसरी नारकी के २५ लाख नरकावासों में बोल पावे २७ (पहली नारकी की तरह कह देना)।

तीसरी नारकी के १५ लाख नरकावासों में और पांचवी नारकी के ३ लाख नरकावासों में बोल पावे २८-२८ (ऊपर २७ कहे उनमें एक लेश्या बढी)। इनमें से चार बोलों में भांगा पावे ८०-८०। शेष २४ बोलों में भांगा पावे २७-२७ (पहली नारकी की तरह कह देना)।

चौथी नारकी के १० लाख नरकावासों में, छठी नारकी के पांच कम एक लाख नरकावासों में और सातवीं नारकी के ५ नरकावासों में बोल पावे २७-२७ (पहली नारकी की तरह कह देना)।

भवनपति और वाणव्यन्तर देवों में बोल पावे ३० (पहले जो २७ कहे हैं, उनमें ३ लेश्या और बढी)। इनमें से चार बोलों में भांगा पावे ८०-८०। बाकी २६ बोलों में भांगा पावे २७-२७ (पहली नारकी की तरह कह देना किन्तु इतनी विशेषता है कि नारकी में क्रोधी, मानी, मायी, लोभी कहे हैं किन्तु यहाँ पर लोभी, मायी, मानी, क्रोधी इस तरह उल्टा कहना, जैसे कि—'सव्वे वि ताव हुज्जा लोभी' इसी तरह बाकी २६ भांगे नारकी से उल्टे कह देना)।

ज्योतिषी देवों में और पहले देवलोक से बारहवें देवलोक तक वैमानिक देवों में बोल पावे २७-२७ (ऊपर जो ३० बोल

कहे हैं उनमें से ३ लेश्या कम हुई)। इनमें से ४ बोलों में भांगा पावे ८०-८० । बाकी २३ बोलों में भांगा पावे २७-२७ (भवनपति की तरह कह देना)।

नवग्रैवेयक में बोल पावे २६ (ऊपर जो २७ कहे हैं उनमें से एक मिश्रदृष्टि कम हुई)। इनमें से ३ बोलों में भांगा पावे ८०-८० । बाकी २३ बोलों में भांगा पावे २७-२७ (भवनपति की तरह कह देना)।

पांच अनुत्तर विमान में बोल पावे २२-२२ (ऊपर २६ कहे हैं उनमें से ३ अज्ञान और एक मिथ्यादृष्टि ये ४ बोल कम हुए)। ३ बोलों में भांगा पावे ८०-८० । बाकी १९ बोलों में भांगा पावे २७-२७ (भवनपति की तरह कह देना)।

पृथ्वी, पानी, वनस्पति में बोल पावे २३-२३ (स्थिति के ४, अवगाहना के ४, शरीर ३, संघयण (संहनन) १, संठाण (संस्थान) १, लेश्या ४, दृष्टि १, अज्ञान २, योग १, उपयोग २,=२३)। इन में से तेजोलेश्या में भांगा पावे ८० (नारकी की तरह कह देना)। बाकी २२ बोलों में भांगे नहीं पावे, अभंग।

तेउकाय में बोल पावे २२ (ऊपर २३ कहे उनमें से तेजोलेश्या कम हुई)। वायुकाय में बोल पावे २३ (तेजोलेश्या कम हुई, वैक्रिय शरीर बढा)। भांगे नहीं, अभंग।

तीन विकलेन्द्रिय में बोल पावे २६-२६ (तेउकाय में २२ कहे हैं उनमें १ समदृष्टि, २ ज्ञान और १ वचन योग ये ४ बढ़

दूसरी नारकी के २५ लाख नरकावासों में बोल पावे २७
(पहली नारकी की तरह कह देना)।

तीसरी नारकी के १५ लाख नरकावासों में और पांचवीं
नारकी के ३ लाख नरकावासों में बोल पावे २८-२८ (ऊपर
२७ कहे उनमें एक लेश्या बढी)। इनमें से चार बोलों में भांगा
पावे ८०-८०। शेष २४ बोलों में भांगा पावे २७-२७
(पहली नारकी की तरह कह देना)।

चौथी नारकी के १० लाख नरकावासों में, छठी नारकी के
पांच कम एक लाख नरकावासों में और सातवीं नारकी के ५
नरकावासों में बोल पावे २७-२७ (पहली नारकी की तरह
कह देना)।

भवनपति और वाणव्यन्तर देवों में बोल पावे ३० (पहले
जो २७ कहे हैं, उनमें ३ लेश्या और बढी)। इनमें से चार
बोलों में भांगा पावे ८०-८०। बाकी २६ बोलों में भांगा
पावे २७-२७ (पहली नारकी की तरह कह देना किन्तु इतनी
विशेषता है कि नारकी में क्रोधी, मानी, मायी, लोभी कहे
किन्तु यहाँ पर लोभी, मायी, मानी, क्रोधी इस तरह उलटा
कहना, जैसे कि—'सव्वे वि ताव हुज्जा लोभी' इसी तरह बाकी
२६ भांगे नारकी से उलटे कह देना)।

ज्योतिषी देवों में और पहले देवलोक से बारहवें देवलोक
तक वैमानिक देवों में बोल पावे २७-२७ (ऊपर जो ३० बोल

कहे हैं उनमें से ३ लेश्या कम हुई)। इनमें से ४ बोलों में भांगा पावे ८०-८० । बाकी २३ बोलों में भांगा पावे २७-२७ (भवनपति की तरह कह देना)।

नवग्रैवेयक में बोल पावे २६ (ऊपर जो २७ कहे हैं उनमें से एक मिश्रदृष्टि कम हुई)। इनमें से ३ बोलों में भांगा पावे ८०-८० । बाकी २३ बोलों में भांगा पावे २७-२७ (भवनपति की तरह कह देना)।

पांच अनुत्तर विमान में बोल पावे २२-२२ (ऊपर २६ कहे हैं उनमें से ३ अज्ञान और एक मिथ्यादृष्टि ये ४ बोल कम हुए)। ३ बोलों में भांगा पावे ८०-८० । बाकी १६ बोलों में भांगा पावे २७-२७ (भवनपति की तरह कह देना)।

पृथ्वी, पानी, वनस्पति में बोल पावे २३-२३ (स्थिति के ४, अवगाहना के ४, शरीर ३, संघयण (संहनन) १, संठाण (संस्थान) १, लेश्या ४, दृष्टि १, अज्ञान २, योग १, उपयोग २,=२३)। इन में से तेजोलेश्या में भांगा पावे ८० (नारकी की तरह कह देना)। बाकी २२ बोलों में भांगे नहीं पावे, अभंग।

तेउकाय में बोल पावे २२ (ऊपर २३ कहे उनमें से तेजोलेश्या कम हुई)। वायुकाय में बोल पावे २३ (तेजोलेश्या कम हुई, वैक्रिय शरीर बढा)। भांगे नहीं, अभंग।

तीन विकलेन्द्रिय में बोल पावे २६-२६ (तेउकाय में २२ कहे हैं उनमें १ समदृष्टि, २ ज्ञान और १ वचन योग ये ४ बढ़

गये)। इन में से ६ बोलों में (समदृष्टि १, ज्ञान २, का दूसरा बोल, अवगाहना का पहला और दूसरा बोल भांगा पावे ८०-८० (नारकी की तरह कह देना)। बाकी बोलों में भांगे नहीं पावे, अभंग।

तिर्यंच पंचेन्द्रिय में बोल पावे ४४ (४७ बोलों शरीर १, ज्ञान दो ये तीन बोल कम हुए)। इनमें से ४ में (नारकी में कहे उनमें) भांगा पावे ८०-८०। बाकी बोलों में भांगे नहीं पावे, अभंग।

मनुष्य में बोल पावे ४७। इनमें से ६ बोलों में (का पहला दूसरा बोल, अवगाहना का पहला दूसरा बोल, रक शरीर, मिश्रदृष्टि=६) में भांगा पावे ८०-८० (की तरह कह देना)। बाकी ४१ बोलों में भांगे नहीं पावे, अ

अशाश्वत ठिकाणे में ८० भांगे पाये जाते हैं वे प्रकार हैं—

असंयोगी भांगे ८

१ क्रोधी एक
२ मानी एक
३ मायी एक
४ लोभी एक
५ क्रोधी बहुत
६ मानी बहुत

७ मायी बहुत
८ लोभी बहुत

द्विक संयोगी भांगा २४

१ क्रोधी एक, मानी एक
२ क्रोधी एक, मानी बहुत
३ क्रोधी बहुत, मानी एक
४ क्रोधी बहुत, मानी बहुत
५ क्रोधी एक, मायी एक
६ क्रोधी एक, मायी बहुत
७ क्रोधी बहुत, मायी एक
८ क्रोधी बहुत, मायी बहुत
९ क्रोधी एक, लोभी एक
१० क्रोधी एक, लोभी बहुत
११ क्रोधी बहुत, लोभी एक
१२ क्रोधी बहुत, लोभी बहुत
१३ मानी एक, मायी एक
१४ मानी एक, मायी बहुत
१५ मानी बहुत, मायी एक
१६ मानी बहुत, मायी बहुत
१७ मानी एक, लोभी एक
१८ मानी एक, लोभी बहुत

१६ मानी बहुत, लोभी एक
२० मानी बहुत, लोभी बहुत
२१ मायी एक, लोभी एक
२२ मायी एक, लोभी बहुत
२३ मायी बहुत, लोभी एक
२४ मायी बहुत, लोभी बहुत

त्रिकसंयोगी भांगा ३२

१ क्रोधी एक, मानी एक, मायी एक
२ क्रोधी एक, मानी एक, मायी बहुत
३ क्रोधी एक, मानी बहुत, मायी एक
४ क्रोधी एक, मानी बहुत, मायी बहुत
५ क्रोधी बहुत, मानी एक, मायी एक
६ क्रोधी बहुत, मानी एक, मायी बहुत
७ क्रोधी बहुत, मानी बहुत, मायी एक
८ क्रोधी बहुत, मानी बहुत, मायी बहुत
६ क्रोधी एक, मानी एक, लोभी एक
१० क्रोधी एक, मानी एक, लोभी बहुत
११ क्रोधी एक, मानी बहुत, लोभी एक
१२ क्रोधी एक, मानी बहुत, लोभी बहुत
१३ क्रोधी बहुत, मानी एक, लोभी एक
१४ क्रोधी बहुत, मानी एक, लोभी बहुत

५ क्रोधी बहुत, मानी बहुत, लोभी एक
६ क्रोधी बहुत, मानी बहुत, लोभी बहुत
७ क्रोधी एक, मायी एक, लोभी एक
८ क्रोधी एक, मायी एक, लोभी बहुत
९ क्रोधी एक, मायी बहुत, लोभी एक
१० क्रोधी एक, मायी बहुत, लोभी बहुत
११ क्रोधी बहुत, मायी एक, लोभी एक
१२ क्रोधी बहुत, मायी एक, लोभी बहुत
१३ क्रोधी बहुत, मायी बहुत, लोभी एक
२४ क्रोधी बहुत, मायी बहुत, लोभी बहुत
२५ मानी एक, मायी एक, लोभी एक
२६ मानी एक, मायी एक, लोभी बहुत
२७ मानी एक, मायी बहुत, लोभी एक
२८ मानी एक, मायी बहुत, लोभी बहुत
२९ मानी बहुत, मायी एक, लोभी एक
३० मानी बहुत, मायी एक, लोभी बहुत
३१ मानी बहुत, मायी बहुत, लोभी एक
३२ मानी बहुत, मायी बहुत, लोभी बहुत

चार संयोगी भांगा १६

१ क्रोधी एक, मानी एक, मायी एक, लोभी एक
२ क्रोधी एक, मानी एक, मायी एक, लोभी बहुत

९ क्रोधी बहुत, मायी एक, लोभी एक
१० क्रोधी बहुत, मायी एक, लोभी बहुत
११ क्रोधी बहुत, मायी बहुत, लोभी एक
१२ क्रोधी बहुत, मायी बहुत, लोभी बहुत

चार संयोगी भांगा ८

१ क्रोधी बहुत, मानी एक, मायी एक, लोभी एक
२ क्रोधी बहुत, मानी एक, मायी एक, लोभी बहुत
३ क्रोधी बहुत, मानी एक, मायी बहुत, लोभी बहुत
४ क्रोधी बहुत, मानी एक, मायी बहुत, लोभी बहुत
५ क्रोधी बहुत, मानी बहुत, मायी एक, लोभी एक
६ क्रोधी बहुत, मानी बहुत, मायी एक, लोभी बहुत
७ क्रोधी बहुत, मानी बहुत, मायी बहुत, लोभी एक
८ क्रोधी बहुत, मानी बहुत, मायी बहुत, लोभी बहुत।

देवता में २७ भांगा इस तरह कहना चाहिए—असंयं भांगा १—

१ सव्वे वि ताव होज्जा लोभोवउत्ता (सभी लोभी)।

द्विक संयोगी भांगा ६

१ लोभी बहुत, मायी एक
२ लोभी बहुत, मायी बहुत
३ लोभी बहुत, मानी एक

द्विक संयोगी भांगों के आंक—३१, ३३।
त्रिक संयोगी भांगों के आंक—३११, ३१३, ३३१, ३३३।

१ लोभी बहुत मानी बहुत
१ लोभी बहुत, क्रोधी एक
१ लोभी बहुत, क्रोधी बहुत

त्रिक संयोगी भांगा १२

१ लोभी बहुत, मायी एक, मानी एक
२ लोभी बहुत, मायी एक, मानी बहुत
३ लोभी बहुत, मायी बहुत, मानी एक
४ लोभी बहुत, मायी बहुत, मानी बहुत
५ लोभी बहुत, मायी एक, क्रोधी एक
६ लोभी बहुत, मायी एक, क्रोधी बहुत
७ लोभी बहुत, मायी बहुत, क्रोधी एक
८ लोभी बहुत, मायी बहुत, क्रोधी बहुत
९ लोभी बहुत, मानी एक, क्रोधी एक
१० लोभी बहुत, मानी एक, क्रोधी बहुत
११ लोभी बहुत, मानी बहुत, क्रोधी एक
१२ लोभी बहुत, मानी बहुत, क्रोधी बहुत

चार संयोगी भांगा ८

१ लोभी बहुत, मायी एक, मानी एक, क्रोधी एक
२ लोभी बहुत, मायी एक, मानी एक, क्रोधी बहुत

चार संयोगी भांगों के आंक--३१११, ३११३, ३१३१, ३१३३, ३३११, ३३१३, ३३३१, ३३३३ ।
इन आंकों पर ध्यान देने से भांगे सरलता से बोले जा सकते हैं।

३ लोभी बहुत, मायी एक, मानी बहुत, क्रोधी एक
४ लोभी बहुत, मायी एक, मानी बहुत, क्रोधी बहुत
५ लोभी बहुत, मायी बहुत, मानी एक, क्रोधी एक
६ लोभी बहुत, मायी बहुत, मानी एक, क्रोधी बहुत
७ लोभी बहुत, मायी बहुत, मानी बहुत, क्रोधी एक
८ लोभी बहुत, मायी बहुत, मानी बहुत, क्रोधी बहुत

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० १६)

श्री भगवतीजी सूत्र के पहले शतक के छठे उद्देशे में 'रोहा अणगार' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

लोए जीवा भवि सिद्धि, सिद्धा अंडए कुक्कुडी।
लोयंते अलोयंते, सव्वे अणाणुपुव्वीयं ॥ १ ॥
उवास वाय घण उदही, पुढवी दीवा य सागर वासा।
णेरइयाई अत्थियसमया, कम्माइं लेस्साओ ॥ २ ॥
दिट्ठि दंसणणाणि, सण्णा सरीरा य जोगुवओगे।
दव्व पएसा पज्जव अद्धा, किं पुव्वि लोयंते ॥ ३ ॥

श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के अन्तेवासी शिष्य रोहा नामक अनगार थे। वे प्रकृति के भद्रिक, कोमल, विनीत और शान्त थे। उनके क्रोध, मान, माया, लोभ स्वभाव से ही ... थे। वे निरभिमानी, गुरु की आज्ञा में रहने वाले, [illegible]

ो संताप न पहुँचाने वाले, गुरु भक्त थे। गोड़ों को ऊंचा और मस्तक को थोड़ा नीचा नमा कर, ध्यान रूपी कोठे में ।विष्ट होकर अपनी आत्मा को तप संयम से भावित करते ;ए विचरते थे। एक समय उनके मन में शंका उत्पन्न हुई तब । भगवान् महावीर स्वामी के पास आकर विनयपूर्वक पूछने तगे—

१—अहो भगवान्! क्या पहले लोक और पीछे अलोक ! अथवा पहले अलोक और पीछे लोक है? हे रोहा! लोक और अलोक पहले भी है और पीछे भी है। ये दोनों शाश्वत ाव हैं, यह अनानुपूर्वी है (यह पहले और यह पीछे ऐसा क्रम हीं है)।

२ से ५—अहो भगवान्! क्या पहले जीव और पीछे प्रजीव है अथवा पहले अजीव और पीछे जीव है? हे रोहा! जस तरह लोक अलोक का कहा, उसी तरह जीव अजीव का ी कह देना। इसी तरह भवसिद्धिक अभवसिद्धिक, सिद्धि और प्रसिद्धि (संसार), सिद्ध और असिद्ध (संसारी) का भी कह ना। ये शाश्वत भाव हैं, अनानुपूर्वी हैं।

६—अहो भगवान्! क्या पहले अण्डा और पीछे कूकड़ी अथवा पहले कूकड़ी और पीछे अण्डा है? हे रोहा! वह अण्डा कहाँ से हुआ! अहो भगवान्! अण्डा कूकड़ी से हुआ। रोहा! कूकड़ी कहां से हुई? अहो भगवान्! कूकड़ी अण्डे

से हुई। हे रोहा ! इस तरह कुकड़ी और अण्डा पहले भी और पीछे भी हैं। ये शाश्वतभाव हैं, अनानुपूर्वी हैं।

७—अहो भगवान् ! क्या पहले लोकान्त और पीछे अलोकान्त है अथवा पहले अलोकान्त और पीछे लोकान्त ? हे रोहा ! लोकान्त और अलोकान्त ये दोनों शाश्वतभाव अनानुपूर्वी हैं।

८—अहो भगवान् ! क्या पहले लोकान्त और पीछे सातवीं नारकी का आकाशान्त है ? अथवा पहले सातवीं नारकी का आकशान्त है और पीछे लोकान्त है ? हे रोहा ! ये दोनों ही शाश्वतभाव हैं, अनानुपूर्वी हैं।

इसी तरह (९) लोकान्त और सातवीं नारकी की तनुवात (१०) लोकान्त और सातवीं नारकी की घनवात, (११) लोकान्त और सातवीं नारकी का घनोदधि, (१२) लोकान्त और सातवीं नारकी, ये आठवें प्रश्न की तरह कह देना, शाश्वतभाव हैं, अनानुपूर्वी हैं।

इसी तरह लोकान्त और छठी नारकी का आकाशान्त, छठी नारकी की तनुवात, छठी नारकी की घनवात, छठी नारकी का घनोदधि और छठी नारकी ये ५ प्रश्न आठवें प्रश्न की तरह कह देना। इसी तरह पहली नारकी तक एक एक नारकी के पांच पांच प्रश्न लोकान्त से कह देना। इस प्रकार सात नारकी के ३५ प्रश्न हुए। (३६) द्वीप, (३७) सा

(३८) वर्ष-क्षेत्र, (३९) नैरयिक आदि जीव, (४०) अस्तिकाय, (४१) समय, (४२) कर्म, (४३) लेश्या, (४४) दृष्टि, (४५) दर्शन, (४६) ज्ञान, (४७) संज्ञा, (४८) शरीर, (४९) योग, (५०) उपयोग, (५१) द्रव्य, (५२) प्रदेश, (५३) पर्याय, (५४) अतीतकाल, (५५) अनागत काल, (५६) सर्वकाल, इन सब का प्रश्न लोकान्त से कह देना। ये सब शाश्वत भाव हैं, अनानुपूर्वी हैं। इसी तरह सातवीं नारकी के आकाशान्त से ५५ बोल कह देना। इस प्रकार अनुक्रम से ऊपर का एक एक बोल छोड़ते हुए आगे आगे के बोल कह देना।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० १७)

श्री भगवतीजी सूत्र के पहले शतक के छठे उद्देशे में 'लोक स्थिति' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! लोक की स्थिति कितने प्रकार की है ? हे गौतम ! आठ प्रकार की है—आकाश के आधार तनुवात, (२) तनुवात के आधार घनवात, (३) घनवात के आधार घनोदधि, (४) घनोदधि के आधार पृथ्वी, (५) पृथ्वी के आधार त्रस स्थावर जीव, (६) जीवों के आधार

(थोकड़ा नं० १८)

श्री भगवतीजी सूत्र के पहले शतक के सातवें उद्देशे में '१६ दण्डक' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! नरक में उत्पन्न होता हुआ नैरयिक क्या देश से देश उत्पन्न होता है (जीव अपने एक अवयव से नैरयिक का एक अवयव उत्पन्न होता है ?) या देश से सर्व उत्पन्न होता है ? या सर्व से देश उत्पन्न होता है ? या सर्व से सर्व उत्पन्न होता है ? हे गौतम ! देश से देश उत्पन्न नहीं होता, देश से सर्व उत्पन्न नहीं होता, सर्व से देश उत्पन्न नहीं होता, किन्तु सर्व से सर्व उत्पन्न होता है । इसी तरह वैमानिक तक २४ ही दण्डक में कह देना ।

२—अहो भगवान् ! नरक में उत्पन्न होता हुआ नैरयिक क्या देश से देश का आहार लेता है ? (आत्मा के एक भाग से आहार का एक भाग ग्रहण करता है ?), या देश से सर्व आहार लेता है, ? या सर्व से देश आहार लेता है ? या सर्व से सर्व आहार लेता है ? हे गौतम ! देश से देश आहार नहीं लेता, देश से सर्व आहार नहीं लेता, किन्तु सर्व से देश आहार लेता, सर्व से सर्व ... लेता है । इसी तरह २४ दण्डक

३—अहो भगवान् ! नरक से उद्वर्तता (निकलता) हुआ रयिक क्या देश से देश उद्वर्तता है ? इत्यादि प्रश्न। हे गौतम ! जस तरह उत्पन्न होने का कहा उसी तरह उद्वर्तन (नरक से निक-ना) का भी कह देना। इसी तरह २४ दण्डक में कह देना।

४—अहो भगवान् ! नरक से उद्वर्तता हुआ नैरयिक क्या श से देश आहार लेता है ? इत्यादि प्रश्न। हे गौतम ! जिस रह उत्पन्न होने के समय आहार लेने का कहा उसी तरह यहाँ भी ह देना अर्थात् सर्व से देश आहार लेता है अथवा सर्व से सर्व गहार लेता है।

५— अहो भगवान् ! नरक में उत्पन्न हुआ नैरयिक क्या श से देश उत्पन्न हुआ है ? इत्यादि प्रश्न। हे गौतम ! यह भी हले की तरह कह देना अर्थात् सर्व से सर्व उत्पन्न हुआ है। ६ र्व से देश आहार लेता है अथवा सर्व से सर्व आहार लेता है।

७–८—जिस तरह 'उत्पन्न हुआ' का कहा उसी तरह 'उद्व–नि हुआ' भी कह देना।

(१) उत्पन्न होता हुआ, (२) उत्पन्न होता हुआ आहार लेता है, (३) उद्वर्तता हुआ, (४) उद्वर्तता हुआ आहार लेता है, (५) उत्पन्न हुआ, (६) उत्पन्न हुआ आहार लेता है, (७) उद्वर्ता (निकला) हुआ, (८) उद्वर्ता हुआ आहार लेता है। ये ८ दंडक (भांगा—आलापक) हुए।

(थोकड़ा नं० १८)

श्री भगवतीजी सूत्र के पहले शतक के सात
उद्देशे में '१६ दण्डक' का थोकड़ा चलता है सो
कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! नरक में उत्पन्न होता हुआ नैरयि
क्या देश से देश उत्पन्न होता है (जीव अपने एक अवयव से
नैरयिक का एक अवयव उत्पन्न होता है ?) या देश से स
उत्पन्न होता है ? या सर्व से देश उत्पन्न होता है ? या सर्व से
सर्व उत्पन्न होता है ? हे गौतम ! देश से देश उत्पन्न नहीं होता,
देश से सर्व उत्पन्न नहीं होता, सर्व से देश उत्पन्न नहीं होता
किन्तु सर्व से सर्व उत्पन्न होता है । इसी तरह वैमानिक तक
ही दण्डक में कह देना ।

२—अहो भगवान् ! नरक में उत्पन्न होता हुआ नैरयि
क्या देश से देश का आहार लेता है ? (आत्मा के एक भाग
से आहार का एक भाग ग्रहण करता है ?), या देश से स
आहार लेता है, ? या सर्व से देश आहार लेता है ? या सर्व से
सर्व आहार लेता है ? हे गौतम ! देश से देश आहार नहीं लेता,
देश से सर्व आहार नहीं लेता, किन्तु सर्व से देश आहार लेता है
अथवा सर्व से सर्व आहार लेता है । इसी तरह २४ दण्डक में
कह देना ।

३—अहो भगवान् ! नरक से उद्वर्तता (निकलता) हुआ नैरयिक क्या देश से देश उद्वर्तता है ? इत्यादि प्रश्न। हे गौतम ! जिस तरह उत्पन्न होने का कहा उसी तरह उद्वर्तन (नरक से निकलना) का भी कह देना। इसी तरह २४ दण्डक में कह देना।

४—अहो भगवान् ! नरक से उद्वर्तता हुआ नैरयिक क्या देश से देश आहार लेता है ? इत्यादि प्रश्न। हे गौतम ! जिस तरह उत्पन्न होने के समय आहार लेने का कहा उसी तरह यहाँ भी कह देना अर्थात् सर्व से देश आहार लेता है अथवा सर्व से सर्व आहार लेता है।

५—अहो भगवान् ! नरक में उत्पन्न हुआ नैरयिक क्या देश से देश उत्पन्न हुआ है ? इत्यादि प्रश्न। हे गौतम ! यह भी पहले की तरह कह देना अर्थात् सर्व से सर्व उत्पन्न हुआ है। ६ सर्व से देश आहार लेता है अथवा सर्व से सर्व आहार लेता है।

७-८—जिस तरह 'उत्पन्न हुआ' का कहा उसी तरह 'उद्वर्तन हुआ' भी कह देना।

(१) उत्पन्न होता हुआ, (२) उत्पन्न होता हुआ आहार लेता है, (३) उद्वर्तता हुआ, (४) उद्वर्तता हुआ आहार लेता है, (५) उत्पन्न हुआ, (६) उत्पन्न हुआ आहार ले[illegible] (७) उद्वर्ता (निकला) हुआ, (८) उद्वर्ता हुआ [illegible] लेता है। ये ८ [illegible])[illegible]

६—अहो भगवान् ! नरक में उत्पन्न होता हुआ
क्या आधे भाग से आधा भाग (अद्धेणं अद्धे) उत्पन्न होता है
या आधे भाग से सर्व भाग (अद्धेणं सव्वे) उत्पन्न होता है
इत्यादि प्रश्न । हे गौतम ! जिस तरह पहले ८ भांगे कहे हैं उसी
तरह यहाँ 'देश के स्थान में अद्धेणं अद्धे (आधे भाग से आधे
भाग)' के भी ८ भांगे कह देना ।

ये सब १६ भांगे (आलापक) हुए । २४ दण्डक के साथ
गिनने से ३८४ भांगे हुए ।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० १६)

श्री भगवतीजी सूत्र के पहले शतक के सातवें उद्देशे में 'गर्भ' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! महान् ऋद्धि, कान्ति, ज्योति, बल
सुख और महानुभाव वाला देव अपना च्यवन काल (मृत्यु
समय) नजदीक जान कर क्या लज्जित होता है ? अरति करता
है, और थोड़े समय तक आहार भी नहीं लेता, फिर पीछे क्षुधा
(भूख) सहन नहीं होने से आहार करता है ? शेष आयु पूर्ण
होने पर मनुष्य गति या तिर्यञ्च गति में उत्पन्न होता है ? हे
गौतम ! देवता अपना च्यवन काल नजदीक जान कर पूर्वोक्त
प्रकार से चिन्ता करता है कि अब मुझे इन देवता सम्बन्धी
कामभोगों को छोड़ कर मनुष्यादि की अशुचि पदार्थ वाली यो

में उत्पन्न होना पड़ेगा, और वहाँ वीर्य-रुधिर का आहार लेना पड़ेगा। ऐसा सोच कर वह लज्जित होता है, घृणा करता है, अरति करता है, फिर आयु क्षय होने पर मनुष्य गति या तिर्यञ्च गति में उत्पन्न होता है।

२—अहो भगवान्! गर्भ में उत्पन्न होता हुआ जीव या इन्द्रियसहित उत्पन्न होता है या इन्द्रिय रहित उत्पन्न होता है? हे गौतम! द्रव्येन्द्रियों (कान, आंख, नाक, जीभ और स्पर्श) की अपेक्षा इन्द्रिय रहित उत्पन्न होता है क्योंकि द्रव्येन्द्रियाँ शरीर से सम्बन्ध रखती हैं और भावेन्द्रियों की अपेक्षा इन्द्रियां सहित उत्पन्न होता है।

३—अहो भगवान्! गर्भ में उत्पन्न होता हुआ जीव क्या सशरीरी (शरीरसहित) उत्पन्न होता है या अशरीरी (शरीर रहित) उत्पन्न होता है? हे गौतम! औदारिक, वैक्रिय, आहारक इन तीन शरीरों की अपेक्षा शरीर रहित उत्पन्न होता है क्योंकि ये तीनों शरीर जीव उत्पन्न होने के बाद उत्पन्न होते हैं। तैजसशरीर और कार्मण शरीर की अपेक्षा शरीरसहित उत्पन्न होता है क्योंकि ये दोनों शरीर परभव में जीव के साथ रहते हैं, इनका जीव के साथ अनादि सम्बन्ध है।

४—अहो भगवान्! गर्भ में उत्पन्न होता हुआ जीव सर्व प्रथम क्या आहार लेता है? हे गौतम! माता के रुधिर और पिता के वीर्य का सर्व प्रथम आहार लेता है। फिर माता

जैसा आहार करती है उसका एक देश (भाग) आहार म
में रहा हुआ जीव भी करता है, क्योंकि माता की नाड़ी
गर्भस्थ जीव की नाड़ी से सम्बन्ध है।

५—अहो भगवान्! क्या गर्भ में रहे हुए जीव के मल
मूत्र, श्लेष्म (बलगम), नाक का मैल, वमन और पित्त हो
हैं? हे गौतम! णो इणट्ठे समट्ठे (गर्भ में रहे हुए जीव
मलमूत्र श्लेष्म, नाक का मैल, वमन और पित्त नहीं होते हैं)
गर्भस्थ जीव जो आहार करता है वह श्रोत्रेन्द्रिय चक्षुइन्द्रि
घ्राणेन्द्रिय रसेन्द्रिय स्पर्शेन्द्रियपणे तथा हाड मज्जा (हाड
मींजी) केश नखपणे परिणमता है। क्योंकि गर्भस्थ जी
कवलाहार नहीं करता है, इसलिए उसके मलमूत्रादि नहीं हो
हैं। वह सर्व आहार करता है, सर्व परिणमाता है, सर्व उच्छ्वा
निःश्वास लेता है यावत् बारबार उच्छ्वास निःश्वास लेता है

६—अहो भगवान्! जीव के माता के कितने अंग
और पिता के कितने अंग हैं? हे गौतम! १ मांस, २ रुधि
(लोही) और ३ मस्तक, ये तीन अङ्ग माता के हैं और १ हा
२ मज्जा (हाड की मींजी) और ३ केश दाढ़ी रोम नख,
तीन अङ्ग पिता के हैं।

७—अहो भगवान्! माता पिता का अंश (प्रथम स
का लिया हुआ आहार) सन्तान के शरीर में कितने काल
रहता है? हे गौतम! जब तक जीव का भवधारणीय श

ता है तब तक माता पिता का अंश रहता है, परन्तु समय
मय पर वह क्षीण होता जाता है यावत् आयुष्य समाप्त होने
क माता पिता का कुछ न कुछ अंश रहता ही है। इसलिए
शरीर पर माता पिता का बहुत बड़ा उपकार है, इसी से
ह जीवित है, इसलिए माता पिता के उपकार को कभी नहीं
लना चाहिए।

८—अहो भगवान्! गर्भ में मरा हुआ जीव क्या नरक
उत्पन्न हो सकता है? हाँ गौतम! कोई जीव नरक में
त्पन्न होता है और कोई नहीं होता।

९—अहो भगवान्! गर्भ में मरा हुआ जीव किस कारण
नरक में जाता है? हे गौतम! गर्भ में मरा हुआ संज्ञी
सन्नी) पंचेन्द्रिय, पूर्ण पर्याप्ति वाला वीर्यलब्धि वैक्रियलब्धि
ाला जीव किसी समय अपने पिता पर चढ़ाई कर आये हुए
त्रु को सुन कर वैक्रिय लब्धि से अपने आत्म प्रदेशों को गर्भ
बाहर निकालता है और वैक्रिय समुद्घात करके चतुरंगिणी
ना तैयार करके शत्रु से संग्राम करता है। संग्राम करता हुआ
ह जीव आयुष्य पूर्ण कर तो मर कर नरक में उत्पन्न होता
क्योंकि उस समय वह जीव राज्य धन कामभोगादि का
भिलाषी है। अतः मरकर नरक* में जाता है।

---

* भगवती सूत्र के चौवीसवें शतक में कहा है कि तिर्यञ्च
जघन्य अन्तर्मुहूर्त वाला और मनुष्य जघन्य पृथक्त्व मास (२ महीने
से लेकर ९ महीने तक) वाला नरक में जा सकता है।

१०—अहो भगवान्! क्या गर्भ में रहा हुआ जीव देवत में उत्पन्न हो सकता है? हाँ, गौतम! कोई जीव देवता में उत्पन्न होता है और कोई नहीं होता।

११—अहो भगवान्! गर्भ में रहा हुआ जीव मर क किस कारण से देवता में उत्पन्न हो सकता है? हे गौतम! गर् में रहा हुआ संज्ञी (सन्नी) पञ्चेन्द्रिय, पूर्ण पर्याप्ति वाला, औ तथारूप के श्रमण माहन के पास एक भी आर्य वचन (ध वचन) सुन कर परम संवेग की श्रद्धा और धर्म पर तीव्र अ होने से धर्म पुण्य स्वर्ग मोक्ष का अभिलाषी शुद्ध चित्त, म लेश्या, अध्यवसाय में काल करे तो वह गर्भस्थ जीव मर क स्वर्ग में उत्पन्न होता है।

१२—अहो भगवान्! गर्भ में जीव किस तरह से रहता है क्या समचित्त रहता है या पसवाडे से रहता है या अधोमुख रह है? हे गौतम! गर्भ में जीव समचित्त भी रहता है, पसवाड़े भी रहता है, और अधोमुख भी रहता है। जब माता सोती तो गर्भ का जीव भी सोता है, जब माता जागती है तो गर्भ क जीव भी जागता है। माता सुखी रहे तो गर्भ का जीव भी सु रहता है और माता दुखी रहे तो गर्भ का जीव भी दुखी रह है। प्रसव के समय मस्तक से या पैरों से गर्भ के बाहर आता है जो जीव पापी होता है वह प्रसव के समय योनि द्वार पर टे होकर आता है, इससे मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। कदाचि

शुभ कर्म के उदय से जीवित रहे तो दुर्वर्ण, दुर्गन्ध, दुःरस, स्पर्श वाला और अनिष्ट कान्ति, अमनोज्ञ, हीनस्वर, दीनस्वर यावत् अनादेय वचन वाला और महान् दुःख में जीवन व्यतीत करने वाला होता है। जिस जीव ने पूर्व भव में अशुभ कर्म न बांधे हों किन्तु शुभ कर्म बांधे हों तो वह इष्ट प्रिय वल्लभ सुस्वर वाला यावत् आदेय वचन वाला और परम सुख में जीवन व्यतीत करने वाला होता है। इसलिए शास्त्रकार फरमाते हैं कि जीव को सुकृत करना चाहिए जिससे क्रमशः तीर्थङ्कर भगवान् की आज्ञा का आराधन करके मोक्ष के अक्षय सुखों को प्राप्त करे। फिर जन्म जरा मरण के दुःखों से व्याप्त इस संसार में आना ही न पड़े, जन्म लेना ही न पड़े और गर्भ के दुःखों को देखना ही न पड़े।

धर्म करो रे जीवड़ा, धर्म कियां सुख होय।
धर्म करंता जीवड़ा, दुखिया न दीठा कोय॥

श्री भगवतीजी सूत्र के दूसरे शतक के पांचवें उद्देशा में—

१३—अहो भगवान्! गर्भ की स्थिति कितनी है? हे गौतम! उदक (पानी) गर्भ की स्थिति जघन्य एक समय, उत्कृष्ट ६ मास की। तिर्यञ्चणी के गर्भ की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त की, उत्कृष्ट ८ वर्ष की। मनुष्यणी के गर्भ की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त की, उत्कृष्ट १२ वर्ष की। मनुष्यणी के गर्भ

की कायस्थिति जघन्य अन्तमुहूर्त की, उत्कृष्ट २४ वर्ष की ❀

१४—अहो भगवान् ! वीर्य कितने काल तक सचि
रहता है ? हे गौतम ! तिर्यञ्चणी की योनि में प्रविष्ट हु
तिर्यञ्च का वीर्य और मनुष्यणी की योनि में प्रविष्ट हुआ पु
का वीर्य जघन्य अन्तमुहूर्त और उत्कृष्ट १२ मुहूर्त तक सचि
रहता है, फिर विनष्ट हो जाता है।

१५—अहो भगवान् ! एक भव में एक जीव के कि
पिता हो सकते हैं ? हे गौतम ! जघन्य १-२-३, उत्
प्रत्येक (पृथक्त्व) सौ पिता हो सकते हैं।

१६—अहो भगवान् ! एक भव आसरी एक माता
कुक्षि में कितने जीव उत्पन्न हो सकते हैं ? हे गौतम ! जघ
१-२-३, उत्कृष्ट प्रत्येक (पृथक्त्व) लाख जीव उत्पन्न
सकते हैं।

१७—अहो भगवान् ! मैथुन का कैसा पाप है ? हे गौत
जैसे किसी भूंगली नाल में रुई भर कर गर्म लोह की सल
डाली जाय तो वह रुई जल कर भस्म हो जाती है, इस प्र
का पाप मैथुन सेवन करने वाले को लगता है।

❀ कोई पापी जीव माता के गर्भ में १२ वर्ष रहकर मर जावे
फिर उसी गर्भ में अथवा अन्य स्त्री के गर्भ में उत्पन्न होकर फिर १२
रह सकता है इस तरह २४ वर्ष तक रह सकता है।

तंदुल वेयालिय पइण्णा से—

१८—अहो भगवान्! पुत्र पुत्री कैसे उत्पन्न होते हैं? हे गौतम! माता की दक्षिण (दाहिनी) कुक्षि में पुत्र उत्पन्न होता है और बांई कुक्षि में पुत्री उत्पन्न होती है, बीच में नपुंसक उत्पन्न होता है। ओज (रुधिर) अल्प और वीर्य ज्यादा हो तो पुत्र उत्पन्न होता है। ओज (रुधिर) ज्यादा और वीर्य थोड़ा हो तो पुत्री उत्पन्न होती है। ओज (रुधिर) और वीर्य बराबर हों तो नपुंसक होता है। यदि स्त्री स्त्री को सेवन करे तो बिम्ब होता है।

सेवं भंते! सेवं भंते!!

(थोकड़ा नं० २०)

श्री भगवतीजी सूत्र के पहले शतक के आठवें उद्देशे में 'वीर्य' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान्! जीव के कितने भेद हैं? हे गौतम! जीव के तीन भेद हैं—एकान्त बाल जीव, पण्डित जीव, बाल पण्डित जीव।

२—अहो भगवान्! एकान्त बाल जीव, पण्डित जीव और बाल पण्डित जीव किस गति का आयुष्य बांध कर किस गति में जाते हैं? हे गौतम! एकान्त बालजीव (मिथ्यात्वी) चारों गति (नारकी, तिर्यञ्च, मनुष्य, देवता) का आयुष्य बांधता है और जिस गति का आयुष्य बांधता है, उसी गति में उत्पन्न होता है।

३—एकान्त पण्डित में आयुष्य बन्ध की भजना है अर्था
कदाचित् आयुष्य बन्ध करता है और कदाचित् नहीं करता
क्योंकि एकान्त पण्डित जीव की दो गति है—कोई जीव
अन्तक्रिया करके उसी भव में मोक्ष चला जाता है वह आयु
बन्ध नहीं करता है। जो अन्त क्रिया नहीं करता वह वैमानि
देव गति का आयुष्य बन्ध करके वैमानिक देवों में उत्प
होता है।

४—बाल पण्डित जीव सिर्फ वैमानिक देवगति का आ
ष्य बांध कर वैमानिक देवों में उत्पन्न होता है। नरक, तिर्य
मनुष्य इन तीन गतियों का आयुष्य नहीं बांधता है क्योंकि
तथारूप (साधु के आचार के शुद्ध पालने वाले) के श्रम
माहन के पास एक भी आर्य वचन (धर्म वचन) सुन
देशतः (आंशिक रूप से) त्याग पच्चक्खाण करता है
देशतः पाप से निवृत्त होता है। इसलिए उपरोक्त तीन गति
का आयुष्य नहीं बांधता है।

५—समुच्चय जीव में और मनुष्य में बाल, पण्डित
बाल पण्डित, ये तीनों बोल पाये जाते हैं। तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय
बाल और बाल पण्डित ये दो बोल पाये जाते हैं। शेष
दण्डकों में बाल, यह सिर्फ एक बोल पाया जाता है।

६—अल्पाबोध (अल्प बहुत्व)—समुच्चय जीव में
थोड़े पण्डित, उनसे बाल पण्डित असंख्यातगुणा, उनसे

...न्तगुणा। मनुष्य में सब से थोड़े पण्डित, उनसे बालपण्डित ...ख्यातगुणा, उनसे बाल असंख्यातगुणा। तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय में ...से थोड़े बालपण्डित, उनसे बाल असंख्यातगुणा।

७—अहो भगवान्! दो पुरुष समान (सरीखी) चमड़ी ...ले, समान उमर वाले, समान द्रव्य वाले, समान उपकरण ...शस्त्र) वाले, वे पुरुष परस्पर एक दूसरे के साथ संग्राम (लड़ाई) ... तो उनमें से एक जीतता है और एक हारता है, इसका क्या ...रण है? हे गौतम! जो पुरुष सवीर्य है वह जीतता है और ... पुरुष अवीर्य है वह हारता है। जिस पुरुष ने वीर्य को बाधा- ...री (बाधा पहुँचाने वाले) कर्म नहीं बांधे हैं, नहीं स्पर्शे नहीं किये हैं यावत् वे कर्म सन्मुख नहीं आये हैं, उदय भाव नहीं आये हैं किन्तु उपशमभाव में हैं, वह पुरुष जीतता है। ...पुरुष अवीर्य है, वीर्य रहित कर्म बांधे हैं, स्पर्शे हैं, किये हैं, ...वत् वे कर्म सन्मुख आये हैं, उदय भाव में आये हैं, उपशान्त ...हीं हैं वह पुरुष हारता है।

८—अहो भगवान्! जीव सवीर्य है या अवीर्य है? हे ...ौतम! जीव सवीर्य भी है और अवीर्य भी है। अहो भगवान्! ...सका क्या कारण? हे गौतम! जीव के दो भेद हैं—सिद्ध ...और संसारी। सिद्ध भगवान् तो अवीर्य हैं। संसारी के दो ...ेद—शैलेशी अवस्था को प्राप्त, और अशैलेशी अवस्था को ...ाप्त। शैलेशी अवस्था को प्राप्त तो चौदहवें गुणस्थान वाले हैं,

वे लब्धि वीर्य की अपेक्षा तो सवीर्य हैं और करण वी
अपेक्षा अवीर्य हैं। अशैलेशी अवस्था को प्राप्त तेरह गुण
वाले जीव हैं, वे लब्धिवीर्य की अपेक्षा तो सवीर्य हैं और
वीर्य की अपेक्षा जो जीव उत्थान, कर्म, बल, वीर्य, पु
पराक्रम, इन पांच शक्ति सहित हैं वे सवीर्य हैं और जो
शक्ति रहित हैं वे अवीर्य हैं। मनुष्य के दण्डक को छो
बाकी २३ दण्डक के जीव लब्धि वीर्य की अपेक्षा सर्व
और करण वीर्य की अपेक्षा उत्थान, कर्म आदि ५ शक्ति
तो सवीर्य हैं और ५ शक्ति रहित अवीर्य हैं। मनु
समुच्चय जीव की तरह कह देना किन्तु सिद्ध भगवान्
कथन नहीं करना।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० २१)

श्री भगवतीजी सूत्र के पहले शतक के न
उद्देशे में 'अगुरु लघु (हल्का भारी)' का थो
चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! जीव हल्का कैसे होता है और
कैसे होता है ? हे गौतम ! अठारह पापों से निवर्तने से
हल्का होता है और अठारह पापों में प्रवर्तने से जीव
होता है।

२—अहो भगवान् ! जीव कैसे संसार घटाता है और कैसे संसार बढ़ाता है ? हे गौतम ! अठारह पापों से निवर्तने से जीव संसार घटाता है और अठारह पापों में प्रवर्तने से जीव संसार बढ़ाता है।

३—अहो भगवान् ! किस कारण से जीव संसार को ह्रस्व करता है (संसार स्थिति घटाता है) और किस कारण से जीव संसार को दीर्घ करता है (संसार स्थिति बढ़ाता है) ? हे गौतम ! अठारह पापों से निवर्तने से जीव संसार को ह्रस्व करता है और अठारह पापों में प्रवर्तने से जीव संसार को दीर्घ करता है।

४—अहो भगवान् ! किस कारण से जीव संसार में परिभ्रमण करता है और किस कारण से जीव संसार सागर को तिरता है ? हे गौतम ! अठारह पापों में प्रवर्तने से जीव संसार में परिभ्रमण करता है और अठारह पापों से निवर्तने से जीव संसार सागर तिरता है।

*हलका होना, संसार घटाना, संसार ह्रस्व करना, संसार

---

*१८ पापों में प्रवृत्ति करने से जीव भारी (गुरु) होता है, कर्म अधिक करता है, संसार दीर्घ करता है, संसार में परिभ्रमण करता है। १८ पापों से निवर्तने से जीव हल्का होता है, कर्म थोड़े करता है। (जन्ममरण आसरी), संसार ह्रस्व करता है (काल आसरी) और संसार सागर से तिर जाता है।

तिरना ये चार बोल प्रशस्त हैं और भारी होना, संसार संसार दीर्घ करना और संसार परिभ्रमण करना ये चार [illegible] अप्रशस्त हैं।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० २२)

श्री भगवतीजी सूत्र के पहले शतक के [illegible] उद्देशे में 'गुरू, लघु, गुरुलघु, अगुरूलघु' का थोक[illegible] चलता है सो कहते हैं—

द्वार—(१) द्वीप १, (२) समुद्र १, (३) वासा[illegible] १, (४) दण्डक २४, (५) अस्तिकाय ५, (६) [illegible] १, (७) कर्म ८, (८) लेश्या १२, (६ द्रव्य लेश्या, [illegible] भाव लेश्या), (९) दृष्टि ३, (१०) दर्शन ४, (११ [illegible] ज्ञान ८ (५ ज्ञान, ३ अज्ञान), (१२) संज्ञा ४, ([illegible] शरीर ५, (१४) योग ३, (१५) उपयोग २, (१६) [illegible] १, (१७) प्रदेश १, (१८) पर्याय १, (१९) [illegible] १, (२०) अनागत काल १, (२१) सर्व काल १, ये [illegible] ८८ बोल हुए। इनमें ७ नरक, ७ घनोदधि, ७ घनवाय, [illegible] तनुवाय और ७ आकाशान्तर, ये ३५ बोल और मिला देने [illegible] कुल १२३ बोल होते हैं। इनमें गुरु, लघु, गुरुलघु, अगुरुल[illegible]

---

† निश्चय नय में भांगा पावे २ गुरुलघु, अगुरुलघु। व्यव[illegible] नय में भांगा पावे ४—गुरु, लघु, गुरुलघु, अगुरुलघु।

गुरु किसे कहते हैं? भारी को गुरु कहते हैं, जैसे—पत्[illegible]

न चार भांगों में से जो भांगा पाया जाता है सो कहते हैं—

सात नारकी के सात आकाशान्तर, ४ अस्तिकाय (धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय), १ समय, ८ कर्म, ६ भाव लेश्या, १ कार्मणशरीर, ३ दृष्टि, ४ दर्शन, ५ ज्ञान, ३ अज्ञान, ४ संज्ञा, २ योग (मनयोग, वचन योग), २ उपयोग, ३ काल, इन ५३ बोलों में भांगो पावे १ अगुरुलघु), ७ तनुवाय, ७ घनवाय, ७ घनोदधि, ७ पृथ्वी, १ सर्वद्वीप, १ सर्वसमुद्र, १ सर्व क्षेत्र, ४ शरीर (कार्मण शरीर को छोड़ कर) २४ दण्डक ‡ में जितने जितने अठस्पर्शी शरीर पावें उतने २ कहना), ६ द्रव्य लेश्या, १ काय योग, इन ६६ बोलों में भांगो पावे १—गुरुलघु। पुद्गलास्तिकाय, सर्व द्रव्य, सर्व प्रदेश, सर्व पर्याय इन ४ बोलों में भांगा पावे २ तीसरा—गुरुलघु, चौथा अगुरुलघु।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

लघु किसे कहते हैं? हल्के को लघु कहते हैं, जैसे—धूंआ। गुरुलघु किसे कहते हैं भारी और हल्के को गुरुलघु कहते हैं, जैसे—वायुकाय। अगुरुलघु किसे कहते हैं? जो न भारी हो और न हल्का हो उसे अगुरुलघु कहते हैं, जैसे—आकाश।

‡ २४ दण्डक में जीव और कार्मण शरीर में चौथा अगुरुलघु भांगा। कार्मण छोड़ कर बाकी २४ दण्डक में जितने जितने शरीर पावे उन सबमें तीसरा गुरुलघु भांगा पाता है।

(थोकड़ा नं० २३)

श्री भगवतीजी सूत्र के पहले शतक के नवे
उद्देशे में 'निर्ग्रन्थ की लघुता आदि' का थोक
चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! क्या श्रमण निर्ग्रन्थों के लिए लघु
अल्पइच्छा, अमूर्च्छा, अगृद्धिपना और अप्रतिबद्धता प्रशस्त है
हाँ, गौतम ! प्रशस्त है।

२—अहो भगवान् ! क्या श्रमण निर्ग्रन्थों के लिए अ
धीपना, अमानीपना, अमायीपना और अलोभीपना प्रशस्त
हाँ, गौतम ! प्रशस्त है।

३—अहो भगवान् ! क्या श्रमण निर्ग्रन्थ कंखाप्र
(मिथ्यात्व मोहनीय) क्षीण होने पर अन्तकर और च
शरीरी होता है ? अथवा पहले बहुत मोह वाला भी हो प
पीछे संवुडा (संवृत-संवर वाला) होकर काल करे तो सि
बुद्ध, मुक्त यावत् सब दुःखों का अन्त करने वाला होता
हाँ, गौतम ! होता है।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० २४)

श्री भगवतीजी सूत्र के पहले शतक के न
उद्देशे में 'आयुष्य बंध' का थोकड़ा चलता है
कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! अन्यतीर्थी कहते हैं कि एक जीव एक
[illegible]य में दो आयुष्य बांधता है—इस भव का और पर भव का।
[illegible]स समय इस भव का आयुष्य बांधता है, उस समय परभव
भी आयुष्य बांधता है और जिस समय पर भव का आयु-
[illegible] बांधता है, उस समय इस भव का भी आयुष्य बांधता है।
[illegible] भव का आयुष्य बांधने से पर भव का आयुष्य बांधता है
[illegible]र पर भव का आयुष्य बांधने से इस भव का आयुष्य बांधता
[illegible]। अहो भगवान् ! क्या अन्यतीर्थियों का यह कहना सत्य है?
[illegible] गौतम ! अन्यतीर्थियों का यह कहना मिथ्या है क्योंकि एक
[illegible]व एक समय में एक आयुष्य बांधता है—इस भव का या
[illegible]रभव का। जिस समय इस भव का आयुष्य बांधता है उस
[illegible]मय परभव का आयुष्य नहीं बांधता और जिस समय पर भव
[illegible]ा आयुष्य बांधता है, उस समय इस भव का आयुष्य नहीं
[illegible]ांधता। † इस भव का आयुष्य बांधने से परभव का आयुष्य
[illegible]हीं बांधता और पर भव का आयुष्य बांधने से इस भव का
[illegible]ायुष्य नहीं बांधता।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

---

† मनुष्य मनुष्यका आयुष्य बांधे वह इस भवका आयुष्य कहलाता
है। मनुष्य अन्य गति (नारकी, तिर्यंच, देवता) का आयुष्य बांधे वह
[illegible]र भवका आयुष्य कहलाता है।

(थोकड़ा नं० २५)

श्री भगवतीजी सूत्र के पहले शतक के न
उद्देशे में 'कालास्य वेषीपुत्र अनगार' का थोक
चलता है सो कहते हैं—

तेईसवें तीर्थङ्कर भगवान् पार्श्वनाथ स्वामी के संता
कालास्यवेषी अनगार थे। एक दिन वे श्रमण भगवान् मह
स्वामी के शिष्य स्थविर भगवन्तों के पास गये और बोले
हे स्थविरों ! आप सामायिक, सामायिक का अर्थ, पच्चक्ख
पच्चक्खाण का अर्थ, संयम, संयम का अर्थ, संवर, संवर
अर्थ, विवेक, विवेक का अर्थ, व्युत्सर्ग, व्युत्सर्ग का अर्थ
जानते हैं। यदि जानते हैं तो मुझे इनका अर्थ बताइये।

तब स्थविर भगवन्तों ने कहा कि–हे कालास्यवेषीपु
हमारी आत्मा ही सामायिक है, यही सामायिक का अर्थ
यावत् यही व्युत्सर्ग है और यही व्युत्सर्ग का अर्थ है

२ —कालास्यवेषीपुत्र ने कहा कि–हे स्थविर भगवन्
यदि आत्मा ही सामायिक है यावत् आत्मा ही व्युत्सर्ग
अर्थ है तो फिर क्रोध, मान, माया, लोभ का त्याग कर इ
निन्दा क्यों की जाती है ? स्थविर भगवन्तों ने कहा–हे क
स्यवेषीपुत्र ! संयम के लिए इनकी निन्दा की जाती है।

३—हे स्थविर भगवन्तों ! क्या गर्हा (निन्दा) संय
या अगर्हा संयम है ? हे कालास्यवेषीपुत्र ! गर्हा संयम

न्तु अगर्हा संयम नहीं। गर्हा सब दोषों का नाश करती है। ात्मा मिथ्यात्व को जान कर गर्हा द्वारा सब दोषों का नाश रती है। इस तरह हमारी आत्मा संयम में स्थापित है, संयम पुष्ट है, संयम में उपस्थित है।

स्थविर भगवन्तों के पास से यह अर्थ सुन कर कालास्य पीपुत्र संबुद्ध हुए (समझे)। स्थविर भगवन्तों को वन्दना मस्कार कर चार महाव्रत धर्म से पांच महाव्रत धर्म अङ्गीकार केया। बहुत वर्षों तक संयम पर्याय का पालन कर अन्त में वे सेद्ध, बुद्ध, मुक्त यावत् सर्व दुःख रहित हुए।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० २६)

श्री भगवतीजी सूत्र के पहले शतक के नवमें उद्देशे में 'अपच्चक्खाण और आधाकर्मादि' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान्! एक सेठ, एक दरिद्री, एक कृपण (कंजूस) और एक क्षत्रिय (राजा) क्या ये सब एक साथ अपच्चक्खाण की क्रिया करते हैं? हाँ, गौतम! करते हैं। अहो भगवान्! इसका क्या कारण? हे गौतम! अविरति के कारण वे सब अपच्चक्खाण की क्रिया करते हैं।

२—अहो भगवान्! आधाकर्मी आहारादि (आहार, वस्त्र, पात्र, मकान) को सेवन करने वाला श्रमण निर्ग्रन्थ क्या

बांधता है, क्या करता है, क्या चय करता है, क्या उपचय करता है? हे गौतम! आधाकर्मी आहारादि का सेवन करने वाला श्रमण निर्ग्रन्थ आयुष्य कर्म को छोड़ कर शिथिल बन्धन से बंधी हुई सात कर्म प्रकृतियों को मजबूत बन्धन में बांधता है यावत् बारम्बार संसारपरिभ्रमण करता है। अहो भगवान्! इसका क्या कारण? हे गौतम! आधाकर्मी आहारादि का सेवन करने वाला श्रमण निर्ग्रन्थ अपने धर्म का उल्लंघन कर जाता है। वह पृथ्वीकाय के जीवों से लेकर त्रसकाय तक के जीवों की घात की परवाह नहीं करता और जिन जीवों के शरीर का वह भक्षण करता है, उन जीवों पर वह अनुकम्पा नहीं करता।

२—अहो भगवान्! प्रासुक एषणीय आहारादि का सेवन करने वाला श्रमण निर्ग्रन्थ क्या बांधता है यावत् क्या उपचय करता है? हे गौतम! आयुष्य कर्म को छोड़ कर मजबूत बन्धन में बंधी हुई सात कर्म प्रकृतियों को शिथिल बन्धन वाली करता है' आदि सारा वर्णन संवुडा (संवृत) अनगार की तरह कह देना चाहिए। विशेषता यह है कि कदाचित् आयुष्य कर्म बांधता है और कदाचित् नहीं बांधता। इस प्रकार अन्त में संसार सागर को उल्लंघन कर जाता है। अहो भगवान्! इसका क्या कारण? हे गौतम! प्रासुक एषणीय आहारादि का सेवन करने वाला श्रमण निर्ग्रन्थ अपने धर्म का उल्लंघन नहीं करता। वह पृथ्वीकाय से लेकर त्रसकाय तक के जीवों की रक्षा करता है।

जीवों की अनुकम्पा करता है। इस कारण वह संसार
ार को तिर जाता है।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० २७)

श्री भगवतीजी सूत्र के पहले शतक के दसवें देशे में 'अन्यतीर्थियों के प्रश्नोत्तर' का थोकड़ा लता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! अन्यतीर्थी इस तरह कहते हैं कि लमाणे अचलिए जाव णिज्जरिज्जमाणे अणिज्जिएणे (चलता आ नहीं चला, निर्जराता हुआ नहीं निर्जरा) क्या यह बात त्य है ? हे गौतम ! यह बात मिथ्या है – 'चलमाणे चलिए व णिज्जरिज्जमाणे णिज्जिएणे, (चलता हुआ चला, निर्ज-ता हुआ निर्जरा) कहना चाहिए।

२—अहो भगवान् ! अन्यतीर्थी इस तरह कहते हैं कि ो परमाणु इकट्ठे नहीं मिलते क्योंकि उनमें स्नेहकाय (स्नि-पणा-चिकनापन) नहीं है। तीन परमाणु परस्पर मिलते हैं योंकि उनमें चिकनापन है। यदि तीन परमाणु के टुकड़े किये ंय तो दो टुकड़े भी हो सकते हैं और तीन टुकड़े भी हो कते हैं। यदि दो टुकड़े होवें तो एक तरफ डेढ़ और दूसरी रफ डेढ़ इस तरह होंगे और यदि तीन टुकड़े होंगे तो एक क परमाणु अलग अलग हो जायगा। इसी तरह चार परमाणु

आदि के विषय में भी जान लेना चाहिए। पांच परमाणु
स्पर इकट्ठे मिल कर जीव को दुखदायी होते हैं । वह
(कर्म) शाश्वत होता है, और सदा उपचय (बढना),
चय (घटना) को प्राप्त होता रहता है।

बोलने के पहले भाषा के पुद्गल भाषा हैं और बोलने
पीछे भी भाषा के पुद्गल भाषा हैं किन्तु बोलते समय भाषा
पुद्गल भाषा नहीं हैं। इसी तरह क्रिया करने से पहले
हेतु है, और क्रिया करने के बाद भी दुःख हेतु है किन्तु क्रि
करते समय दुःख हेतु नहीं है। क्रिया करने से दुःख रूप
है किन्तु नहीं करने से दुःख रूप है। अकृत दुःख
अस्पर्श दुःख है, अक्रियमाण कृत (बिना की हुई क्रि
दुःख है। क्रिया नहीं करने से जीव वेदना वेदते हैं।

अहो भगवान् ! क्या अन्यतीर्थियों का यह उपरोक्त कथ
सत्य है ? हे गौतम ! अन्यतीर्थियों का यह कथन मिथ्या
क्योंकि दो परमाणु परस्पर इकट्ठे मिलते हैं क्योंकि उनमें स्नेहका
(चिकनापन) है, इनके दो टुकड़े करने से एक एक परमा
अलग अलग होता है। तीन परमाणु इकट्ठे मिलते हैं, इनके
टुकड़े करने से एक तरफ एक परमाणु रहेगा और दूसरी तर
दो परमाणु (दो प्रदेशी स्कन्ध) रहेगा किन्तु डेढ डेढ परमा
इस तरह टुकड़े नहीं होते हैं। तीन टुकड़े करने से तीन परमा
अलग अलग हो जाते हैं। इसी तरह चार प्रदेशी स्कन्ध के

टुकड़े, तीन टुकड़े, चार टुकड़े हो जाते हैं। पांच परमाणु परस्पर इकट्ठे मिल कर स्कन्धरूप होते हैं, वह स्कन्ध अशाश्वत है, उपचय (वृद्धि), अपचय (हानि) को प्राप्त होता है। बोलने से पहले अभाषा है, बोलने के बाद भी अभाषा है, बोलते समय भाषा है। क्रिया करने से पहले दुःख हेतु नहीं है, और क्रिया करने के बाद भी दुःख हेतु नहीं है किन्तु क्रिया करते समय दुःख हेतु है। क्रिया करने से दुःख हेतु है, क्रिया नहीं करने से दुःख हेतु नहीं है। कृत (की हुई क्रिया) दुःख है, स्पर्श दुःख है। क्रियमाण कृत दुःख है। क्रिया करके प्राण *भूत जीव सत्त्व वेदना वेदते हैं।

३—अहो भगवान्! अन्यतीर्थी यह बात कहते हैं कि एक समय में जीव ईर्यापथिकी और साम्परायिकी ये दो क्रिया करता है। सो क्या यह बात सत्य है? हे गौतम! यह बात मिथ्या है क्योंकि जीव एक समय में एक ही क्रिया करता है (ईर्या-

---

* प्राण—बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय चौइन्द्रिय जीवों को 'प्राण' कहते हैं।

भूत—वनस्पति काय के जीवों को 'भूत' कहते हैं।

जीव—पंचेन्द्रिय को 'जीव' कहते हैं।

सत्त्व—पृथ्वीकाय, अप्काय, तेउकाय और वायुकाय के जीवों को 'सत्त्व' कहते हैं।

पथिकी अथवा साम्परायिकी दोनों में से एक क्रिया करता है
एक समय जीव दो क्रिया नहीं कर सकता है।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० २८)

श्री भगवतीजी सूत्र के दूसरे शतक के प
उद्देशे में 'उच्छ्वास निःश्वास' का थोकड़ा चलता
सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय,
पंचेन्द्रिय जीव आभ्यन्तर श्वासोच्छ्वास और बाहरी श्
च्छ्वास लेते हैं, इसको मैं जानता हूँ, देखता हूँ परन्तु
पृथ्वीकाय अप्काय, तेउकाय वायुकाय वनस्पतिकाय आभ
श्वासोच्छ्वास और बाहरी श्वासोच्छ्वास लेते हैं ? हाँ, गौ
लेते हैं। अहो भगवान् ! ये किसका श्वासोच्छ्वास लेते
हे गौतम ! द्रव्य, क्षेत्र काल भाव यावत् २८८ बोल का नि
घात आसरी नियमा (निश्चित रूप से) छह दिशा का,
घात आसरी कदाचित् तीन दिशा का, कदाचित् चार दिश
कदाचित् पांच दिशा का लेते हैं। सूत्र श्री पन्नवणाजी *के
इसवें आहार पद माफक कह देना चाहिए।

२—अहो भगवान् ! क्या वायुकाय, वायुकाय का श
च्छ्वास लेता है ? हाँ, गौतम ! लेता है। अहो भगवान् !

---

* श्री पन्नवणा सूत्र के थोकड़ों के तीसरे भाग के पृष्ठ ६४ पर है

युकाय अनेक लाखों वार मर कर वायुकाय में उत्पन्न होता ? हाँ, गौतम ! उत्पन्न होता है। अहो भगवान् ! क्या वायु-य स्पर्श से मरता है या बिना स्पर्श किये ही मरता है ? गौतम ! वायुकाय स्पर्श से मरता है (सोपक्रमी आयुष्य ासरी), किन्तु बिना स्पर्श किये नहीं मरता। अहो भगवान्! या वायुकाय स्वकाया के स्पर्श से मरता है अथवा परकाया स्पर्श से मरता है ? हे गौतम ! वायुकाय स्वकाया के शस्त्र स्पर्श से मरता है और परकाया के शस्त्र के स्पर्श से भी रता है❀। अहो भगवान् ! क्या वायुकाय शरीरसहित मरता अथवा शरीर रहित मरता है ? हे गौतम ! कथञ्चित् (किसी पेक्षा से) शरीर सहित मरता है और कथंचित् (किसी अपेक्षा) शरीर रहित मरता है। अहो भगवान् ! इसका क्या कारण ? हे गौतम ! वायुकाय में चार शरीर होते हैं—औदारिक, क्रिय, तैजस, कार्मण। औदारिक और वैक्रिय शरीर की पेक्षा शरीर रहित मरता है और तैजस कार्मण शरीर की अपेक्षा शरीर सहित मरता है।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० २६)

श्री भगवतीजी सूत्र के दूसरे शतक के पहले उद्देशे में 'मडाई निर्ग्रन्थ' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

❀ यह अर्थ टीका में है।

१—अहो भगवान् ! मडाई (प्रासुक भोजन करने वाला निर्ग्रन्थ, जिसने भव रोका नहीं, भव (संसार) का प्रपंच रोका नहीं, संसार घटाया नहीं, संसार में वेदने योग्य कर्म क्षय नहीं, संसार विच्छेद किया नहीं, संसार में वेदने योग्य कर्म विच्छेद किये नहीं, प्रयोजन सिद्ध किया नहीं, कार्य पूर्ण किया नहीं, ऐसा मडाई (प्रासुक भोजी) निर्ग्रन्थ मर कर क्या फिर मनुष्य भव आदि को प्राप्त करता है ? हाँ, गौतम ! प्राप्त करता है।

२—अहो भगवान् ! मडाई निर्ग्रन्थ के जीव को क्या कहना चाहिए ? हे गौतम ! उसको प्राण, भूत जीव, सत्त्व, विज्ञ, वेद कहना चाहिए। अहो भगवान् ! इसका क्या कारण है? हे गौतम ! मडाई निर्ग्रन्थ बाह्य आभ्यन्तर श्वासोच्छ्वास लेता है इसलिए वह 'प्राण' कहलाता है। वह भूतकाल में था, वर्तमान काल में है और भविष्य काल में रहेगा इसलिए 'भूत' कहलाता है। वह जीता है, जीवत्व और आयुष्य कर्म का अनुभव करता है इसलिए जीव कहलाता है। शुभाशुभ कर्मों से संयुक्त है इसलिए 'सत्त्व' कहलाता है। तीखे, कड़वे, कषैले खट्टे और मीठे रसों को जानता है इसलिए 'विज्ञ' कहलाता है। सुख दुःख को भोगता है इसलिए 'वेद' कहलाता है।

३—अहो भगवान् ! मडाई निर्ग्रन्थ जिसने भव रोक दिया, भव के प्रपंच को रोक दिया, संसार घटा दिया, संसार

ेदने योग्य कर्म घटा दिये, संसार विच्छेद कर दिया, संसार
ेदने योग्य कर्म विच्छेद कर दिये, प्रयोजन सिद्ध कर लिया,
र्य पूर्ण कर लिया, ऐसा मडाई निर्ग्रन्थ क्या फिर मनुष्यभव
दि भावों को प्राप्त करता है ? हे गौतम ! ऐसा मडाई निर्ग्रन्थ
ुष्य भव आदि भावों को प्राप्त नहीं करता है।

४—अहो भगवान् ! ऐसे मडाई निर्ग्रन्थ के जीव को क्या
ना चाहिए ? हे गौतम ! उसे 'सिद्ध' कहना, 'बुद्ध' कहना,
क्त' कहना, 'पारगत (पार पहुंचा हुआ)' कहना, परंपरा-
 (अनुक्रम से एक पगतिये से दूसरे और दूसरे से तीसरे,
 तरह संसार के पार पहुँचा हुआ) कहना। इस प्रकार उसे
द्ध, बुद्ध, मुक्त, परिनिर्वृत (परिणिव्वुडे), अन्तकृत (अंतकडे)
र सर्व दुःखों से रहित कहना चाहिए।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ३०)

श्री भगवतीजी सूत्र के दूसरे शतक के पहले देशे में 'खंदकजी' का थोकड़ा चलता है सो हते हैं—

सावत्थी (श्रावस्ती) नगरी में गर्दभाली परिव्राजक
तापस) का शिष्य स्कन्दक नाम का परिव्राजक रहता था वह
ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्वणवेद ये ४ वेद, पांचवां इति-

हास, छठा निघंटु नाम का कोष तथा वेद के छह अंगों* का जानकार स्वमत के शास्त्रों में प्रवीण, ‡ सारए वारए धारए पारए था।

श्रमण भगवान् महावीर स्वामी का श्रावक पिङ्गल नामक नियंठा स्कन्दकजी के पास आया। उसने स्कन्दकजी से प्रश्न पूछे—(१) हे स्कन्दक! क्या लोक अन्त सहित है या अन्त रहित है? (२) जीव अन्त सहित है या अन्त रहित है? (३) सिद्धि (सिद्ध शिला) अन्त सहित है या अन्त रहित है? (४) सिद्ध भगवान् अन्त सहित है या अन्त रहित है? (५) किस मरण से मरता हुआ जीव संसार घटाता है और किस मरण से मरता हुआ जीव संसार बढ़ाता है?

* शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द शास्त्र, ज्योतिष शास्त्र (गणित शास्त्र)।

‡ सारए—(सारक)—शिष्यों को पढ़ाने वाला। अथवा स्मारक यानी भूले हुए पाठ को याद कराने वाला।

वारए—(वारक)—यदि कोई शिष्य अशुद्ध पाठ बोलता हो तो उसे रोकने वाला।

धारए—(धारक)—पढ़ी हुई विद्या को सम्यक् प्रकार से धारण करने वाला। अथवा अपने पढ़ाये हुए शिष्यों को सम्यक् प्रकार से संयम में प्रवृत्ति कराने वाला।

पारए—(पारक)—शास्त्रों का पारगामी, शास्त्रों में निपुण।

पिंगल नियंठा ने ये प्रश्न स्कन्दकजी से एक बार, दो बार, तीन बार पूछे किन्तु स्कन्दकजी कुछ भी जवाब दे सके नहीं, वे मौन रहे। उनके मन में शंका उत्पन्न हुई कि—इन प्रश्नों का उत्तर यह है अथवा दूसरा है। उनके मन में कांक्षा उत्पन्न हुई कि—मैं इन प्रश्नों का उत्तर कैसे दूँ? मुझे इन प्रश्नों का उत्तर कैसे आवे? उनके मनमें विचिकित्सा उत्पन्न हुई कि—मैं जो उत्तर दूं उससे प्रश्न करने वाले को संतोष होगा या नहीं। उनकी बुद्धि में भेद उत्पन्न हुआ कि—अब मैं क्या करूँ? उनके मनमें क्लेश (खिन्नता) उत्पन्न हुआ कि—इस विषय में मैं कुछ भी नहीं जानता हूँ। जब स्कन्दकजी कुछ भी उत्तर नहीं दे सके तब पिंगल नियंठा वहाँ से चला गया।

इसके बाद किसी समय श्रावस्ती नगरी में जहाँ तीन मार्ग, चार मार्ग और बहुत मार्ग बहते हैं, वहाँ लोग परस्पर बातें करते हैं कि श्रमण भगवान् महावीर स्वामी कयंगला (कृताङ्गला) नगरी के बाहर छत्रपलाश उद्यान में पधारे हैं। लोग भगवान् को वन्दन करने के लिये जाने लगे। यह बात स्कन्दकजी ने भी सुनी। सुनकर मन में विचार किया कि मैं भगवान् के पास जाकर अपने मन की शंका निकालूँ, शंका का समाधान करूँ। ऐसा विचार कर अपने स्थान पर गये और तापस सम्बन्धी भण्डोपकरण लेकर भगवान् महावीर स्वामी के पास जाने के लिए रवाना हुए। उस समय भगवान् महावीर स्वामी ने

गौतम स्वामी से कहा कि हे गौतम ! आज तूं अपने पूर्वसा
को देखेगा । तब गौतम स्वामी ने पूछा कि अहो भगवान् !
आज किसको देखूँगा ? भगवान् ने फरमाया कि हे गौतम
तूं स्कन्दक नाम के परिव्राजक को देखेगा । तब गौतम स्वा
ने पूछा कि अहो भगवान् ! वह किस लिए आता है ?
गौतम ! पिंगल नामक नियंठा ने उससे पांच प्रश्न (लो
अन्त सहित है या अन्त रहित है ?, इत्यादि) पूछे । उन
जवाब वह नहीं दे सका । मन में शंका कांचा आदि उत्प
हुई । इसलिए उन प्रश्नों का उत्तर पूछने के लिए वह मेरे पा
आता है । फिर गौतम स्वामी ने पूछा कि अहो भगवान् ! क
स्कन्दक आपके पास दीक्षा लेगा ? हाँ, गौतम ! दीक्षा लेगा
अहो भगवान् ! स्कन्दक कितनी देर में आवेगा ? हे गौतम
अभी जल्दी ही आवेगा ।

इसके बाद थोड़ी ही देर में गौतम स्वामी ने स्कन्दक
को आते हुए देखा । देख कर गौतम स्वामी उठ कर सा
गये और बोले—हे स्कन्दकजी ! तुम्हारा आना अच्छा हु
(स्वागत है) । पिंगल नामके नियंठा ने तुम से ५ प्रश्न प
जिनका जवाब तुम नहीं दे सके । उनका जवाब पूछने के लि
भगवान् के पास आये हो ? हे स्कन्दकजी ! क्या यह बात सच
है ? हाँ, गौतम ! यह बात सच्ची है । तब स्कन्दकजी ने गौ
स्वामी से पूछा कि हे गौतम ! इस तरह के ज्ञानी पुरुष क

हैं ? जिन्होंने मेरे मन की गुप्त बात आपको कह दी जिससे आप मेरे मन की गुप्त बात जानते हैं ? हे स्कन्दकजी ! मेरे धर्माचार्य धर्मोपदेशक श्रमण भगवान् महावीर स्वामी अरिहन्त हैं, जिन हैं, केवली हैं, तीनों काल की बात को जानने वाले हैं, सर्वज्ञ हैं, सर्व दर्शी हैं, उन्होंने तुम्हारे मन की गुप्त बात मेरे से कही है, इसलिए मैं जानता हूँ। फिर गौतम स्वामी और स्कन्दकजी श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास आये । भगवान् को देखकर स्कन्दकजी हर्षित हुए, आनन्दित हुए। भगवान् को तीन बार प्रदक्षिणा कर वन्दना नमस्कार कर पर्युपासना करने लगे। तब भगवान् ने स्कन्दकजी से कहा कि हे स्कन्दक ! पिंगल नाम के नियंठा ने तुमसे पांच प्रश्न पूछे, जिनका जवाब तुम नहीं दे सके। उनका जवाब पूछने के लिए मेरे पास आये हो। क्या यह बात सच्ची है ? हाँ, भगवान् ! सच्ची है। (१) हे स्कन्दक ! मैंने लोक चार प्रकार का बतलाया है— द्रव्यलोक, क्षेत्रलोक, काललोक, भावलोक। द्रव्य से—लोक एक है, अन्तसहित है। क्षेत्र से—लोक असंख्यात कोडाकोडी योजन का लम्बा चौड़ा है, अन्तसहित है। काल से—लोक भूत काल में था, वर्तमान काल में है और भविष्य काल में रहेगा लोक ध्रुव है, नियत, शाश्वत, अक्षय, अव्यय, अवस्थित और नित्य है, अन्तरहित है। भाव से अनन्त वर्ण पर्याय रूप है, अनन्त गन्ध, रस, स्पर्श पर्याय रूप है, अनन्त गुरुलघु पर्यायरूप है, अनन्त अगुरुलघु पर्याय रूप है, अन्त रहित है।

(२) जीव के चार भेद हैं—द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव। द्रव्य से—जीव एक है, अन्त सहित है। क्षेत्र से—जीव असंख्यात प्रदेश वाला है, असंख्यात आकाश प्रदेश अवगाहन किये हैं, अन्तसहित है। काल से—जीव नित्य है, अन्त रहित है। भाव से—जीव के अनन्त ज्ञान पर्याय हैं, अनन्त दर्शन पर्याय हैं, अनन्त चारित्र पर्याय हैं, अनन्त अगुरुलघु पर्याय हैं, अन्त रहित है।

(३) सिद्धि (सिद्ध शिला) के ४ भेद हैं—द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव। द्रव्य से—सिद्धि एक है, अन्तसहित है। क्षेत्र से–सिद्धि ४५ लाख योजन की लम्बी चौड़ी है, १४२ ३० २४९ योजन झाझेरी परिधि है, अन्तसहित है। काल से—सिद्धि नित्य है, अन्त रहित है। भाव से—सिद्धि अनन्त वर्ण पर्याय वाली है अनन्त गन्ध, रस, स्पर्श पर्याय वाली है। अनन्त गुरुलघु पर्याय रूप है, अनन्त अगुरुलघु पर्याय रूप है, अन्त रहित है (द्रव्यसिद्धि क्षेत्रसिद्धि अन्त वाली है और कालसिद्धि और भावसिद्धि अन्तरहित है), सिद्धि अन्त सहित भी है और अन्त रहित भी है।

(४) सिद्ध के ४ भेद हैं—द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव द्रव्य से—सिद्ध एक है, अन्त सहित है। क्षेत्र से—सिद्ध असंख्यात प्रदेश वाले हैं, असंख्यात आकाशप्रदेश अवगाहन किये हैं, अन्त सहित हैं। काल से—सिद्ध आदि सहित हैं, अन

रहित हैं। भाव से—सिद्ध अनन्त ज्ञान पर्याय अनन्त दर्शन पर्याय, अनन्त चारित्र पर्याय वाले हैं यावत् अनन्त अगुरुलघु पर्याय वाले हैं, अन्त रहित हैं।

(५) अहो भगवान्! कौन से मरण से मरता हुआ जीव संसार बढ़ाता है और कौन से मरण से मरता हुआ जीव संसार घटाता है? हे स्कन्दक! मरण दो प्रकार का है-बाल मरण, पण्डित मरण। बाल मरण के १२ भेद हैं—१-वलनमरण-व्रत से भ्रष्ट होकर तड़फता हुआ मरे। २-वसट्टमरण (वशार्त्तमरण) पतंग की तरह इन्द्रियों के वशीभूत होकर मरे। ३-अंतोसल्ल-मरण (अन्तः शल्य मरण)-लगे हुए दोषों की आलोचना किये बिना मरे। ४-तद्भवमरण-जिस गति से मरे वापिस उसी गति में उत्पन्न होने की चिन्तवना करता हुआ मरे, जैसे—मनुष्यगति से मर कर वापिस मनुष्यगति में उत्पन्न होने की चिन्तवना करता हुआ मरे। ५-गिरिपतन मरण—पर्वत से पड़ कर मरे। ६-तरुपतन मरण—वृक्ष पर से गिर कर मरे। ७-जलप्रवेश मरण—पानी में डूब कर मरे। ८-ज्वलन प्रवेश मरण—अग्नि में जल कर मरे। ९-विष भक्षणमरण—जहर खाकर मरे। १०-सत्थोवाडण (शस्त्रावपाटन मरण)-शस्त्र से मरे। ११-वेहानस मरण—गले में फांसी लगा कर मरे। १२—गिद्धपिट्ठ (गृध्रपृष्ठ) मरण—मरे हुए जानवर के कलेवर में प्रवेश करके मरे इन बारह प्रकार के बालमरण से

मरता हुआ जीव नारकी के अनन्तभव बढ़ाता है, तिर्यञ्च के अनन्त भव बढ़ाता है, मनुष्य के अनन्त भव बढ़ाता है, देवता के अनन्त भव बढ़ाता है, वह अनन्त काल तक संसार में परिभ्रमण करता है।

पण्डित मरण के २ भेद हैं—पाओवगमण—पादपोपगमन (वृक्ष की तरह स्थिर रह कर मरना), और भक्त प्रत्याख्यान (भोजन पानी का त्याग करके मरना)। इन दोनों के दो दो भेद हैं—* निहारी और अनिहारी। पण्डित मरण से मरता हुआ जीव नारकी के अनन्त भव घटाता है यावत् भवभ्रमण घटाता है, अल्प संसारी होता है।

भगवान् के उपरोक्त वचनों को सुनकर स्कन्दकजी ने भगवान् के पास संयम ग्रहण किया। फिर भिक्षु की १२ पडिमा धारण की, गुणरत्न संवत्सर तप किया, और भी अनेक प्रकार की तपस्या करके एक मास का संथारा किया। यहाँ का आयुष्

---

* निहारी – जो संथारा ग्राम नगर बस्ती में किया जाय जिससे मृतकलेवर को बाहर ले जाकर अग्निदाहादि संस्कार करना पड़े उसे निहारी कहते हैं।

अनिहारी—जो संथारा ग्राम नगर बस्ती से बाहर जंगल आदि एकान्त स्थान में किया जाय जिससे मृतकलेवर को बाहर लेजाने का ... न रहे उसे अनिहारी कहते हैं।

पूर्ण कर बारहवें देवलोक में उत्पन्न हुए। वहाँ से चव कर महाविदेह क्षेत्र में सिद्ध, बुद्ध, मुक्त होवेंगे यावत् सर्व दुःखों का अन्त कर मोक्ष जावेंगे।

सेवं भंते! सेवं भंते!!

(थोकड़ा नं० ३१)

श्री भगवतीजी सूत्र के दूसरे शतक के पांचवें उद्देशे में 'सवणे णाणे' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

सवणे णाणे विरणाणे, पच्चक्खाणे य संजमे।
अरणहये तवे चेव, वोदाणे अकिरिया सिद्धी ॥१॥

१—अहो भगवान्! तथारूप के श्रमण माहण की पर्युपासना करने वाले पुरुष को उसकी पर्युपासना (सेवा) का क्या फल मिलता है? हे गौतम! श्रवण फल मिलता है अर्थात् सत्शास्त्रों का सुनना मिलता है।

२—अहो भगवान्! श्रवण का क्या फल है? हे गौतम! श्रवण का फल ज्ञान (जाणपणा) है।

३—अहो भगवान्! ज्ञान का क्या फल है? हे गौतम! ज्ञान का फल विज्ञान (विवेचन पूर्वक ज्ञान) है।

४—अहो भगवान्! विज्ञान का क्या फल है? हे गौतम! विज्ञान का फल पच्चक्खाण है।

५—अहो भगवान् ! पच्चक्खाण का क्या फल है ? हे गौतम ! पच्चक्खाण का फल संयम है ।

६—अहो भगवान् ! संयम का क्या फल है ? हे गौतम ! संयम का फल अनाश्रव (आश्रव रहित होना) है ।

७—अहो भगवान् ! अनाश्रव का क्या फल है ? हे गौतम ! अनाश्रव का फल तप है ।

८—अहो भगवान् ! तप का क्या फल है ? हे गौतम ! तप का फल वोदाण (कर्मों का नाश) है ।

९—अहो भगवान् ! वोदाण (कर्म नाश) का क्या फल है ? हे गौतम ! वोदाण का फल अक्रिया (निष्क्रियता-क्रिया रहित होना) है

१०—अहो भगवान् ! अक्रिया का क्या फल है ? हे गौतम ! अक्रिया का फल सिद्धि है ।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ३२)

श्री भगवतीजी सूत्र के दूसरे शतक के दसवें उद्देशे में 'पंचास्तिकाय' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

अहो भगवान् ! अस्तिकाय के कितने भेद हैं ? हे गौतम ! अस्तिकाय के ५ भेद हैं-धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय ।

१-अहो भगवान्! धर्मास्तिकाय में कितने वर्ण, कितने गन्ध, कितने रस और कितने स्पर्श पाये जाते हैं? हे गौतम! धर्मास्तिकाय में वर्ण नहीं, गन्ध नहीं, रस नहीं, स्पर्श नहीं, अरूपी अजीव शाश्वत, अवस्थित लोक द्रव्य है। धर्मास्तिकाय के ५ भेद हैं—द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, गुण। द्रव्य से-धर्मास्तिकाय एक द्रव्य है। क्षेत्र से-लोक प्रमाण है। काल से-आदि अन्त रहित है। भाव से-अरूपी, वर्ण नहीं, गन्ध नहीं, रस नहीं, स्पर्श नहीं। गुण से-चलण (गति) गुण वाला है, पानी में मछली का दृष्टान्त।

२—अहो भगवान्! अधर्मास्तिकाय में कितने वर्ण, कितने गन्ध, कितने रस और कितने स्पर्श पाये जाते हैं? हे गौतम! अधर्मास्तिकाय में वर्ण नहीं, गन्ध नहीं, रस नहीं, स्पर्श नहीं, अरूपी, अजीव, शाश्वत, अवस्थित लोक द्रव्य है। अधर्मास्तिकाय के ५ भेद हैं-द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, गुण। द्रव्य से—अधर्मास्तिकाय एक द्रव्य है। क्षेत्र से—लोक प्रमाण है। काल से—आदि अन्त रहित है। भाव से—अरूपी है, वर्ण नहीं, गन्ध नहीं, रस नहीं, स्पर्श नहीं। गुण से—स्थिर गुण है, थके हुए पथिक को छाया का दृष्टान्त।

३—अहो भगवान्! आकाशास्तिकाय में कितने वर्ण, कितने गन्ध, कितने रस और कितने स्पर्श पाये जाते हैं? हे गौतम! वर्ण नहीं, गन्ध नहीं, रस नहीं, स्पर्श नहीं, अरूपी

अजीव शाश्वत अवस्थित लोकालोक द्रव्य। इसके ५ भेद हैं- द्रव्य, क्षेत्र, काल भाव, गुण। द्रव्य से एक द्रव्य। क्षेत्र से लोकालोक प्रमाण। काल से आदि अन्त रहित। भाव से-अरूपी, वर्ण नहीं, गन्ध नहीं, रस नहीं, स्पर्श नहीं। गुण से-अवगाहन गुण, भींतमें खूंटी का दृष्टान्त, दूध में पतासे का दृष्टान्त, आकाश में विकास का गुण।

४—अहो भगवान्! जीवास्तिकाय में कितने वर्ण, कितने गन्ध, कितने रस और कितने स्पर्श पाये जाते हैं? हे गौतम! वर्ण नहीं, गन्ध नहीं, रस नहीं, स्पर्श नहीं, अरूपी, जीव, शाश्वत अवस्थित लोक द्रव्य। इसके ५ भेद हैं-द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव गुण। द्रव्य से अनन्त जीव द्रव्य। क्षेत्र से लोक प्रमाण। काल से आदि अन्त रहित। भाव से अरूपी, वर्ण नहीं, गन्ध नहीं, रस नहीं, स्पर्श नहीं। गुण से उपयोग गुण, चेतना लक्षण, चन्द्रमा की कला का दृष्टान्त।

५—अहो भगवान्! पुद्गलास्तिकाय में कितने वर्ण, कितने गन्ध, कितने रस और कितने स्पर्श पाये जाते हैं? हे गौतम! पुद्गलास्तिकाय में पांच वर्ण, दो गन्ध, पांच रस, आठ स्पर्श पाये जाते हैं। रूपी अजीव शाश्वत अवस्थित लोक द्रव्य। इसके ५ भेद हैं-द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, गुण। द्रव्य से अनन्त पुद्गल द्रव्य। क्षेत्र से-लोक प्रमाण। काल से आदि अन्त रहित। भाव से-रूपी, वर्ण है, गन्ध है, रस है, स्पर्श है। गुण से-[illegible] गुण, मिले विखरे गले, बादलों का दृष्टान्त।

६–अहो भगवान्! क्या धर्मास्तिकाय के एक प्रदेश को धर्मास्तिकाय कहना? २ प्रदेश, ३ प्रदेश यावत् १० प्रदेश, संख्यात प्रदेश, असंख्यात प्रदेशों में एक प्रदेश कम हो. उनको धर्मास्तिकाय कहना? हे गौतम णो इणट्ठे समट्ठे (उनको धर्मास्तिकाय नहीं कहना)। अहो भगवान्! इसका क्या कारण? हे गौतम! क्या खांडे चक्र को चक्र कहना कि पूरे चक्र को चक्र कहना? अहो भगवान्! खांडे चक्र को चक्र नहीं कहना किन्तु पूरे चक्र को चक्र कहना। इसी तरह छत्र, चमर, वस्त्र, दण्ड, शस्त्र, मोदक (लड्डू) के लिये कह देना। धर्मास्तिकाय के पूरे प्रदेश हों तो धर्मास्तिकाय कहना। जिस तरह धर्मास्तिकाय का कहा उसी तरह ७ (सातवां द्वार) अधर्मास्तिकाय का कह देना। धर्मास्तिकाय की तरह ही (आठवां द्वार) आकाशास्तिकाय का कह देना किन्तु इतनी विशेषता है कि आकाशास्तिकाय के अनन्त प्रदेश होते हैं उनमें से एक भी प्रदेश कम हो उसको आकाशास्तिकाय नहीं कहना। जिस तरह आकाशास्तिकाय का कहा उसी तरह (नववां द्वार) जीवास्तिकाय और १० (दसवां द्वार) पुद्गलास्तिकाय का कह देना।

११–अहो भगवान्! जीव अपना जीवपना कैसे बतलाता है? हे गौतम! जीव उत्थान कर्म बल वीर्य पुरुषकार पराक्रम सहित है। मतिज्ञान के अनन्त पर्याय, श्रुत ज्ञान के अनन्त पर्याय, अवधिज्ञान के अनन्त पर्याय, मनः पर्याय ज्ञान के अनन्त पर्याय, केवल ज्ञान के अनन्त पर्याय, मति अज्ञान के अनन्त

धर्मास्तिकाय को कितना स्पर्शा है ? हे गौतम ! धर्मास्तिकाय संख्यातवें भाग को स्पर्शा है । अहो भगवान् ! जम्बूद्वीप आदि असंख्यात द्वीप, लवणसमुद्र आदि असंख्यात समुद्र धर्मास्तिकाय को कितना स्पर्शा है ? हे गौतम ! धर्मास्तिकाय के असंख्यात भाग को स्पर्शा है । अहो भगवान् ! १२ देवलोक, ९ ग्रैवेयक ५ अनुत्तर विमान, इसिपब्भारा पृथ्वी (सिद्ध सिला) धर्मास्तिकाय को कितना स्पर्शा है ! हे गौतम ! धर्मास्तिकाय के असंख्यातवें भाग को स्पर्शा है ।

जिस तरह धर्मास्तिकाय से ❀६७ बोल कहे उसी तरह अधर्मास्तिकाय से ६७ बोल और लोकाकाश से ६७ बोल कह देने चाहिए । ये ६७+६७+६७=२०१ और १७ सइन्न के सब मिल कर २१८ बोल हुए ।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

❀ १ अधोलोक, २ ऊर्ध्वलोक, ३ तिर्च्छालोक ये ३ लोक के ३ बोल ७ पृथ्वी ७ घनोदधि, ७ घनवाय, ७ तनुवाय, ७ नारकी के आकाश आंतरे, १ द्वीप का, १ समुद्र का, १२ देवलोक, ९ ग्रैवेयक, ५ अनुत्तर १ सिद्धशिला ये सब मिलाकर ६७ बोल हुए।

श्री सेठिया जैन ग्रन्थमाला पुष्प नं० १३१

श्री भगवती सूत्र के थोकड़ों

का

द्वितीय भाग

(तीसरे से सातवें शतक तक)

अनुवादक—

पं० घेवरचन्द्र बाँठिया 'वीरपुत्र'

प्रकाशकः—

श्री अगरचन्द भैरोदान सेठिया
जैन पारमार्थिक संस्था
बीकानेर

प्रथमावृत्ति १००० | रक्षाबन्धन वीर सं० २४८२ विक्रम सं० २०१३ | मूल्य ॥=)

शुद्धि-पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	६	अदि	आदि
३	१	नामि	नाभि
३	१६	तायतीसग	तायत्तीसग
१२	२१	नीच	नीचा
१८	१	वभार	वैभार
१८	१	पर्वत	पर्वत
२०	१५	तायतिसक	तायत्तीसग
३३	२२	हुए	हुए
४६	१०	असंस्यातवें	असंख्यातवे
४८	३	अवड्ढिया	अवढ्ढिया
४६	४	अवड्ढिया	अवढ्ढिया
५३	६	निर्वल	निर्बल
५५	१	दुवर्णादि	दुर्वर्णादि
६२	२	वेदनाय	वेदनीय
६३	११	सूज्म	सूक्ष्म
६८	१६	कपयी	कषायी
७१	१०	जाव	जीव
७८	१८	भतभीत	भयभीत
७६	१३	वाह्य	बाह्य
६०	४	व	
६६	१८	क्रिये	कि ये
१०१	६	अपचवरवाणी	अपञ्चक्खाणी
११३	२१	चे	के
११७	२	?	१

अनुक्रमणिका

(थोकड़ा नं० ३३)

श्री भगवतीजी सूत्र के तीसरे शतक के पहले उद्देशे में 'देव देवी वैक्रिय करने बाबत श्री अग्निभूतिजी वायुभूतिजी की पूच्छा (पृच्छा)' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं--

१—देवतामें ५ बोल पाते हैं—*इन्द्र, सामानिक, तायत्तीसग (त्रायस्त्रिंशक), लोकपाल, अग्रमहिषी देवियाँ। वाणव्यन्तर

---

*(१) इन्द्र—देवों के स्वामी को इन्द्र कहते हैं।

(२) सामानिक—जो ऋद्धि आदि में इन्द्र के समान होते हैं किन्तु जिनमें सिर्फ इन्द्रपना नहीं होता, उन्हें सामानिक कहते हैं।

(३) तायत्तीसग—(त्रायस्त्रिंशक) जो देव मन्त्री और पुरोहित का काम करते हैं वे तायत्तीसग कहलाते हैं।

(४) लोकपाल—जो देव सीमा की रक्षा करते हैं, वे लोकपाल कहलाते हैं।

(५) अग्रमहिषी देवी—इन्द्र की पटरानी अग्रमहिषी देवी कहलाती है।

और ज्योतिपी देवों में तायत्तीसग और लोकपाल नहीं होते
शेप तीन बोल (इन्द्र, सामानिक, अग्रमहिपी) होते हैं
ये सब ऋद्धि परिवार से सहित होते हैं। आवश्यकता पड़ने
वैक्रिय करके देवता देवी के रूप बना सकते हैं।

२—अहो भगवान्! वैक्रिय करके कितना क्षेत्र भरने
इनमें शक्ति है? हे गोतम*(अग्निभूति)! ‡जुवती जुवाण

---

*१ इन्द्रभूति २ अग्निभूति ३ वायुभूति ये तीनों सगे भाई
गौतम गोत्री होने से तीनों को गौतम करके बोलागा है।

‡शास्त्र में यह पाठ है—

से जहाणामए जुवई जुवाणे हत्थेणं हत्थे गिण्हेज्जा, चक्क
वा णाभी अरगा उत्ता सिया।

अर्थ—जैसे जवान पुरुष काम के वशीभूत होकर जवान स्त्री
हाथ की मजबूती से अन्तर रहित पकड़ता है, जैसे गाड़ी के प
की धुरी आराओं से युक्त होती है इसी तरह देवता और देवी वै
रूप करके जम्बूद्वीप को टसाठस भर सकते हैं।

कोई आचार्य उपरोक्त पाठ का अर्थ इस तरह से करते हैं—

जहाँ बहुत से लोग इकट्ठे होते हैं ऐसे मेले में जवान पुरुष ज
स्त्री का हाथ पकड़ कर चलता है। इस तरह से जवान पुरुष के
चलती हुई भी जवान स्त्री पुरुष से अलग दिखाई देती है। इसी त
वैक्रिय किये हुए रूप मूल रूप से (वैक्रिय करने वाले से) संयुक्त
हुए भी अलग अलग दिखाई देते हैं।

जैसे बहुत से आराओं से ... होती
में पोलार बिलकुल नहीं ... से

ृष्टान्त से तथा आरा नाभि के दृष्टान्त से दक्षिण दिशा के
चमरेन्द्रजी सम्पूर्ण जम्बूद्वीप को भर देते हैं। तिरछा असंख्याता
द्वीप समुद्र भरने की शक्ति है (विषय आसरी), किन्तु कभी
भरे नहीं, भरते नहीं और भरेंगे नहीं।

उत्तर दिशा के बलीन्द्रजी जम्बूद्वीप झाझेरा (कुछ अधिक)
जितना क्षेत्र भर देते हैं। तिरछा असंख्याता द्वीप समुद्र भरने की
शक्ति है (विषय आसरी), किन्तु कभी भरे नहीं, भरते नहीं
और भरेंगे नहीं।

जिस तरह असुरकुमार के इन्द्र का कहा उसी तरह उनके
सामानिक और तायत्तीसग का भी कह देना चाहिये। लोकपाल
और अग्रमहिषी की तिरछा संख्याता द्वीप समुद्र भरने की
शक्ति है (विषय आसरी), किन्तु कभी भी भरे नहीं, भरते
नहीं, भरेंगे नहीं।

नवनिकाय के देवता, वाणव्यन्तर और ज्योतिषी देवता
एक जम्बूद्वीप भर देते हैं। तिरछा संख्याता द्वीप समुद्र भरने
की शक्ति है (विषय आसरी), किन्तु कभी भरे नहीं, भरते नहीं,
भरेंगे नहीं।

पहले देवलोक के पांचों ही बोल (इन्द्र, सामानिक, ताय-
त्तीसग, लोकपाल, अग्रमहिषी) दो जम्बूद्वीप जितना क्षेत्र भर

ल रूप से प्रतिबद्ध रहते हैं। ऐसे वैक्रिय रूप करके जम्बूद्वीप को ठसा-
स भर देते हैं।

देते हैं। दूसरे देव लोक के देव, दो जम्बूद्वीप झाझेरा, तीसरे देवलोक के देव ४ जम्बूद्वीप, चौथे देवलोक के देव ४ जम्बूद्वीप झाझेरा, पांचवें देवलोक के देव ८ जम्बूद्वीप, छठे देवलोक के देव ८ जम्बूद्वीप झाझेरा, सातवें देवलोक के देव १६ जम्बूद्वीप, आठवें देवलोक के देव १६ जम्बूद्वीप झाझेरा, नवमें दसवें देवलोक के देव ३२ जम्बूद्वीप, ग्यारहवें बारहवें देवलोक के देव ३२ जम्बूद्वीप झाझेरा क्षेत्र भर देते हैं और शक्ति (विषय आसरी) असंख्याता द्वीप समुद्र भरने की है किन्तु कभी भरे नहीं, भरते नहीं और भरेंगे नहीं।

पहले दूसरे देवलोक के इन्द्र, सामानिक और तायत्तीसग इन तीन की तिरछा असंख्याता द्वीप समुद्र भरने की शक्ति है और लोकपाल तथा अग्रमहिषी की तिरछा संख्याता द्वीप समुद्र भरने की शक्ति है। तीसरे देवलोक से बारहवें देवलोक तक सब की (इन्द्र, सामानिक, तायत्तीसग, लोकपाल, अग्रमहिषी) तिरछा असंख्याता द्वीप समुद्र भरने की शक्ति है (विषय आसरी) किन्तु कभी भी भरे नहीं, भरते नहीं और भरेंगे नहीं।

गाथा—

छट्ठट्ठम मासो उ अद्धमासो वासाइं अट्ठ छम्मासा।
तीसय कुरुदत्ताणं तवभत्त परिण्णा परियाओ ॥
उच्चत्त विमाणाणं पाउब्भव पेच्छणा य संलावे।
किंचि विवादुप्पत्ती, सणंकुमारे य भवियत्तं ॥

अर्थ—श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के शिष्य तिष्यक
नगार ८ वर्ष दीक्षा पाल कर बेले बेले तपस्या करके एक
ास का संलेखना संथारा करके आलोयणा करके काल के
वसर काल करके प्रथम देवलोक के तिष्यक विमान में
क्रेन्द्रजी का सामानिक देव हुआ। महाऋद्धिवंत हुआ।
नकी वैक्रिय शक्ति शक्रेन्द्रजी के माफिक है।

श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के शिष्य कुरुदत्त अनगार
ो छह मास दीक्षा पाली। तेले तेले तपस्या करते हुए सूर्य की
ातापना ली। अर्द्ध मास की संलेखना संथारा करके आलोयणा
रके काल के अवसर काल करके दूसरे देवलोक में कुरुदत्त
वेमान में ईशानेन्द्रजी का सामानिक देव हुआ। महा ऋद्धिवंत
ुआ। इनके वैक्रिय की शक्ति ईशानेन्द्रजी के समान है।

शक्रेन्द्रजी के विमान से ईशानेन्द्रजी का विमान करतल
हथेली) के दृष्टान्त माफक कुछ ऊंचा है और शक्रेन्द्रजी का
वेमान उससे कुछ नीचा है। कोई काम हो तो ईशानेन्द्रजी
ाक्रेन्द्रजी को बुलाते हैं तब शक्रेन्द्रजी ईशानेन्द्रजी के पास
ूसरे देवलोक में जाते हैं। ईशानेन्द्रजी बुलाने पर अथवा
वेना बुलाने पर ही पहले देवलोक में शक्रेन्द्रजी के पास जाते
ैं। इसी तरह बातचीत सलाह मशविरा कामकाज करते हैं।
किसी समय शक्रेन्द्रजी और ईशानेन्द्रजी दोनों में परस्पर कोई
विवाद पैदा हो जाय तब वे दोनों इन्द्र इस तरह विचार करते

हैं कि सनत्कुमारेन्द्रजी (तीसरे देव-लोक के इन्द्र) आवें तो अच्छा हो। तब सनत्कुमारेन्द्रजी का आसन चलायमान होता है। वे आकर दोनों इन्द्रों को समझा देते हैं, उनका विवाद मिटा देते हैं। सनत्कुमारेन्द्रजी साधु साध्वी श्रावक श्राविका इन चार तीर्थ के बड़े हितकारी सुखकारी पथ्यकारी अनुकम्पक (अनुकम्पा करने वाले) हैं। निःश्रेयस् (कल्याण) चाहने वाले, हित सुख पथ्य चाहने वाले हैं ॐ। इसलिये वे भवी, समदृष्टि, सुलभबोधी, परित्तसंसारी, आराधक, चरम हैं। सनत्कुमारेन्द्रजी की स्थिति ७ सागरोपम की है। वहाँ से (देवलोक से) चव कर महाविदेह क्षेत्र में जन्म लेकर सिद्ध बुद्ध मुक्त होवेंगे यावत् सब दुःखों का अन्त करेंगे।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ३४)

श्री भगवतीजी सूत्र के तीसरे शतक के दूसरे उद्देशे में 'चमरेन्द्रजी के उत्पात' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! क्या असुरकुमार देव पहली रत्नप्रभा नरक के नीचे बसते हैं (रहते हैं)? हे गौतम ! णो इणट्ठे

ॐ पूर्व भव में ये चार तीर्थ (साधु साध्वी श्रावक श्राविका) हित, सुख, कल्याण के इच्छुक थे। ऐसी धारणा है।

समट्ठे—असुरकुमार देव पहली रत्नप्रभा नरक के नीचे नहीं बसते हैं। इसी तरह असुरकुमार देव सात नरकों के, बारह देवलोक, नव ग्रैवेयक, पांच अनुत्तर विमान, जाव सिद्धशिला के नीचे बसते हैं? हे गौतम! णो इणट्ठे समट्ठे।

२—अहो भगवान्! असुरकुमार देव कहाँ रहते हैं? हे गौतम! यह रत्नप्रभा पृथ्वी एक लाख अस्सी हजार योजन की मोटाई वाली (जाडी) है। उसमें से एक हजार योजन ऊपर और एक हजार योजन नीचे छोड़ कर बीच में १ लाख ७८ हजार योजन की पोलार है। उसमें १३ पाथड़ा और १२ आन्तरा हैं। उन १२ आन्तरों में से ऊपर दो आन्तरा छोड़ कर नीचे के १० आन्तरों में दस जाति के भवनपति देव रहते हैं। तीसरे आन्तरे में असुरकुमार रहते हैं।

३—अहो भगवान्! असुरकुमारों की गति कितनी है? वे कहाँ तक जा सकते हैं? हे गौतम! नीचे सातवीं नरक तक जाने की शक्ति है (विषय आसरी), परन्तु तीसरी वालूप्रभा नरक तक गये, जाते हैं और जावेंगे। अहो भगवान्! वे तीसरी नरक तक किस कारण से जाते हैं? हे गौतम! अपने पूर्व भव के वैरी को दुःख देने के लिये और अपने पूर्व भव के मित्र को सुखी करने के लिए जाते हैं। अहो भगवान्! असुरकुमार देव तिरछी गति कितनी कर सकते हैं? हे गौतम! स्वदिशा में असंख्यात द्वीप समुद्र, परन्तु पर दिशा में नंदीश्वर द्वीप याने

दक्षिण दिशा के असुरकुमार देव उत्तर दिशा में नन्दीश्वर द्वीप तक गये, जाते हैं और जावेंगे। उत्तर दिशा के असुरकुमार देव दक्षिण दिशा में आठवें नन्दीश्वर द्वीप तक गये, जाते हैं और जावेंगे। इससे आगे नहीं गये, नहीं जाते हैं और नहीं जावेंगे। अहो भगवान्! नन्दीश्वर द्वीप तक किस कारण से जाते हैं। हे गौतम! तीर्थङ्कर भगवान् के जन्म, दीक्षा, केवलज्ञान और परिनिर्वाण (मोक्ष), इन चार कल्याणकों का महोत्सव करने के लिये जाते हैं। अहो भगवान्! असुरकुमार देवों की ऊंची गति कितनी है? हे गौतम! बारहवें देवलोक तक जाने की शक्ति है (विषय आसरी), परन्तु पहले देवलोक तक गये, जाते हैं और जावेंगे। अहो भगवान्! असुरकुमार देव पहले देवलोक तक किस लिये जाते हैं? हे गौतम! अपने पूर्वभव के वैरी को दुःख देने के लिए और अपने पूर्व भव के मित्र से मिलने के लिए तथा आत्मरक्षक देवों को त्रास उपजाने के लिए जाते हैं और वहाँ से छोटे छोटे रत्न लेकर एकान्त स्थान में भाग जाते हैं। तब वैमानिक देव असुरकुमार देवों को शारीरिक पीड़ा पहुँचाते हैं। अहो भगवान्! असुरकुमार देव पहले देवलोक में जाकर क्या वहाँ की देवियों के साथ भोग भोगने में समर्थ हैं? हे गौतम! णो इणट्ठे समट्ठे (ऐसा नहीं कर सकते हैं)। असुरकुमार देव वहाँ से देवियों को लेकर वापिस अपने
पर आते हैं, फिर उन देवियों की इच्छा हो तो भोग

भोगते हैं किन्तु जबरदस्ती नहीं। अनन्ती अवसर्पिणी अनन्ती उत्सर्पिणी काल बीतता है तब किसी वक्त असुरकुमार देव पहले देवलोक में जाते हैं, तब लोक में अच्छेरा (आश्चर्यकारक बात) होता है। अरिहन्त (केवली तीर्थंकर) अरिहन्त चैत्य (छद्मस्थ अरिहन्त) और भावितात्मा अनगार (साधु मुनिराज) इन तीनों में से किसी की भी नेसराय (शरण) लेकर असुर-कुमार देव पहले देवलोक में गये, जाते हैं और जावेंगे। सब असुरकुमार देव नहीं जाते हैं किन्तु मोटी ऋद्धि वाले जाते हैं। अभी वर्तमान के चमरेन्द्रजी पहले देवलोक में गये थे।

चमरेन्द्रजी का जीव पूर्व भव में इस जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में विन्ध्य पर्वत की तलेटी में वेभेल सन्निवेश में पूरण नाम का गाथापति था। पूरण गाथापति ने 'दानामा' नाम की प्रव्रज्या ग्रहण करके १२ वर्ष तक तापसपना पाला। अन्त में संलेखना करके काल के समय काल करके चमरचञ्चा राजधानी में इन्द्रपने उत्पन्न हुआ। तत्काल उपयोग लगा कर अपने ऊपर शक्रेन्द्रजी को देखा। उस समय श्रमण भगवान् महावीर स्वामी को दीक्षा लिये ११ वर्ष हुए थे। भगवान् सुसुमारपुर के अशोक वन खण्ड में ध्यान धर कर खड़े थे। चमरेन्द्रजी भगवान् के पास आये, वन्दना नमस्कार कर भगवान् का शरण लिया। फिर भयंकर काला रूप बना कर हाथ में परिघ रत्न नामक हथियार लेकर अनेक उत्पात करते हुए पहले देवलोक में गये

दक्षिण दिशा के असुरकुमार देव उत्तर दिशा में नन्दीश्वर द्वी
तक गये, जाते हैं और जावेंगे। उत्तर दिशा के असुरकुमार दे
दक्षिण दिशा में आठवें नन्दीश्वर द्वीप तक गये, जाते हैं औ
जावेंगे। इससे आगे नहीं गये, नहीं जाते हैं और नहीं जावेंगे
अहो भगवान्! नन्दीश्वर द्वीप तक किस कारण से जाते हैं
हे गौतम! तीर्थङ्कर भगवान् के जन्म, दीक्षा, केवलज्ञान औ
परिनिर्वाण (मोक्ष), इन चार कल्याणकों का महोत्सव क
के लिये जाते हैं। अहो भगवान्! असुरकुमार देवों की ऊं
गति कितनी है? हे गौतम! बारहवें देवलोक तक जाने
शक्ति है (विषय आसरी), परन्तु पहले देवलोक तक ग
जाते हैं और जावेंगे। अहो भगवान्! असुरकुमार देव प
देवलोक तक किस लिये जाते हैं? हे गौतम! अपने पूर्वभव
वैरी को दुःख देने के लिए और अपने पूर्व भव के मित्र
मिलने के लिए तथा आत्मरक्षक देवों को त्रास उपजाने के लि
जाते हैं और वहाँ से छोटे छोटे रत्न लेकर एकान्त स्थान
भाग जाते हैं। तब वैमानिक देव असुरकुमार देवों को शारीरि
पीड़ा पहुँचाते हैं। अहो भगवान्! असुरकुमार देव पहले दे
लोक में जाकर क्या वहाँ की देवियों के साथ भोग भोगने
समर्थ हैं? हे गौतम! णो इणट्ठे समट्ठे (ऐसा नहीं कर स
हैं)। असुरकुमार देव वहाँ से देवियों को लेकर वापिस अ
।न पर आते हैं, फिर उन देवियों की इच्छा हो तो मै

भोगते हैं किन्तु जबरदस्ती नहीं। अनन्ती अवसर्पिणी अनन्ती उत्सर्पिणी काल बीतता है तब किसी वक्त असुरकुमार देव पहले देवलोक में जाते हैं, तब लोक में अच्छेरा (आश्चर्यकारक बात) होता है। अरिहन्त (केवली तीर्थंकर) अरिहन्त चैत्य (छद्मस्थ अरिहन्त) और भावितात्मा अनगार (साधु मुनिराज) इन तीनों में से किसी की भी नेसराय (शरण) लेकर असुरकुमार देव पहले देवलोक में गये, जाते हैं और जावेंगे। सब असुरकुमार देव नहीं जाते हैं किन्तु मोटी ऋद्धि वाले जाते हैं। अभी वर्तमान के चमरेन्द्रजी पहले देवलोक में गये थे।

चमरेन्द्रजी का जीव पूर्व भव में इस जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में विन्ध्य पर्वत की तलेटी में बेभेल सन्निवेश में पूरण नाम का गाथापति था। पूरण गाथापति ने 'दानामा' नाम की प्रव्रज्या ग्रहण करके १२ वर्ष तक तापसपना पाला। अन्त में संलेखना करके काल के समय काल करके चमरचञ्चा राजधानी में इन्द्रपने उत्पन्न हुआ। तत्काल उपयोग लगा कर अपने ऊपर शक्रेन्द्रजी को देखा। उस समय श्रमण भगवान् महावीर स्वामी को दीक्षा लिये ११ वर्ष हुए थे। भगवान् सुसुमारपुर के अशोक वन खण्ड में ध्यान धर कर खड़े थे। चमरेन्द्रजी भगवान् के पास आये, वन्दना नमस्कार कर भगवान् का शरण लिया। फिर भयंकर काला रूप बना कर हाथ में परिघ रत्न नामक हथियार लेकर अनेक उत्पात करते हुए पहले देवलोक में गये

और शक्रेन्द्रजी को अनिष्ट अप्रिय वचन कहे। उन अनिष्ट अप्रिय वचनों को सुन कर शक्रेन्द्रजी क्रोध में धमधमायमान हुए। चमरेन्द्रजी को मारने के लिए वज्र फेंका। चमरेन्द्रजी डर कर पीछे भागे। ध्यान में खड़े हुए भगवान् महावीर स्वामी के पैरों के बीच में आकर बैठे। फिर शक्रेन्द्रजी ने उपयोग लगा कर भगवान् को देखा और जाना कि चमरेन्द्र भगवान् का शरण लेकर यहाँ आया था। मेरा वज्र चमरेन्द्र का पीछा कर रहा है। इसलिये कहीं मेरे वज्र से भगवान् की आशातना न हो जाय ऐसा विचार कर शक्रेन्द्रजी उतावली गति से भगवान् के पास आये और भगवान् से चार अङ्गुल दूर रहते हुए वज्र को साहरा (पीछा खींचा) भगवान् को वन्दना नमस्कार कर अपने अपराध के लिए क्षमा मांगी। फिर उत्तर पूर्व दिशा के मध्य भाग (ईशान कोण) में गये। वहाँ जाकर पृथ्वी पर तीन वार अपने डांवे पग को पटका और चमरेन्द्रजी से इस प्रकार कहा कि–हे चमर! आज तू श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के प्रभाव से बच गया है। अब मेरे से तुझको जरा भी भय नहीं है' ऐसा कह कर शक्रेन्द्रजी जिस दिशा से आये थे, उसी दिशा में वापिस चले गये (पहले देवलोक में चले गये)।

चमरेन्द्रजी भी भगवान् के पैरों के बीच से निकल कर अपनी राजधानी में चले गये। फिर अपनी सब ऋद्धि परिवार साथ लेकर भगवान् के पास आये। भगवान् को वन्दना

नमस्कार करके नाटक बतलाया। वह ऋद्धि शरीर से निकल कर कूटागार शाला के दृष्टान्त के अनुसार वापिस शरीर में प्रवेश कर गई।

अहो भगवान्! क्या देवता किसी पुद्गल को फेंक कर उसे वापिस ले सकते हैं? हाँ, गौतम! ले सकते हैं। अहो भगवान् इसका क्या कारण? हे गौतम! पुद्गल फेंकते समय उसकी गति शीघ्र होती है और पीछे मन्द हो जाती है और देवता की गति पहले और पीछे शीघ्र ही रहती है। इस कारण से वह फेंके हुए पुद्गल को वापिस ले सकते हैं। अहो भगवान्! तो फिर शक्रेन्द्रजी चमरेन्द्रजी को क्यों नहीं पकड़ सके? हे गौतम! चमरेन्द्रजी की नीचे जाने की गति शीघ्र है और ऊपर जाने की गति मन्द है। शक्रेन्द्रजी की ऊंचे जाने की गति शीघ्र है और नीचे जाने की गति मन्द है। इस कारण से शक्रेन्द्रजी चमरेन्द्रजी को नहीं पकड़ सके।

क्षेत्र काल द्वार कहते हैं—एक समय में शक्रेन्द्रजी जितना क्षेत्र ऊपर जा सकते हैं, उतना क्षेत्र ऊपर जाने में वज्र को दो समय लगते हैं और चमरेन्द्रजी को तीन समय लगते हैं। एक समय में चमरेन्द्रजी जितना क्षेत्र नीचा जा सकते हैं, उतना क्षेत्र नीचा जाने में शक्रेन्द्रजी को दो समय लगते हैं और वज्र को तीन समय लगते हैं।

शक्रेन्द्रजी काल आसरी—एक समय में सबसे थोड़ा नीचा

क्षेत्र जाते हैं, उससे तिरछा क्षेत्र संख्यात भाग अधिक जाते हैं, उससे ऊंचा क्षेत्र संख्यात भाग अधिक जाते हैं। क्षेत्र आसरी-ऊंचा क्षेत्र २४ भाग जाते हैं, तिरछा क्षेत्र १८ भाग जाते हैं और नीचा क्षेत्र १२ भाग जाते हैं।

वज्र एक समय में सबसे थोड़ा नीचा क्षेत्र जाता है, उससे तिरछा क्षेत्र विशेषाधिक जाता है, उससे ऊंचा क्षेत्र विशेषाधिक जाता है। क्षेत्र आसरी-ऊंचा क्षेत्र १२ भाग जाता है, तिरछा क्षेत्र १० भाग जाता है, नीचा क्षेत्र ८ भाग जाता है।

चमरेन्द्रजी एक समय में सबसे थोड़ा ऊंचा क्षेत्र जाते हैं, उससे तिरछा क्षेत्र संख्यात भाग अधिक जाते हैं, उससे नीचा क्षेत्र संख्यात भाग अधिक जाते हैं। क्षेत्र आसरी-ऊंचा क्षेत्र ८ भाग जाते हैं, तिरछा क्षेत्र १६ भाग जाते हैं, नीचा क्षेत्र २४ भाग जाते हैं।

जावण काल (गमन काल) की अल्पाबहुत्व-शक्रेन्द्रजी के ऊपर जाने का काल सबसे थोड़ा, उससे नीचे जाने का काल संख्यातगुणा, वज्र का ऊंचा जाने का काल सबसे थोड़ा, उससे नीचे जाने का काल विशेषाधिक। चमरेन्द्रजी के नीचे जाने का काल सबसे थोड़ा, उससे ऊंचा जाने का काल संख्यातगुणा।

सबके गति काल की अल्पाबहुत्व-शक्रेन्द्रजी [illegible] जाने का और चमरेन्द्रजी के [illegible] काल [illegible] सबसे थोड़ा है। [illegible] का [illegible]

ऊंचा जाने का काल परस्पर तुल्य है, उससे संख्यातगुणा है। चमरेन्द्रजी के ऊंचा जाने का और वज्र के नीचा जाने का काल परस्पर तुल्य है, उससे विशेषाधिक है।

चमरेन्द्रजी की ऋद्धि परिवार जो जो पावे सो कह देना चाहिए। चमरेन्द्रजी की एक सागर की स्थिति है। महाविदेह क्षेत्र में जन्म लेकर मोक्ष जावेंगे। शेष अधिकार सूत्र से जान लेना चाहिए।

सेवं भंते! सेवं भंते!!

क्षेत्र काल द्वार का यन्त्र—

जाने की मार्गणा	जितना क्षेत्र जावे	जानेमें जितना समय लगता है
१ शक्रेन्द्रजी को	ऊंचा क्षेत्र जाने में	१ समय लगता है।
२ वज्र को	" " "	२ समय लगते हैं।
३ चमरेन्द्रजी को	" " "	३ समय लगते हैं।
१ चमरेन्द्रजी को	नीचा क्षेत्र जाने में	१ समय लगता है।
२ शक्रेन्द्रजी को	" " "	२ समय लगते हैं।
३ वज्र को	" " "	३ समय लगते हैं।

(थोकड़ा नं॰ ३५)

श्री भगवतीजी सूत्र के तीसरे शतक के चौथे उद्देशे में अवधिज्ञान की विचित्रता आदि का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

अहो भगवान् ! क्या कोई अवधिज्ञानी भावितात्मा अनगा (साधु) वैक्रिय समुद्घात करके विमान में बैठ कर आकाश में जाते हुए देव को जानता देखता है ? हे गौतम ! (१) को देव को देखता है किन्तु विमान को नहीं देखता, (२) को विमान को देखता है किन्तु देव को नहीं देखता, (३) को देव को भी देखता है और विमान को भी देखता है, (४ कोई देव को भी नहीं देखता और विमान को भी नहीं देखता इसतरह जैसे देव से ४ भांगे कहे गये हैं वैसे ही देवी से ४ भांगे देव देवी से ४ भांगे, वृक्ष के अन्दर के भाग और बाहर के भा से ४ भांगे, यहां तक चार चौभंगियाँ हुई मूल कन्द से ४ भांगे मूल स्कन्ध से ४ भांगे, मूल त्वचा से ४ भांगे, मूल शाखा से भांगे, मूल प्रवाल से ४ भांगे, मूल पत्र से ४ भांगे, मूल फूल से भांगे, मूल फल से ४ भांगे, मूल बीज से ४ भांगे कह देना। मूल से ६ चौभङ्गियाँ हुई। कन्द से ८ चौभङ्गी, स्कन्ध से त्वचा से ६, शाखा से ५, प्रवाल से ४, पत्र से ३, फूल से बीज से १ चौभङ्गी, इस तरह ये सब ४६ चौभङ्गियाँ

२—अहो भगवान् ! वायुकाय किस आकार का वैक्रिय ता है ? हे गौतम ! वायुकाय पताका के आकार वैक्रिय ता है, ऊंची तथा नीची एक पताका करके अपनी ऋद्धि, र्म, प्रयोग से अनेक योजन तक जाता है। अहो भगवान् ! ह वायुकाय है कि पताका है ? हे गौतम ! वह वायुकाय है, ाका नहीं। इसी तरह बलाहक (बादल) अनेक स्त्री, पुरुष थी घोड़ा यावत् नाना रूप बना कर अनेक योजन तक पर-द्धि, परकर्म और परप्रयोग से जाता है । अहो भगवान् ! सको बलाहक कहना कि स्त्री पुरुषादि कहना ? हे गौतम ! से बलाहक कहना किन्तु स्त्री पुरुषादि नहीं कहना।

३—अहो भगवान् ! मरते समय जीव में कौनसी लेश्या ती है ? हे गौतम ! जिस जीव को जिस गति में उत्पन्न होना ता है, वह जीव उसी लेश्या के द्रव्यों को ग्रहण कर काल रता है और उसी लेश्या में उत्पन्न होता है। इस तरह २४ एडक में से जिस दण्डक में जो जो लेश्या पावे सो कह देना।

४—अहो भगवान् ! वैक्रिय लब्धिवन्त भावितात्मा अन-ार बाहर के पुद्गलों को ग्रहण किये बिना वैभार पर्वत को ल्लंघ सकते हैं (एक बार उल्लंघ सकते हैं) ? प्रलंघ सकते हैं बार बार उल्लंघ सकते हैं) ? हे गौतम ! णो इणट्ठे समट्ठे। ाहर के पुद्गल लेकर उल्लंघ सकते हैं, प्रलंघ सकते हैं। इसी रह राजगृही नगरी में जितने रूप हैं उतने वैक्रिय रूप बनाकर

वभार पर्वत में प्रवेश करके समपर्वत को विषम और विषम प
को सम कर सकते हैं।

५—अहो भगवान्! मायी (प्रमादी) साधु वैक्रिय करता
अथवा अमायी (अप्रमादी) साधु वैक्रिय करता है? हे गौतम
मायी (प्रमादी) साधु वैक्रिय करता है किन्तु अमायी न
करता है। अहो भगवान्! इसका क्या कारण है? हे गौतम
मायी (प्रमादी) साधु सरस आहार करके वमन करता
उसके हाड मज्जा (मींजा) तो बलवान होते हैं और
मांस पतले होते हैं। उस आहार के वादर पुद्गल हाड, म
केश, श्मश्रु, रोम, नख, लोही, शुक्रादिपने तथा इन्द्रियपने
(श्रोत्रेन्द्रिय जाव स्पर्शेन्द्रियपने) परिणमते हैं। अमायी (अ
मादी) साधु रूखा आहार करता है, वमन नहीं करता, उनके
हाड मज्जा (मिंजा) पतले होते हैं, लोही मांस जाड़े (घ
गाढ़े) होते हैं। वादर पुद्गल उच्चार पासवण खेल सिंघा
दिपने परिणमते हैं। इस कारण से मायी (प्रमादी) सा
वैक्रिय करते हैं और अमायी (अप्रमादी) साधु वैक्रिय न
करते हैं।

मायी (प्रमादी) साधु उस कार्य की आलोयणा
बिना काल करता है (मरता है) इसलिए आराधक नहीं

और* अमायी आलोयणा करके काल करता है, इसलिए आराधक है।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ३६)

श्री भगवतीजी सूत्र के तीसरे शतक के पांचवें उद्देशे में 'अणगार वैक्रिय' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

गाथा—इत्थी असी पडागा, जण्णोवइए य होइ वोद्धव्वे।
पल्हत्थिय पलियंके, अभिओग विकुव्वणा मायी ॥

१–अहो भगवान् ! लब्धिवंत भावितात्मा अनगार बाहर के पुद्गल लेकर अनेक स्त्री पुरुष हाथी घोड़ा सिंह व्याघ्र आदि रूप यावत् शिविका (पालखी), स्यन्दमाणी (म्याना) का रूप, ढाल और तलवार वाले मनुष्य के रूप, एक जनेऊ, दो जनेऊ वाले मनुष्य के रूप, एक तरफ पलाठी (पालखी मार कर बैठना), दोनों तरफ पलाठी, एक तरफ पर्यंकासन, दोनों तरफ पर्यंकासन इत्यादि रूप बनाकर आकाश में उड़ने में समर्थ हैं ? जुवती जुवाण के दृष्टान्त से, चक्र नाभि के दृष्टान्त

---

*पहले मायी होने के कारण वैक्रिय रूप किये थे, सरस आहार किया था किन्तु पीछे उस बात का पश्चात्ताप करने से वह अमायी हुआ। उस बात की आलोयणा तथा प्रतिक्रमण करने से वह आराधक है।

से वैक्रियरूप बनाकर जम्बूद्वीप को भरने में समर्थ है ? हाँ, गौतम ! समर्थ है, विषय आसरी ऐसी शक्ति है, परन्तु कभी ऐसा किया नहीं, करते नहीं और करेंगे नहीं ।

इसी तरह बाहर के पुद्‌गल ग्रहण करके हाथी, घोड़ा, सिंह, व्याघ्र आदि के रूप बनाकर अनेक योजन जाने में समर्थ है। उनको हाथी घोड़ा आदि नहीं कहना किन्तु अनगार कहना। वे आत्मऋद्धि, आत्मकर्म और आत्म प्रयोग से जाते हैं किन्तु परऋद्धि, परकर्म और परप्रयोग से नहीं जाते । ऐसी विकुर्वणा मायी (प्रमादी) अनगार करते हैं, अमायी (अप्रमादी) अनगार नहीं करते । मायी अनगार उस बात की आलोयणा किये बिना काल करे तो आभियोगिक (दास-सेवक) देवतापने उत्पन्न होते हैं, कोई देवपदवी नहीं पाते। अमायी (अप्रमादी) अनगार आलोयणा करके काल करे तो आभियोगिक (सेवक) देवपने उत्पन्न नहीं होते किन्तु अनाभियोगिक (इन्द्र; सामानिक, तायतिसक लोकपाल, अहमिन्द्र) नवग्रैवेयक अनुत्तर विमानों में देवपने उत्पन्न होते हैं ।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० २७)

श्री भगवतीजी सूत्र के तीसरे शतक के छठे उद्देशे में 'ग्रामादि विकुर्वणा' का थोकड़ा चलता है । कहते हैं—

१–अहो भगवान् ! क्या राजगृह नगर में रहा हुआ भावितात्मा अनगार मायी मिथ्यादृष्टि वीर्यलब्धि, वैक्रियलब्धि विभंगज्ञान लब्धि से वाणारसी नगरी वैक्रिय कर राजगृही नगरी का रूप जानता देखता है ? हाँ, गौतम ! जानता देखता है। अहो भगवान् ! क्या वह तथाभाव (जैसा है वैसा) से जानता देखता है या अन्यथा भाव (विपरीत) से जानता देखता है ? हे गौतम ! वह तथाभाव से नहीं जानता नहीं देखता किन्तु अन्यथा भाव से जानता देखता है। अहो भगवान् ! इसका क्या कारण ? हे गौतम ! उसको विभंगज्ञान विपरीत दर्शन होने से वह अन्यथाभाव से जानता देखता है।

२–अहो भगवान् ! क्या वाणारसी में रहा हुआ मायी मिथ्यादृष्टि भावितात्मा अनगार राजगृही नगरी वैक्रिय कर वाणारसी का रूप जानता देखता है ? हाँ, गौतम ! जानता देखता है यावत् उसको विभंगज्ञान विपरीतदर्शन होने से वह अन्यथाभाव से जानता देखता है। (वह इस तरह जानता है कि मैं राजगृही में रहा हुआ हूँ और वाणारसी वैक्रिय कर वाणारसी का रूप जानता देखता हूँ)।

३–अहो भगवान् ! क्या मायी मिथ्यादृष्टि भावितात्मा अनगार राजगृही और वाणारसी के बीच में एक बड़ा नगर वैक्रिय कर उसका रूप जानता व देखता है ? हाँ, गौतम ! वह इस तरह जानता देखता है कि यह राजगृही है यह वाणारसी

है, यह इन दोनों के बीच में एक बड़ा नगर है परन्तु वह ऐसा नहीं जानता कि यह तो मैंने स्वयं वैक्रिय किया है।

इस प्रकार इन तीनों ही अलावों में विपरीत दर्शन से तथाभाव (सच्ची बात) से नहीं जानता, नहीं देखता है किन्तु अन्यथा भाव से जानता देखता है।

४-५-६-चौथा पाँचवां छठा अलावा समदृष्टि का कहना चाहिए। इन तीनों ही अलावों में समदृष्टि अवधिज्ञानी वैक्रिय लब्धिवन्त भावितात्मा अनगार सम्यग्दर्शन से तथाभाव (जैसा है वैसा ही) जानता देखता है, अन्यथाभाव (विपरीत) नहीं जानता, नहीं देखता है।

७-अहो भगवान्! क्या समदृष्टि अवधिज्ञानी वैक्रिय लब्धिवन्त भावितात्मा अनगार बाहर के पुद्गलों को लिये बिना ग्राम, नगर यावत् सन्निवेश के रूप वैक्रिय कर सकता है? हे गौतम! णो इणट्ठे समट्ठे (ऐसा नहीं कर सकता)।

८-अहो भगवान्! क्या समदृष्टि अवधिज्ञानी वैक्रिय लब्धिवन्त भावितात्मा अनगार बाहर के पुद्गलों को लेकर ग्राम नगर यावत् सन्निवेश के रूप वैक्रिय कर सकता है? हाँ, गौतम! कर सकता है, सम्पूर्ण जम्बूद्वीप को ठसाठस भरने की शक्ति है (विषय आसरी), किन्तु ऐसा कभी किया नहीं, करते नहीं और करेंगे नहीं।

सेवं भंते! सेवं भंते!!

(थोकड़ा नं० ३८)

श्री भगवतीजी सूत्र के तीसरे शतक के सातवें [उ]द्देशे में शक्रेन्द्रजी के चार लोकपालों का तथा चौथे [श]तक के आठ उद्देशों में ईशानेन्द्रजी के ४ लोकपाल [औ]र ८ राजधानियों का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं–

१–अहो भगवान् ! शक्रेन्द्रजी के कितने लोकपाल हैं ? [हे] गौतम ! चार लोकपाल हैं–सोम, यम, वरुण, वैश्रमण । [सौ]धर्मावतंसक विमान से पूर्वादि दिशाओं में असंख्याता योजन [जा]ने पर अनुक्रम से इन चारों के विमान आते हैं । इनका [क्षे]त्र और कितनाक वर्णन सूर्याभ विमान के समान है । मेरु [प]र्वत से दक्षिण दिशा में जितना भी काम होता है वह सब इन [चा]रों लोकपालों की जानकारी में होता है ।

चारों लोकपालों के विमान, विमानों की लम्बाई चौड़ाई, [प]रिधि तथा राजधानी का वर्णन इस प्रकार है—

सोम लोकपाल के सन्ध्याप्रभ विमान और सोमा राजधानी [है] । यम लोकपाल के वरशिष्ट विमान और जमा राजधानी [है] । वरुण लोकपाल के सयंजल विमान और वरुणा राजधानी [है] । वैश्रमण लोकपाल के वल्गु विमान और वैश्रमणा राजधानी [है] । सब लोकपालों के विमानों की लम्बाई चौड़ाई १२॥ लाख [यो]जन है और परिधि ३९५२८४८ योजन झाझेरी (कुछ [ज्य]ादा) है । राजधानी की लम्बाई चौड़ाई और परिधि जम्बू-

द्वीप प्रमाण है। उपलेणका (चबूतरा) १६०००-१६०
योजन है। सब के* ३४१-३४१ महल-झूमकारूप हैं।

शक्रेन्द्रजी के लोकपाल सोम और यम की स्थिति १
पल्योपम और पल्योपम के तीसरे भाग अधिक की है। वरुण की
स्थिति देश ऊणी (कुछ कम) दो पल्योपम की है। वैश्रम
की स्थिति दो पल्योपम की है। सब लोकपालों के पुत्र
(पुत्रस्थानीय), आज्ञाकारी देवों की स्थिति १ पल्योपम की है

सोम लोकपाल के आज्ञाकारी देव देवियों के नाम-सोम
कायिक, सोमदेवकायिक, विद्युत्कुमार, विद्युत्कुमारी, अग्निकुमार
अग्निकुमारी, वायुकुमार, वायुकुमारी, चन्द्र, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र
तारा। पुत्रवत् देवों के नाम - मंगल, विकोलिक, लोहिता
शनिश्चर, चन्द्र, सूर्य, शुक्र, बुध, बृहस्पति, राहु।

यम लोकपाल के आज्ञाकारी देव देवियों के नाम—यम
कायिक, यमदेवकायिक, प्रेतकायिक, प्रेतदेवकायिक, असुरकुमार
असुरकुमारी, कन्दर्प, नरकपाल (परमाधार्मिक)। पुत्रवत् देवों
के नाम—अम्ब, अम्बरिस, श्याम, शबल, रुद्दे (रुद्र), उवरु

* बीच में मूल प्रासाद है उसके चारों तरफ चार महल मूल से
आधा लम्बा चौड़ा ऊँचा है। चारों के चौतरफ १६ महल उनसे आधे
उन सोलह के चौतरफ ६४ महल उनसे आधे, उन चौसठ महल के
चौतरफ २५६ महल उनसे आधे=१+४+१६+६४+२५६= ३४१
महल का झूमका ऊपर लिखे अनुसार है।

(उपरुद्र), काल, महाकाल, असिपत्र, धनुष, कुम्भ, बालू, वैतरणी, खरस्वर, महाघोष ।

वरुण लोकपाल के आज्ञाकारी देव-देवियों के नाम—वरुणकायिक, वरुणदेवकायिक, नागकुमार, नागकुमारी, उदधिकुमार, उदधिकुमारी, स्तनितकुमार, स्तनितकुमारी । पुत्रवत् देवों के नाम—कर्कोटक, कर्दमक, अञ्जन, शंखपाल, पुण्ड्र, पलाश, मोद, जय, दधिमुख, अयंपुल, कातरिक ।

वैश्रमण लोकपाल के आज्ञाकारी देव देवियों के नाम—वैश्रमण कायिक, वैश्रमणदेवकायिक, सुवर्णकुमार सुवर्णकुमारी, द्वीपकुमार द्वीपकुमारी, दिशाकुमार, दिशाकुमारी, वाणव्यन्तर, वाणव्यन्तरी । पुत्रवत् देवों के नाम—पूर्णभद्र, मणिभद्र, शालिभद्र, सुमनोभद्र, चक्ररक्ष पूर्णरक्ष सद्वान सर्वयश सर्वकाम समृद्ध अमोघ असंग । ग्रामदाह यावत् सन्निवेशदाह धनक्षय जनक्षय कुलक्षय आदि काम सोम लोकपाल के जाणपणा (जानकारी) में होते हैं। डिंबादि अनेक प्रकार के युद्ध और अनेक प्रकार के रोग यम लोकपाल के जाणपणा में होते हैं। अतिवृष्टि और अनावृष्टि, सुकाल दुष्काल, झरना, तालाब, पाणी का प्रवाह आदि वरुण लोकपाल के जाणपणा में होते हैं । लोह की खान, सोना चांदी सीसा ताम्बा रत्नों की खान, गडा हुवा धन वैश्रमण लोकपाल के जाणपणा में होते हैं ।

ईशानेन्द्रजी के ४ लोकपाल हैं—सोम, यम, वरुण, वैश्रमण । ईशानावतंस विमान से उत्तर दिशा में इनके ४ विमान

हैं—सुमन, सर्वतोभद्र, वल्गु, सुवल। सोम और यम की स्थिति दो पल्योपम में पल का तीसरा भाग ऊणी है। वैश्रमण की स्थिति दो पल्योपम की है। वरुण की स्थिति दो पल्योपम और पल का तीसरा भाग अधिक है। मेरु पर्वत से उत्तर दिशा में होने वाले सब काम इनके जाणपणा में होते हैं। सब लोकपालों के पुत्रवत् (पुत्र स्थानीय), आज्ञाकारी देवों की स्थिति १ पल्योपम की है। शेष सारा अधिकार पूर्ववत् जान लेना चाहिए।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ३६)

श्री भगवतीजी सूत्र के तीसरे शतक के आठवें उद्देशे में 'अधिपति देवों' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! असुरकुमार आदि भवनपति देवों में कितने अधिपति हैं ? हे गौतम ! असुरकुमार आदि दस भवनपतियों की एक एक जाति में १०-१० अधिपति हैं, एक एक जाति में दो दो इन्द्र हैं। एक एक इन्द्र के च[illegible] लोकपाल हैं।

३–अहो भगवान् ! ज्योतिषी देवों में कितने अधिपति हैं ? गौतम ! ज्योतिषी देवों में चन्द्र और सूर्य ये दो अधिपति हैं र ये दो इन्द्र हैं। इनमें लोकपाल नहीं होते।

४–अहो भगवान् ! वैमानिक देवों में कितने अधिपति हैं ? गौतम ! पहले दूसरे देवलोक में १० अधिपति हैं। इसी तरह सरे चौथे में १०, पांचवें से आठवें तक में ५–५ (एक-एक द्र चार-चार लोकपाल), नवमा, दसवां में ५, ग्यारहवां, रहवां में ५ अधिपति हैं। नवग्रैवेयक और अनुत्तर विमानों में धिपति नहीं होते। वे सब अहमिन्द्र हैं। दक्षिण दिशा के कपालों के जो नाम कहे हैं वे ही उत्तर दिशा के लोकपालों नाम हैं। किन्तु तीसरे के स्थान में चौथा और चौथे के ान में तीसरा नाम कहना चाहिए। इनके नाम ठाणांग सूत्र चौथे ठाणे में हैं।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ४०)

श्री भगवतीजी सूत्र के तीसरे शतक के दसवें देशे में 'देवता देवी की परिषद् परिवार, स्थिति' का कड़ा चलता है सो कहते हैं—

१–अहो भगवान् ! भवनपति और वैमानिक देवों में तनी परखदा (परिषद्-सभा) हैं ? ? हे गौतम ! तीन तीन रखदा हैं—समिया (शमिका–शमिता), चण्डा, जाया ।

पल झाझेरी है। देवियों की स्थिति पाव पल झाझेरी, पाव पल और देश ऊणी पाव पल की है।

शक्रेन्द्रजी की तीनों परखदा में क्रम से १२०००, १४००० और १६००० देव हैं और ७००, ६०० और ५०० देवियाँ हैं। देवों की स्थिति ५ पल, ४ पल और ३ पल है। देवियों की स्थिति ३ पल, २ पल और १ पल है।

ईशानेन्द्रजी की तीनों परखदा में क्रम से १०००० १२००० और १४००० देव हैं और ९००, ८०० और ७०० देवियाँ हैं। देवों की स्थिति ७ पल, ६ पल और ५ पल है। देवियों की स्थिति ५ पल, ४ पल और ३ पल है।

सनत्कुमारेन्द्रजी की तीनों परखदा में क्रम से ८००० १०००० और १२००० देव हैं॥ । देवों की स्थिति ४॥ सागर ५ पल, ४॥ सागर ४ पल और ४॥ सागर ३ पल है। माहेन्द्र इन्द्र की तीनों परखदा में क्रम से ६०००, ८००० और १०००० देव हैं। देवों की स्थिति ४॥ सागर ७ पल, ४॥ सागर ६ पल और ४॥ सागर ५ पल है। ब्रह्म इन्द्र की तीनों परखदा में क्रम से ४०००, ६००० और ८००० देव हैं। देवों की स्थिति क्रम से ८॥ सागर ५ पल, ८॥ सागर ४ पल

॥ दूसरे देवलोक से आगे परिगृहीता देवियाँ नहीं होतीं हैं। इसलिये दूसरे देवलोक से आगे देवियों की संख्या और स्थिति नहीं बतलाई है।

८॥ सागर ३ पल है। लान्तक इन्द्र की तीनों परखदा में क्रम से २०००, ४००० और ६००० देव हैं। इनकी स्थिति क्रम से १२ सागर ७ पल, १२ सागर ६ पल और १२ सागर ५ पल है। महाशुक्र इन्द्र की तीनों परखदा में क्रम से १०००, २००० और ४००० देव हैं। इन देवों की स्थिति १५॥ सागर ५ पल, १५॥ सागर ४ पल और १५॥ सागर ३ पल है। सहस्रार इंद्र की तीनों परखदा में क्रम से ५००, १००० और २००० देव हैं। इनकी स्थिति १७॥ सागर ७ पल, १७॥ सागर ६ पल, और १७॥ सागर ५ पल है।❀ प्राणत इन्द्र की तीनों परखदा में क्रम से २५०, ५०० और १००० देव हैं। इनकी स्थिति १९ सागर ५ पल, १९ सागर ४ पल और १९ सागर ३ पल है। × अच्युतेन्द्र की तीनों परखदा में क्रम से १२५, २५० और ५०० देव हैं। इनकी स्थिति २१ सागर ७ पल, २१ सागर ६ पल और २१ सागर ५ पल है ÷ ।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

❀ नवमा आणत देवलोक और दसवां प्राणत देवलोक दोनों का एक ही इन्द्र प्राणतेन्द्र होता है।

× ग्यारहवाँ आरण देवलोक और बारहवाँ अच्युत देवलोक, इन दोनों देवलोकों का एक ही इन्द्र अच्युतेन्द्र होता है।

÷ नव ग्रैवेयक और पांच अनुत्तर विमानों में तीन परखदा नहीं होती। वे सब देव समान ऋद्धि वाले होते हैं। उनमें छोटे बड़े का भाव और स्वामी सेवक का भाव नहीं होता है। इनमें इन्द्र नहीं होता है। ये सब अहमिन्द्र (मैं स्वयं ही इन्द्र हूँ) होते हैं।

(थोकड़ा नं० ४१)

श्री भगवतीजी सूत्र के पांचवें शतक के सातवें उद्देशे में 'कम्पमान' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१ एयति वेयति द्वार, २ खड्गधारा द्वार, ३ अग्निशिखा द्वार, ४ पुष्करावर्त मेघ द्वार, ५ सअड्ढे सगज्झे सपएसे, उदाहु अणड्ढे अमज्झे अपएसे द्वार, ६ फुसमाण द्वार, ७ स्थिति द्वार ८ कम्पमान अकम्पमान का स्थिति द्वार, ९ वर्ण गन्ध रस स्पर्श का स्थिति द्वार, १० सूक्ष्म बादर का स्थिति द्वार, ११ शब्दपने अशब्दपने परिणमने का स्थिति द्वार, १२ परमाणु का अन्तर द्वार, १३ कम्पमान अकम्पमान का अन्तर द्वार, १४ वर्णादिक का अन्तर द्वार, १५ सूक्ष्म बादर का अन्तर द्वार, १६ शब्दपने अशब्दपने परिणम्या का अन्तर द्वार, १७ अल्प बहुत्व द्वार।

१—अहो भगवान् ! क्या परमाणुपुद्गल कंपे, विशेष कंपे, यावत् उस उस रूप से परिणमे ? हे गौतम ! सिय (कदाचित्) कम्पे, विशेष कम्पे यावत् उस उस रूप से परिणमे, सिय नहीं कम्पे यावत् नहीं परिणमे। परमाणु में भांगा पावे दो—१ सिय कम्पे, २ सिय नहीं कम्पे। दो प्रदेशी खंध में भांगा पावे तीन—१ सिय कंपे, २ सिय नहीं कंपे, ३ देश कंपे देश नहीं कम्पे। प्रदेशी खंध में भांगा पावे पांच—१ सिय कम्पे, २ सिय

हीं कम्पे, ३ सिय एक देश कम्पे, एकदेश नहीं कम्पे, ४ सिय एक देश कम्पे, बहुत देश नहीं कम्पे, ५ सिय बहुत देश कम्पे एक देश नहीं कम्पे। चार प्रदेशी खंध में भांगा पावे छह—१ सिय कम्पे, २ सिय नहीं कम्पे, ३ सिय एक देश कंपे एक देश नहीं कम्पे, ४ सिय एक देश कम्पे बहुत देश नहीं कम्पे, ५ सिय बहुत देश कम्पे एक देश नहीं कम्पे, ६ सिय बहुत देश कम्पे बहुत देश नहीं कम्पे। चार प्रदेशी की तरह पांच प्रदेशी यावत् दस प्रदेशी, संख्यात प्रदेशी असंख्यात प्रदेशी, सूक्ष्म अनन्तप्रदेशी, बादर अनन्त प्रदेशी खंध तक छह छह भांगा कह देना। सब भांगा * ७६ हुए।

२—अहो भगवान्! क्या परमाणु पुद्गल तलवार की धार, खुर (उस्तरा) की धार पर बैठे (आश्रय लेवे)? हाँ गौतम! बैठे। अहो भगवान्! क्या उस परमाणु पुद्गल का छेदन भेदन होवे? हे गौतम! णो इणट्ठे समट्ठे (छेदन भेदन नहीं होवे)। इसी तरह सूक्ष्म अनन्त प्रदेशी खंध तक कह देना। बादर अनन्त प्रदेशी खंध तलवार की धार, खुर की धार पर बैठे, सिय छेदन भेदन पावे, सिय नहीं पावे।

---

* परमाणु पुद्गल से २ भांगे, दो प्रदेशी खंध से ३ भांगे, तीन प्रदेशी खंध से ५ भांगे, चार प्रदेशी खंध से दश प्रदेशी खंध तक ७ बोलों में ६–६ भांगों के हिसाब से ४२ भांगे, संख्यात प्रदेशी खंध से जाव बादर अनन्त प्रदेशी खंध तक ४ बोलों में ६–६ भांगों के हिसाब से २४ भांगे सब मिलकर २+३+५+४२+२४=७६ भांगे हुए।

३–अहो भगवान् ! क्या परमाणु पुद्गल अग्नि शिखा आदि में से निकले ? हाँ, गौतम ! निकले। अहो भगवान् ! अग्नि शिखा आदि में से निकले तो क्या वह परमाणु पुद्गल जले ? हे गौतम ! णो इणट्ठे समट्ठे (नहीं जले) इसी तरह दो प्रदेशी खंध से लेकर सूक्ष्म अनन्त प्रदेशी खंध तक कह देना। बादर अनन्त प्रदेशी खंध अग्नि शिखा आदि में सिय जले सिय नहीं जले

४–अहो भगवान् ! क्या परमाणु पुद्गल पुष्कर संवर्त मेघ के बीच में से निकले ? हाँ, गौतम ! निकले। अहो भगवान् पुष्कर संवर्त मेघ के बीच से निकले तो क्या भींजे ? हे गौतम नहीं भींजे। अहो भगवान् ! क्या परमाणु पुद्गल गंगा सिन्धु महानदियों के प्रवाह में से निकले ? हाँ, गौतम ! निकले अहो भगवान् ! परमाणु पुद्गल गंगा सिन्धु महानदियों के प्रवाह में से निकले तो क्या स्खलना पावे ? हे गौतम ! नहीं पावे इसी तरह दो प्रदेशी खंध से लेकर सूक्ष्म अनन्तप्रदेशी खंध तक कह देना। बादर अनन्त प्रदेशी खंध पुष्कर संवर्त मेघ से सिय भींजे सिय नहीं भींजे। गंगा सिन्धु महा नदी के प्रवाह में सिय स्खलना पावे, सिय नहीं पावे।

५–अहो भगवान् ! क्या परमाणु पुद्गल* सअड्ढे समज्झे

---

* सअड्ढे–आधा भाग सहित। समज्झे–मध्य भाग सहित सपएसे–प्रदेश सहित। अणड्ढे–आधा भाग रहित। अमज्झे–मध्य भाग रहित। अपएसे–प्रदेश रहित।

[प्र]एसे हैं अथवा अणड्ढे अमज्झे अपएसे है ? हे गौतम ! [पर]माणु पुद्गल अणड्ढे अमज्झे अपएसे है किन्तु सअड्ढे समज्झे [सप]एसे नहीं है। दो प्रदेशी खंध सअड्ढे अमज्झे सपएसे है [कि]न्तु अणड्ढे समज्झे अपएसे नहीं है। तीन प्रदेशी खंध [अ]णड्ढे समज्झे सपएसे हैं किंतु सअड्ढे अमज्झे अपएसे नहीं है। जिस तरह दो प्रदेशी खंध कहा उसी तरह चार प्रदेशी, छह [प्रदे]शी, आठ प्रदेशी, दस प्रदेशी खंध आदि÷ समसंख्या वाले [खं]ध कह देना। जिस तरह तीन प्रदेशी खंध कहा उसी तरह पांच [प्रदे]शी, सात प्रदेशी नव प्रदेशी आदि* विषम संख्या वाले [खं]ध कह देना।

संख्यातप्रदेशी खंध सिय सअड्ढे अमज्झे सपएसे, सिय [अ]णड्ढे समज्झे सपएसे नो अपएसे। इसी तरह असंख्यात [प्र]देशी खंध और अनन्त प्रदेशी खंध कह देना।

६—अहो भगवान्! परमाणु पुद्गल परमाणु पुद्गल को [स्प]र्श करता है तो क्या १. देसेणं देसं फुसइ †, २ देसेणं देसे

÷ जिस संख्या में दो का भाग बराबर चला जाय, उसको सम[सं]ख्या कहते हैं। जैसे—२, ४, ६, ८, १०, १२, १४, आदि।

* जिस संख्या में दो का भाग बराबर न जावे, किन्तु एक बाकी [ब]च जावे, उसको विषम संख्या कहते हैं। जैसे—३ ५, ७, ९, ११, १३, [१]५ आदि।

† १—एक देश से एक देश को स्पर्श करता है।
२—एक देश से बहुत देशों को स्पर्श करता है।
३—एक देश से सबको स्पर्श करता है।

फुसइ, ३ देसेणं सव्वं फुसइ, ४ देसेहिं देसं फुसइ, ५ देसेहिं फुसइ, ६ देसेहिं सव्वं फुसइ, ७ सव्वेणं देसं फुसइ, ८ सव्वेणं देसे फुसइ, ९ सव्वेणं सव्वं फुसइ ? हे गौतम ! १ नो देसेणं फुसइ, २ नो देसेणं देसे फुसइ, ३ नो देसेणं सव्वं फुसइ, ४ देसेहिं देसं फुसइ, ५ नो देसेहिं देसे फुसइ, ६ नो देसेहिं फुसइ, ७ नो सव्वेणं देसं फुसइ, ८ नो सव्वेणं देसे फु ९ सव्वेणं सव्वं फुसइ ।

एक परमाणु एक परमाणु को स्पर्शे तो भांगो पावे नवमो । एक परमाणु दो प्रदेशी खंध को स्पर्शे तो भांगा २-सातवां नवमा । एक परमाणु तीन प्रदेशी खंध को तो भांगा पावे ३-सातवां, आठवां नवमा । जिस तरह प्रदेशी खंध कहा, उसी तरह चार प्रदेशी, पांच प्रदेशी दस प्रदेशी, संख्यात प्रदेशी, असंख्यात प्रदेशी, अनन्त प्र तक ११ बोलों से भांगा पावे ३-३=३३ और परमाणु १ भांगा और दो प्रदेशी से २ भांगे इस तरह परम पुद्गल के सब भांगे ३६ हुए । (१+२+३३=३६)

४—बहुत देशों से एक देश को स्पर्श करता है ।
५—बहुत देशों से बहुत देशों को स्पर्श करता है ।
६—बहुत देशों से सबको स्पर्श करता है ।
७—सबसे एक देश को स्पर्श करता है ।
८—सबसे बहुत देशों को स्पर्श करता है ।
९—सबसे सबको स्पर्श करता है ।

दो प्रदेशी खंध परमाणु पुद्गल को स्पर्शे तो भांगा पावे
-तीसरा, नवमा। दो प्रदेशी खंध दो प्रदेशी खंध को स्पर्शे
भांगा पावे ४—पहला, तीसरा, सातवां, नवमा। दो प्रदेशी
ध तीन प्रदेशी खंध को स्पर्शे तो भांगा पावे ६—पहला,
सरा, तीसरा, सातवां, आठवां, नवमा। इसी तरह अनन्त
देशी खंध तक कह देना। दो प्रदेशी खंध के सब भांगे ७२ हुए।

तीन प्रदेशी खंध एक परमाणु पुद्गल को स्पर्शे तो भांगा
वे ३—तीसरा, छठा, नवमा। तीन प्रदेशी खंध दो प्रदेशी खंध
ो स्पर्शे तो भांगा पावे ६—पहला, तीसरा, चौथा, छठा,
ातवां, नवमा। तीन प्रदेशी खंध तीन प्रदेशी खंध को स्पर्शे
ो भांगा पावे ९। इसी तरह अनन्त प्रदेशी खंध तक कह देना
ाहिए। तीन प्रदेशी खंध के सब भांगा १०८ हुए। जिस
रह तीन प्रदेशी खंध कहा उसी तरह चार प्रदेशी खंध से लगा
र अनन्त प्रदेशी खंध तक कह देना चाहिए। हरेक बोल में
०८—१०८ भांगा होते हैं।*

७—स्थिति द्वार—परमाणु पुद्गल की स्थिति जघन्य एक
मय की, उत्कृष्ट असंख्याता काल की है। इसी तरह दो
देशी खंध से लगा कर अनन्त प्रदेशी खंध तक स्थिति कह
नी चाहिए।

---

* परमाणु के ३६, द्विप्रदेशी के ७२, तीन प्रदेशी से यावत् दस
देशी तक तथा संख्यात प्रदेशी, असंख्यात प्रदेशी, अनन्त प्रदेशी, इन
ग्यारह बोलों के १०८—१०८ भांगे होते हैं। ये कुल मिला कर १२६६
ांगे होते हैं।

८–कंपमान अकंपमान का स्थिति द्वार—एक आकाश प्रदेश ओगाया कंपमान की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग की है। अकंपमान की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट असंख्याता काल की है। इसी तरह दो आकाश प्रदेश ओगाया से लगा कर असंख्यात आकाश प्रदेश ओगाया तक की स्थिति कह देनी चाहिए।

९–वर्ण गन्ध रस स्पर्श का स्थिति द्वार—वर्ण गन्ध रस स्पर्श की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट असंख्याता काल की है। इसी तरह एक गुण काला से लेकर अनन्त गुण काला तक की स्थिति कह देनी चाहिए। काला कहा उसी तरह वर्णादिक १९ बोल और कह देने चाहिए।

१०–सूक्ष्म बादर का स्थिति द्वार—सूक्ष्म बादर पुद्गलों की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट असंख्याता काल की है।

११–शब्दपने अशब्दपने परिणमने का स्थिति द्वार—शब्दपने परिणम्या की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग की है। अशब्दपने परिणम्या की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट असंख्याता कालकी है।

१२–परमाणु का अन्तर द्वार—परमाणु पुद्गल का अन्तर जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट असंख्याता काल का है। द्वि-प्रदेशी खंध से लगा कर अनन्त प्रदेशी खंध तक का अन्तर एक समय का, उत्कृष्ट अनन्त काल का है।

१३–कंपमान अकंपमान का अन्तर द्वार— एक आकाश प्रदेश ओघाया यावत् असंख्यात आकाश प्रदेश ओघाया तक कंपमान का अन्तर जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट असंख्याता काल का है। अकम्पमान का अन्तर जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग का है।

१४–वर्णादिक का अन्तर द्वार—वर्ण गन्ध रस स्पर्श का अन्तर जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट असंख्याता काल का है।

१५–सूक्ष्म बादर का अन्तर द्वार—सूक्ष्म बादर का अन्तर जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट असंख्याता काल का है।

१६–शब्दपने अशब्दपने परिणम्या का अन्तर द्वार—शब्दपने परिणम्या का अन्तर जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट असंख्याता काल का है। अशब्दपने परिणम्या का अन्तर जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग का है।

१७–अल्पबहुत्व द्वार—* सब से थोड़ा खेत्तट्ठाणाउए (क्षेत्र स्थान आयु), २ उससे ओगाहणट्ठाणाउए (अवगाहना

---

* क्षेत्र स्थान आयु अर्थात् क्षेत्र का काल सब से थोड़ा है, उससे अवगाहना स्थान आयु अर्थात् अवगाहना का काल असंख्यातगुणा है। इसका कारण यह है कि—कल्पना कीजिये कि एक सौ प्रदेशी स्कन्ध एक पाँच प्रदेशी आकाश प्रदेश पर पाँच प्रदेशी अवगाहना से बैठा है। वहां से उठ कर वह दूसरे स्थान पर बैठ गया। इस तरह वह स्कन्ध उसी अवगाहना से अनेक जगह बैठता गया तो इस प्रकार उसका क्षेत्र तो पलटता (बदलता) गया है किन्तु अवगाहना नहीं पलटी है।

स्थान आयु) असंख्यातगुणा, ३ उससे दव्वट्ठाणाउए (द्रव्य स्थान आयु) असंख्यातगुणा, ४ उससे भावट्ठाणाउए (भाव स्थान आयु) असंख्यात गुणा ।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ४२)

श्री भगवतीजी सूत्र के पांचवें शतक के आठवें उद्देशे में 'सप्रदेशी अप्रदेशी' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं ।

१—श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के शिष्य नियंठिपुत्र अनगार ने नारदपुत्र अनगार से पूछा कि हे आर्य ! आपकी धारणा प्रमाणे क्या सब पुद्गल सअड्ढा समज्झा सपएसा हैं अथवा अणड्ढा अमज्झा अपएसा है ?

वहां अवगाहना लम्बे समय तक ज्यों की त्यों रही है । इसलिए क्षेत्र की अपेक्षा अवगाहना का काल असंख्यात गुणा है ।

वही सौ प्रदेशी स्कन्ध पांच प्रदेशी अवगाहना को छोड़ कर चार प्रदेशी अवगाहना से और कहीं कम ज्यादा अवगाहना से ठहर गया तो इससे उसकी अवगाहना का पलटा तो हो गया किन्तु द्रव्य का पलटा नहीं हुआ । वही द्रव्य लम्बे काल तक रहा । इसलिये अवगाहना से द्रव्य का काल असंख्यातगुणा है ।

वही सौ प्रदेशी स्कन्ध वर्ण की अपेक्षा दस गुण काला था । चाहे वह पचास प्रदेशी या कम ज्यादा द्रव्य वाला हो गया, किन्तु दस गुण काला ज्यों का त्यों रहा तो उसके द्रव्य का तो पलटा हो गया किन्तु दस गुण काला भाव ज्यों का त्यों बना रहा । इसलिए द्रव्य से भाव का काल असंख्यातगुणा है ।

नारद पुत्र अनगार ने जवाब दिया कि हे आर्य! मेरी धारणा प्रमाणे सब पुद्गल सअड्ढा समज्भा सपएसा है, किन्तु अणड्ढा अमज्भा अपएसा नहीं है।

२–नियंठिपुत्र अनगार ने पूछा कि हे आर्य! आपकी धारणा प्रमाणे क्या सब पुद्गल द्रव्य क्षेत्र काल भाव की अपेक्षा सअड्ढा समज्भा सपएसा है ?

नारदपुत्र ने जवाब दिया कि हे आर्य! सब पुद्गल द्रव्य क्षेत्र काल भाव की अपेक्षा सअड्ढा समज्भा सपएसा हैं।

३–नियंठिपुत्र अनगार ने पूछा कि हे आर्य! यदि सब पुद्गल द्रव्य क्षेत्र काल भाव से सअड्ढा समज्भा सपएसा हैं तो आपके मतानुसार एक परमाणु पुद्गल, एक प्रदेशावगाढ पुद्गल, एक समय की स्थिति वाला पुद्गल एक गुण काला पुद्गल सअड्ढा समज्भा सपएसा होने चाहिए, अणड्ढा अमज्भा अपएसा नहीं होने चाहिए। यदि आपकी धारणानुसार इस तरह न होवे तो आपका कहना मिथ्या होगा।

नारदपुत्र अनगार ने नियंठिपुत्र अनगार से कहा कि हे देवानुप्रिय! मैं इस अर्थ को नहीं जानता हूँ, नहीं देखता हूँ। इस अर्थ को कहने में यदि आपको ग्लानि (कष्ट) न होती हो तो आप फरमावें। इसका अर्थ मैं आपके पास से सुनना चाहता हूँ, धारण करना चाहता हूँ।

तब नियंठिपुत्र अनगार ने नारदपुत्र अनगार से कहा कि

हे आर्य ! मेरी धारणा प्रमाणे सब पुद्गल द्रव्य क्षेत्र काल भाव से सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी हैं। जो पुद्गल द्रव्य से अप्रदेशी है वह क्षेत्र से नियमा (निश्चित रूप से) अप्रदेशी होता है, काल से सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी होता है और भाव से सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी होता है। जो पुद्गल क्षेत्र से अप्रदेशी है वह द्रव्य से, काल से और भाव से सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी होता है। जो पुद्गल काल से अप्रदेशी है वह द्रव्य से, क्षेत्र से और भाव से सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी होता है। जो पुद्गल भाव से अप्रदेशी होता है वह द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी होता है। जो पुद्गल द्रव्य से सप्रदेशी है वह पुद्गल क्षेत्र से, काल से, भाव से सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी होता है। जो पुद्गल क्षेत्र से सप्रदेशी होता है वह द्रव्य से नियमा सप्रदेशी होता है। काल से और भाव से सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी होता है। जो पुद्गल काल से सप्रदेशी होता है वह पुद्गल द्रव्य से, क्षेत्र से और भाव से सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी होता है। जो पुद्गल भाव से सप्रदेशी होता है वह पुद्गल द्रव्य से, क्षेत्र से और काल से सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी होता है।

फिर नारदपुत्र अनगार ने पूछा कि हे देवानुप्रिय ! सप्रदेशी अप्रदेशी में द्रव्य क्षेत्र काल भाव की अपेक्षा कौन किससे थोड़ा, बहुत, सरीखा और विशेषाधिक है ?

तब नियंठिपुत्र अनगार ने जवाब दिया कि हे नारदपुत्र !※ १ सब से थोड़ा भाव से अप्रदेशी, २ उससे काल से अप्रदेशी असंख्यात गुणा, ३ उससे द्रव्य से अप्रदेशी असंख्यात गुणा, ४ उससे क्षेत्र से अप्रदेशी असंख्यात गुणा, ५ उससे क्षेत्र से सप्रदेशी असंख्यात गुणा, ६ उससे द्रव्य से सप्रदेशी विसेसाहिया (विशेषाधिक), ७ उससे काल से सप्रदेशी विसेसाहिया, ८ उससे भाव से सप्रदेशी विसेसाहिया ।

इस अर्थ को सुनकर नारदपुत्र अनगार ने नियंठिपुत्र अनगार को वन्दना नमस्कार किया और अपने निज के द्वारा कहे

※ सब से थोड़े भाव से अप्रदेशी—जैसे एक गुण काला नीला आदि । २—उससे काल से अप्रदेशी असंख्यात गुणा—जैसे एक समय की स्थिति वाले पुद्गल । ३—उससे द्रव्य से अप्रदेशी असंख्यात गुणा—जैसे सब परमाणु पुद्गल । ४ उससे क्षेत्र से अप्रदेशी असंख्यातगुणा—जैसे एक एक आकाश प्रदेश अवगाहे पुद्गल । ५ उससे क्षेत्र से सप्रदेशी असंख्यातगुणा—जैसे दो आकाश प्रदेश अवगाहे हुए, तीन आकाश प्रदेश अवगाहे हुए यावत् असंख्यात आकाश प्रदेश अवगाहे हुए पुद्गल । ६ उससे द्रव्य से सप्रदेशी विशेषाहिया—जैसे दो प्रदेशी स्कंध, तीन प्रदेशी स्कन्ध, यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध । ७ उससे काल से सप्रदेशी विशेषाहिया, जैसे—दो समय तीन समय यावत् असंख्यात समय की स्थिति वाले पुद्गल । ८ उससे भाव से सप्रदेशी विशेषाहिया—जैसे—दो गुण काले, तीन गुण काले यावत् अनन्त गुण काले आदि पुद्गल ।

हुए अर्थ के लिए विनयपूर्वक बारम्बार क्षमा मांगी। फिर तप संयम से अपनी आत्मा को भावते हुए विचरने लगे।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ४२)

श्री भगवतीजी सूत्र के पांचवें शतक के आठवें उद्देशे में 'वर्द्धमान हायमान अवट्ठिया' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

जिस जगह जीव आते जाते बढते रहते हैं उसे वड्ढमाण (वर्द्धमान) कहते हैं, जिस जगह जीव आते जाते घटते हैं उसे हायमान कहते हैं। जिस जगह जीव आते नहीं जाते नहीं अथवा सरीखे आते और सरीखे जाते हैं उसे अवट्ठिया (अवस्थित) कहते हैं। इस तरह वड्ढमाण, हायमाण, अवट्ठिया ये तीन भांगे होते हैं।

समुच्चय जीव में भांगो पावे एक—अवट्ठिया। २४ दण्डक में भांगा पावे ३। सिद्ध भगवान् में भांगा पावे २—पहला, तीसरा।

समुच्चय जीव में भांगो पावे एक—अवट्ठिया, जितने जीव हैं सदाकाल उतने ही रहते हैं, घटते बढते नहीं। १९ दण्डक (पांच स्थावर छोड़कर) में भांगा पावे ३, जिसमें हायमान वड्ढमाण की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट आवलिका ... भाग की है। अवट्ठिया की स्थिति जघन्य एक

समय की, ❀ उत्कृष्ट अपने अपने विरह काल से दुगुनी है। पांच स्थावर में भांगा पावे ३, जिसमें तीनों ही भांगों की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग की है। सिद्ध भगवान् में भांगा पावे २—जिसमें वड्ढमाण की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट ८ समय की, अवट्ठिया की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट छह महीनों की है।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

---

* अवट्ठिया की उत्कृष्ट स्थिति—समुच्चय नरक की २४ मुहूर्त की पहली नरक की ४८ मुहूर्त्त की, दूसरी नरक की १४ दिन रात की, तीसरी नरक की १ मास की, चौथी नरक की २ मास की, पांचवीं नरक की ४ मास की, छठी नरक की ८ मास की, सातवीं नरक की १२ मास की। समुच्चय देवता, तिर्यंच, मनुष्य की २४-२४ मुहूर्त्त की—भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिषी, पहले दूसरे देवलोक की और सम्मूर्छिम मनुष्य की ४८ मुहूर्त्त की, तीन विकलेन्द्रिय की और असन्नी तिर्यञ्च पञ्चेंद्रिय की २ अन्तर्मुहूर्त्त की, सन्नी तिर्यञ्च पञ्चेंद्रिय और सन्नी मनुष्य की २४ मुहूर्त की, तीसरे देवलोक की १८ दिन रात ४० मुहूर्त्त की, चौथे देवलोक की २४ दिन रात २० मुहूर्त्त की, पांचवें देवलोक की ४५ दिन रात की, छठे देवलोक की ६० दिन रात की, सातवें देवलोक की १६० दिन रात की, आठवें देवलोक की २०० दिन रात की, नवमें दसवें देवलोक की संख्याता मास की, ग्यारहवें बारहवें देवलोक की संख्याता वर्षों की, नव-

(थोकड़ा नं० ४४)

श्री भगवतीजी सूत्र के पांचवें शतक के आठवें उद्देशे में 'सोवचय सावचय' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान्! क्या जीव * सोवचया हैं (सिर्फ उपजते ही हैं, चवते नहीं)? या सावचया हैं (सिर्फ चवते ही हैं, उपजते नहीं)? या सोवचया सावचया हैं (उपजते भी हैं,

---

ग्रैवेयक के नीचे की त्रिक की संख्याता सैंकड़ों वर्षों की, बीचली त्रिक की संख्याता हजारों वर्षों की, ऊपर की त्रिक की संख्याता लाखों वर्षों की, चार अनुत्तर विमान की पल के असंख्यातवें भाग की, और सर्वार्थ सिद्ध की पल के संख्यातवें भाग की है।

* १ सोवचय—वृद्धि सहित अर्थात् पहले जितने जीव हैं, उतने बने रहें, और नवीन जीवों की उत्पत्ति से संख्या बढ़ जाय, उसे सोवचय कहते हैं। २ सावचय—हानिसहित अर्थात् पहले जितने जीव हैं, उनमें से कितने ही जीवों की मृत्यु होजाने से संख्या घट जाय, उसे सावचय कहते हैं।

३ सोवचय सावचय—वृद्धि और हानि सहित अर्थात् जीवों के जन्मने से और मरने से संख्या घट जाय बढ़ जाय, या बराबर (अवस्थित) रहे उसे सोवचय सावचय कहते हैं।

४ निरुवचय निरवचय—वृद्धि और हानि रहित अर्थात् जीवों की संख्या न बढ़े और न घटे किन्तु अवस्थित रहे उसको निरुवचय निरवचय कहते हैं।

चवते भी हैं, सरीखा भी रहते हैं) ? या निरुवचया निरवचया (उपजते भी नहीं और चवते भी नहीं, अवस्थित रहते हैं) ? हे गौतम! जीव सोवचया नहीं सावचया नहीं, सोवचया सावचया नहीं किन्तु निरुवचया निरवचया हैं।

नारकी आदि १६ दण्डक में भांगा पावे ४। पांच स्थावर में भांगा पावे १ (सोवचया सावचया)। सिद्ध भगवान् में भांगा पावे २-पहला और चौथा।

२-स्थिति आसरी समुच्चय जीव और ५ स्थावर की स्थिति सव्वद्धा (सर्व काल)। १६ दण्डक में भांगा पावे ४, प्रथम तीन भांगों की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग की है। चौथे भांगे की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट अपने अपने विरहकाल जितनी है। सिद्ध भगवान् में भांगा पावे दो-पहला, चौथा। पहले भांगे की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट ८ समय की है। चौथे भांगे की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट ६ मास की है।

३-वड्ढमाण में भांगा पावे २-पहला, तीसरा (सोवचया, सोवचया सावचया)। हायमान में भांगा पावे २-दूसरा और तीसरा (सावचया, सोवचया सावचया)। अवट्ठिया में भांगा पावे २-तीसरा और चौथा (सोवचया सावचया, निरुवचया निरवचया)।

४–सोवचया में भांगो पावे १ वड्ढमाण। सावचया में भांगो पावे १–हायमान। सोवचया सावचया में भांगा पावे ३–वड्ढमाण, हायमान, अवट्ठिया। निरुपचय निरवचया में भांगो पावे १–अवट्ठिया)

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ४५)

श्री भगवतीजी सूत्र के पांचवें शतक के नवमें उद्देशे में 'राजगृह नगर' आदि का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

किमियं रायगिहं ति य, उज्जोए अंधयार समए य।
पासंति वासि पुच्छा, राइंदिय देवलोगा य ॥ १ ॥

१–अहो भगवान् ! राजगृह नगर किसको कहना चाहिए ? हे गौतम ! राजगृह नगर में पृथ्वी आदि सचित्त अचित्त मिश्र द्रव्य हैं जीव अजीव त्रस स्थावर जितनी वस्तुएं हैं उनको राजगृह नगर कहना चाहिए।

२–अहो भगवान् ! क्या दिन में उद्योत (प्रकाश) और रात्रि में अन्धकार होता है ? हाँ, गौतम ! होता है। अहो भगवान् ! इसका क्या कारण है ? हे गौतम ! दिन के शुभ पुद्गल हैं वे शुभ पुद्गलपणे परिणमते हैं, इसलिए दिन में उद्योत होता है। रात्रि के पुद्गल अशुभ हैं, वे अशुभ पुद्गलपणे परिणमते हैं। इसलिए रात्रि में अन्धकार होता है।

दण्डक के जीवां आसरी–नरकगति, ५ स्थावर, बेइन्द्रिय, इन्द्रिय इन ८ दण्डक के जीवों के अशुभ पुद्गल हैं, अशुभ द्गलपने परिणमते हैं, इसलिए अन्धकार है। देवता के १३ ण्डक में शुभ पुद्गल हैं, वे शुभ पुद्गलपने परिणमते हैं, इस- लए उदयोत है। चोइन्द्रिय, तिर्यञ्च पंचेन्द्रिय और मनुष्य न तीन दण्डकों में शुभाशुभ पुद्गल हैं, वे शुभाशुभ पुद्गलपने रिणमते हैं, इसलिए उदयोत और अन्धकार दोनो ही हैं।

३—अहो भगवान्! क्या जीव समय, आवलिका यावत् उत्सर्पिणी अवसर्पिणी को जानते हैं? हे गौतम! २३ दण्डक (मनुष्य का एक दण्डक छोड़कर) के जीव अपने अपने स्थान र रहे हुए समय, आवलिका यावत् उत्सर्पिणी अवसर्पिणी को नहीं जानते हैं क्योंकि समय आदि का मान प्रमाण मनुष्य लोक में ही है। मनुष्य लोक में रहा हुआ मनुष्य समय, आव- लिका यावत् उत्सर्पिणी अवसर्पिणी काल को जानता है क्योंकि काल का मान, प्रमाण, सूर्य का उदय अस्त, दिन रात मनुष्य- क्षेत्र में ही है।

४–तेईसवें तीर्थङ्कर भगवान् पार्श्वनाथ स्वामी के शिष्य स्थविर मुनियों ने श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास आकर इस प्रकार पूछा कि–अहो भगवान्! क्या असंख्याता लोक में अनन्ता रात्रि दिवस उत्पन्न हुए? उत्पन्न होते हैं और उत्पन्न होवेंगे? नष्ट हुए, नष्ट होते हैं और नष्ट होवेंगे? परित्ता (निश्चित

परिमाण वाला) रात्रि दिवस उत्पन्न हुए, उत्पन्न होते हैं
उत्पन्न होवेंगे ? नष्ट हुए, नष्ट होते हैं और नष्ट होवेंगे ?
वान् ने उत्तर दिया कि—हाँ, आर्यो ! उत्पन्न हुए यावत्
होवेंगे । अहो भगवान् ! इसका क्या कारण है ? हे आर्य
पुरुषादानीय (पुरुषों में माननीय) पार्श्व नाथ अरिहन्त
लोक को शाश्वत, अनादि, अनन्त कहा है । यह लोक
चौड़ा, बीच में संकड़ा और ऊपर विशाल है, असंख्य यो
का लम्बा चौड़ा है, अलोक से आवृत्त (घिरा हुआ) है ।
सर्व लोक में अनन्ता (साधारण) परित्ता (प्रत्येक)
ने जन्म मरण किये, करते हैं, करेंगे । उन जीवों की अ
असंख्याता लोक में अनन्ता परित्ता रात्रिदिवस उत्पन्न
यावत् विनष्ट होवेंगे . जहाँ तक जीव पुद्गलों की गति (ग
है वहाँ तक लोक है और जहाँ तक लोक है वहीं तक
पुद्गलों की गति (गमन) होती है ।

श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के ये वचन सुन कर
स्थविर मुनियों ने भगवान् महावीर स्वामी को वन्दना नम
करके चार जाम (चार महाव्रत) धर्म से पंच जाम (
महाव्रत) रूप धर्म *सप्रतिक्रमण (प्रतिक्रमण सहित) अं

---

*सपडिक्कमणो धम्मो, पुरिमस्स य पच्छिमस्स य जिणस्स
मज्झिमगाणं जिणाणं, कारणजाए पडिक्कमणं

अर्थ—प्रथम तीर्थंकर और अन्तिम तीर्थंकर के साधुओं को
दिन सुबह शाम दोनों वक्त और पाक्षिक चौमासिक सांवत्सरिक

किया। तप संयम से आत्मा को भावते हुए विचरने लगे। उन स्थविर मुनियों में से कितनेक मोक्ष गये और कितनेक देवलोक में गये।

५—श्री गौतम स्वामी ने पूछा कि—अहो भगवान्! देवलोक कितने प्रकार के हैं? हे गौतम! देवलोक चार प्रकार के हैं—भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिषी, वैमानिक। भवनपति १० प्रकार के हैं, वाणव्यन्तर ८ प्रकार के, ज्योतिषी ५ प्रकार के और वैमानिक २ प्रकार के हैं।❀

सेवं भंते! सेवं भंते!!

(थोकड़ा नं० ४६)

श्री भगवतीजी सूत्र के छठे शतक के पहले उद्देशे में 'वेदना निर्जरा' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

महावेयणे य वत्थे, कद्दमखंजण कए य अहिगरणी।
तणहत्थे य कवल्ले, करण महावेयणा जीवा॥

१—अहो भगवान्! क्या जो महावेदना वाला है वह महा निर्जरा वाला है और जो महानिर्जरा वाला है वह महा-

---

क्रमण करना जरूरी (आवश्यक) है। बीच के २२ तीर्थङ्करों के साधु दोष लगने पर प्रतिक्रमण करते हैं। उन्हें प्रतिदिन प्रतिक्रमण करने की आवश्यकता नहीं है। लेकिन उठती चौमासी और संवत्सरी का प्रतिक्रमण करना जरूरी है।

❀ देवों सम्बन्धी विस्तार जम्बूद्वीपपन्नति आदि सूत्रों में है।

वेदना वाला है ? हाँ, गौतम ! जो महावेदना वाला है वह म
निर्जरा वाला है और जो महा निर्जरा वाला है वह महावेद
वाला है ।

२—अहो भगवान् ! क्या महावेदना वाले और अ
वेदना वाले जीवों में जो जीव प्रशस्त निर्जरा वाला है वह श्रे
है ? हाँ, गौतम ! महावेदना वाले और अल्प वेदना वाले जी
में जो जीव प्रशस्त निर्जरा वाला है वह श्रेष्ठ है ।

३—अहो भगवान् ! क्या छठी नरक के और सातवे
नरक के नेरीया श्रमण निर्ग्रन्थों से महानिर्जरा वाले हैं ? ।
गौतम ! णो इणट्ठे समट्ठे (यह बात नहीं है) । अहो भग
वान् ! इसका क्या कारण है ? हे गौतम ! जैसे दो वस्त्र हैं,
उनमें से एक तो कर्दम (कीचड़) के रंग से रंगा हुआ है,
महा चिकनाई के कारण पक्का रंग लगा हुआ है और एक
वस्त्र खंजन (काजल) के रंग में रंगा हुआ है, चिकनाई नहीं
लगी हुई है । हे गौतम ! इन दोनों वस्त्रों में से कौन सा वस्त्र
कठिनता से धोया जाता है, कठिनता से दाग छुड़ाये जाते हैं,
कठिनता से उज्ज्वल (निर्मल) किया जाता है और कौन सा
वस्त्र सुखपूर्वक धोया जाता है यावत् सुखपूर्वक निर्मल किया
जाता है ? अहो भगवान् ! कर्दम रंग से रंगा हुआ वस्त्र कठि-
नता से धोया जाता है यावत् कठिनता से निर्मल होता है और
खंजन रंग से रंगा हुआ वस्त्र सुखपूर्वक धोया जाता है यावत्

खपूर्वक निर्मल होता है। हे गौतम! इसी तरह नेरीयों कर्म गाढ़े, चिकने श्लिष्ट खिलीभूत (निकाचित) किये ए हैं जिससे महावेदना वेदते हैं तो भी श्रमण निर्ग्रन्थों की पेक्षा महानिर्जरा नहीं कर सकते हैं। हे गौतम! जैसे खंजन से ।। हुआ वस्त्र सुखपूर्वक धोया जाता है, इसी तरह श्रमण ग्रन्थों के कर्म तप संयम ध्यानादि से पतले शिथिल निर्बल सार किये हुए हैं जिससे अल्प वेदना वेदते हैं तो भी महा-र्जरा करते हैं। जैसे सूखे हुए घास में अग्नि डालने से घास न्त भस्म हो जाता है। तथा गर्म धगधगते लोह के गोले पर ल की बूंद डालने से वह बूंद तुरन्त भस्म हो जाती है इसी ह श्रमण निर्ग्रन्थ महा निर्जरा करते हैं।

अहो भगवान्! जीव महावेदना महानिर्जरा किससे करता ? हे गौतम! करण से करता है। अहो भगवान्! करण तने प्रकार का है? हे गौतम! करण चार प्रकार का है— मन करण, २ वचन करण, ३ काया करण, ४* कर्म करण। रकी में करण पावे ४ अशुभ, अशुभकरण से असातावेदना दते हैं, कदाचित् साता वेदना भी वेदते हैं। देवता में करण वे ४ शुभ, शुभ करण से साता वेदना वेदते हैं, कदाचित् साता वेदना भी वेदते हैं। पाँच स्थावर में करण पावे २

---

* कर्म करण—कर्मों के बन्धन संक्रमण आदि में निमित्त भूत व का वीर्य कर्मकरण कहलाता है।

(काया करण, कर्म करण)। तीन विकलेन्द्रिय में करण पावे ३ (काया करण, वचन करण, कर्म करण)। तिर्यञ्च पंचेन्द्रिय में और मनुष्य में करण पावे ४। इन औदारिक के १० दण्डक में शुभाशुभ करण से वेमायाए (विमात्रा-विचित्र प्रकार से अर्थात् कभी साता कभी असाता) वेदना वेदते हैं।

जीवों आसरी वेदना और निर्जरा के ४ भांगे होते हैं— १ महावेदना महानिर्जरा, २ महावेदना अल्पनिर्जरा, ३ अल्प वेदना महानिर्जरा, ४ अल्प वेदना अल्पनिर्जरा। पहले भांगे में पडिमाधारी साधु हैं, दूसरे भांगे में छठी सातवीं नरक के नेरिये हैं। तीसरे भांगे में शैलेशी प्रतिपन्न (चौदहवें गुणस्थान वाले) अनगार हैं। चौथे भांगे में अनुत्तर विमान के देवता हैं।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ५७)

श्री भगवतीजी सूत्र के छठे शतक के तीसरे उद्देशे में 'कर्मबन्ध' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान ! क्या महाकर्मा, महा क्रियावन्त महा आश्रवी, महावेदनावंत जीव के सब दिशाओं से कर्म पुद्गल आकर आत्मा के साथ बंधते हैं, चय उपचय होते हैं ? गौतम ! ... बंधते हैं, चय उपचय होते हैं उन कर्मों के मैल ...

त्मा निरन्तर दूरूपपने दुवर्णादि १७ बोल ❀ मलीनपने
रम्बार परिणमता है ? हाँ, गौतम ! बंधता है यावत् परिण-
ता है । अहो भगवान् ! इसका क्या कारण ? हे गौतम ! जैसे नये
पड़े को हमेशा पहनने से, काम में लेते रहने से वह वस्त्र मैला
लीन हो जाता है । इसी तरह आरम्भादि १८ पापों में प्रवृत्ति
रता हुआ जीव कर्मों के मैल से मलीन होता है ।

२-अहो भगवान् ! क्या अल्पकर्मी, अल्प क्रियावन्त,
अल्प आश्रवी, अल्प वेदनावन्त जीव के कर्म सदा आत्मा से
अलग होते हैं ? छेदाते भेदाते क्षय होते हैं ? हाँ, गौतम ! होते

❀ १७ बोल इस प्रकार हैं—

दूरूवत्ताए, दुवण्णत्ताए, दुगंधत्ताए, दूरसत्ताए, दुफासत्ताए, अणिट्ठत्ताए, अकंत, अप्पिय, असुभ, अमणुण्ण, अमणामत्ताए, अणि-च्छियत्ताए, अभिज्झियत्ताए, अहत्ताए, णो उड्ढत्ताए दुक्खत्ताए, णो सुह-त्ताए, भुज्जो भुज्जो परिणमंति ।

अर्थ—१ दूरूपपने (खराब रूपपने), दुर्वर्णपने (खराब वर्णपने), ३ दुर्गन्धपने, ४ दुरसपने, ५ दुःस्पर्शपने, ६ अनिष्टपने, ७ अकान्तपने (असुन्दरपने), ८ अप्रियपने, ९ अशुभपने (अमंगलपने), १० अमनोज्ञपने (जो मन को सुन्दर न लगे), ११ अमनामपने (मन में स्मरण करने मात्र से ही जिस पर अरुचि पैदा हो), १२ अनिच्छित-पने (अनभीप्सितपने-जिसको प्राप्त करने की इच्छा ही न हो), १३ अभिज्झियतपने (जिसको प्राप्त करने का लोभ भी न हो), १४ अहत्ताए (जघन्यपने-भारीपने), १५ णो उड्ढत्ताए-ऊर्ध्वपने नहीं (लघुपने नहीं), १६ दुक्खत्ताए-दुःखपने, १७ णो सुहत्ताए--सुखपने नहीं ।

हैं। अहो भगवान्! इसका क्या कारण? हे गौतम! जैसे मलीन वस्त्र को शुद्ध पानी से धोने से मैल कट कर वह उजला सफेद हो जाता है यावत् सुरूप सुवर्णादि १७ बोल शुभपने परिणमते हैं। इसी तरह जीव तप संयम ध्यानादि से कर्मों को छेदते भेदते क्षय करते हैं, यावत् सुरूप सुवर्णादि १७ बोल शुभपने परिणमते हैं।

३—अहो भगवान्? वस्त्र के पुद्गलों का जो उपचय होता है क्या वह प्रयोग से (पुरुष के प्रयत्न से) होता है या स्वाभाविक रीति से होता है? हे गौतम! प्रयोग से भी होता है और स्वाभाविक रीति से भी होता है।

४—अहो भगवान्! जिस तरह वस्त्र के प्रयोग से और स्वाभाविक रीति से पुद्गलों का जो उपचय होता है यानी मैल लगता है क्या उसी तरह से जीवों के जो कर्मों का उपचय होता है वह प्रयोग से और स्वाभाविक रीति से दोनों तरह से होता है? हे गौतम! जीव के कर्मों का उपचय प्रयोग से होता है किन्तु स्वाभाविक रीति से नहीं होता अर्थात् जीव के कर्म प्रयोग से लगते हैं, स्वाभाविक रूप से नहीं लगते। अहो भगवान्! इसका क्या कारण? हे गौतम! जीवों के तीन प्रकार के प्रयोग कहे गये हैं—१ मन प्रयोग, २ वचन प्रयोग, ३ काय प्रयोग। इन प्रयोगों से जीव कर्मों का बन्ध करता है। एकेन्द्रिय में प्रयोग पावे एक (काया प्रयोग)। विकलेन्द्रिय में प्रयोग पावे

तो (काया प्रयोग, वचन प्रयोग)। पंचेन्द्रिय में प्रयोग पावे तीनों ही।

५-अहो भगवान्! वस्त्र के मैल और कर्मों की स्थिति कितनी है? हे गौतम! स्थिति आसरी ४ भांगे हैं—

१ सादि सान्त (आदि अन्त सहित)।
२ सादि अनंन्त (आदि सहित, अन्त रहित)।
३ अनादि सान्त (आदि रहित, अन्त सहित)।
४ अनादि अनन्त (आदि अन्त रहित)।

वस्त्र के मैल की स्थिति में भांगा पावे १ (सादि सान्त)। जीव के कर्मों की स्थिति में भांगा पावे ३-पहला, तीसरा, चौथा। ईर्यावही क्रिया की स्थिति में भांगा पावे १ (सादि सान्त)। भवी * जीव के कर्मों की स्थिति में भांगा पावे १ (अनादि सान्त)। अभवी × जीव के कर्मों की स्थिति में भांगा पावे १ (अनादि अनन्त)। किसी भी जीव के कर्मों की स्थिति सादि अनन्त नहीं है।

वस्त्र द्रव्य सादि सान्त है। जीव द्रव्य आसरी भांगा पावे चारों ही—१ चारों गति के जीव गतागत करते हैं, इसलिये

---

* भवी—जिस जीव में मोक्ष जाने की योग्यता होती है उसे भवी (भव्य) कहते हैं।

× अभवी—जिस जीव में मोक्ष जाने की योग्यता नहीं होती, उसको अभवी (अभव्य) कहते हैं।

सादि सान्त हैं, २–सिद्धगति की अपेक्षा सिद्ध जीव सादि अनन्त हैं, ३ भव सिद्धिक लब्धि की अपेक्षा अनादि सान्त है ४ अभव सिद्धिक जीव संसार की अपेक्षा अनादि अनन्त है।

६–अहो भगवान ! कर्म कितने हैं ? हे गौतम कर्म ८ हैं—१ ज्ञानावरणीय, २ दर्शनावरणीय, ३ वेदनीय, ४ मोहनीय, ५ आयुष्य, ६ नाम, ७ गोत्र, ८ अन्तराय।

७–अहो भगवान् ! कर्मों की बन्धस्थिति कितनी कही है ? हे गौतम ! ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, अन्तराय इन तीन कर्मों की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त की, उत्कृष्ट ३०–३० कोडाकोडी सागर की, वेदनीय की जघन्य स्थिति दो समय की, उत्कृष्ट ३० कोडाकोडी सागर की, इन चारों कर्मों का अबाधा काल ३–३ हजार वर्ष का है। मोहनीय की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की, उत्कृष्ट ७० कोडाकोडी सागर की है अबाधा काल ७ हजार वर्ष का है। आयुकर्म की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त की, उत्कृष्ट ३३ सागर कोटपूर्व का तीसरा भाग अधिक। नामकर्म और गोत्रकर्म की स्थिति जघन्य ८ मुहूर्त की, उत्कृष्ट २० कोडाकोडी सागर की, अबाधाकाल २ हजार वर्ष का है।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ५८)

श्री भगवतीजी सूत्र के छठे शतक के तीसरे उद्देशे में '५० बोलों की बन्धी' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

वेय संजय दिट्ठि, सएणी भवि दंसण पज्जत्ते ।
ासग परित्तणाण, जोगुवओग आहार सुहुम चरमेसु ॥

१ .वेद द्वार, २ संजन (संयत) द्वार, ३ दृष्टि द्वार, ४ ी द्वार, ५ भवी द्वार, ६ दर्शन द्वार, ७ पर्याप्त द्वार, ८ पक द्वार, ९ परित्त (पड़त) द्वार, १० ज्ञान द्वार, ११ योग , १२ उपयोग द्वार, १३ आहारक द्वार, १४ सूक्ष्म द्वार, १ चरम द्वार ।

१–वेद द्वार के ४ भेद—स्त्रीवेद, पुरुषवेद, नपुं- वेद, अवेदी । २–संजत द्वार के ४ भेद—संजति, असंजति, तासंजति, नोसंजति नो असंजति नो संजतासंजति । ३ दृष्टि- र के ३ भेद—सम्यग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि, सम्यग्मिथ्यादृष्टि। संज्ञी (सन्नी) द्वार के ३ भेद—संज्ञी, असंज्ञी, नोसंज्ञी नो- संज्ञी । ५ भवीद्वार के ३ भेद–भवसिद्धिक, अभवसिद्धिक, नो सिद्धिक नो अभवसिद्धिक । ६ दर्शनद्वार के ४ भेद – चक्षु- र्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन, केवलदर्शन। ७ पर्याप्त द्वार के भेद—पर्याप्ता, अपर्याप्ता, नो पर्याप्ता नो अपर्याप्ता । ८ पक द्वार के २ भेद —भापक, अभापक । ९ परित्त द्वार के भेद—परित्त (पड़त), अपरित्त (अपड़त), नोपरित्त नो परित्त (नो पड़त नो अपड़त) । १० ज्ञानद्वार के ८ भेद— तिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्ययज्ञान, केवलज्ञान, मति ज्ञान, श्रुतअज्ञान, विभंगज्ञान । ११ योगद्वार के ४ भेद--मन ग, वचन योग, काया योग, अयोगी । १२ उपयोग द्वार के

२ भेद—सागारवउता (साकारोपयोग-ज्ञान) अणागारः (अनाकारोपयोग-दर्शन) । १३ आहारक द्वार के दो भेद- आहारक, अनाहारक । १४ सूक्ष्मद्वार के ३ भेद—सूक्ष्म, बा नो सूक्ष्म नो बादर । १५ चरम द्वार के २ भेद—चरम, अच ये कुल ५० बोल हुए ।

इनमें से जिन जिन जीवों में जितने जितने बोल पाये जाते हैं सो समुच्चय (थड़ा) रूप से कहे जाते हैं—पहले नारकी में बोल पावे ३४ । शेष ६ नारकी में बोल पावे ३३-३३ भवनपति वाणव्यन्तर देवों में बोल पावे ३५ । ज्योतिषी देवों में तथा पहले दूसरे देवलोक में बोल पावे ३४ । तीसरे से बारहवें देवलोक तक बोल पावे ३३ । नवग्रैवेयक में बोल पावे ३२ । पांच अनुत्तर विमानों में बोल पावे २६-२६ । पांच स्थावर में बोल पावे २३, बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय में बोल पावे २७ । चौइन्द्रिय में और असन्नी तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय में बोल पावे २८—२८ । सन्नी तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय में बोल पावे ३६ । असन्नी मनुष्य में बोल पावे २२ । सन्नी मनुष्य में बोल पावे ४५ । सिद्ध भगवान् में बोल पावे १६ । समुचय जीव में बोल पावे ५० ।

यन्त्र

नाम	बोल	नाम	बोल	नाम	बोल
हली नारकी में	३४	बारहवें देवलोक तक	३३	चौइन्द्रिय, असन्नी तिर्यञ्च पंचेन्द्रियमें	२८
सरी से सातवीं नारकी तक	३३	नवग्रैवेयक में	३२	सन्नी तिर्यञ्च पचेन्द्रिय में	३६
वनपति, वाणव्यन्तर में	३५	पांच अनुत्तर विमान में	२६	असन्नी मनुष्य में	२२
योतिषी पहला दूसरा देवलोक में	३४	पांच स्थावर में	२३	सन्नी मनुष्य में	४५
ीसरे से		बेइन्द्रिय तेइन्द्रिय में	२७	समुच्चय जीव में	५०

५० बोलों में से किस बोल में कितने कर्मों का बन्ध होता है सो कहते हैं—

१–वेद द्वार–तीन वेदों में ७ कर्मों की नियमा, आयुकर्म की भजना। अवेदी में ७ कर्मों की भजना, आयुकर्म का अबन्ध।

२–संजतद्वार–संजति में ८ कर्मों की भजना। असंजति, संजतासंजति में ७ कर्मों की नियमा, आयुकर्म की भजना। नो संजति नो असंजति नो संजतासंजति में ८ कर्मों का अबन्ध।

३–दृष्टि द्वार—समदृष्टि में ८ कर्मों की भजना। मिथ्यादृष्टि में ७ कर्मों की नियमा, आयुकर्म की भजना। मिश्रदृष्टि में ७ कर्मों की नियमा, आयुकर्म का अबन्ध।

४—संज्ञी (सन्नी) द्वार—संज्ञी में ७ कर्मों की भजना, वेदनीय की नियमा। असंज्ञी में ७ कर्मों की नियमा, आयुकर्म की भजना। नोसंज्ञी नो असंज्ञी में वेदनीय की भजना, ७ कर्मों का अबन्ध।

५—भवी द्वार—भवी में ८ कर्मों की भजना। अभवी में ७ कर्मों की नियमा, आयुकर्म की भजना। नो भवी नो अभवी में ८ कर्मों का अबन्ध।

६ दर्शनद्वार—तीन दर्शन (चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन) में ७ कर्मों की भजना, वेदनीय की नियमा, केवल दर्शन में वेदनीय की भजना. ७ कर्मों का अबन्ध।

७—पर्याप्तद्वार- पर्याप्ता में ८ कर्मों की भजना। अपर्याप्ता में ७ कर्मों की नियमा, आयुकर्म की भजना। नो पर्याप्ता नो अपर्याप्ता में ८ कर्मों का अबन्ध।

८—भाषकद्वार— भाषक में ७ कर्मों की भजना, वेदनीय की नियमा। अभाषक में ८ कर्मों की भजना।

९—परित्त (पड़त) द्वार—परित्त (पड़त) में ८ कर्मों की भजना। अपरित्त (अपड़त) में ७ कर्मों की नियमा, आयुकर्म की भजना। नोपरित्त नोअपरित्त (नोपड़त नो अपड़त) में ८ कर्मों का अबन्ध।

१०—ज्ञान द्वार—चार ज्ञान में ७ कर्मों की भजना, वेदनीय की नियमा। केवलज्ञान में वेदनीय की भजना, ७ कर्मों

अबन्ध। तीन अज्ञान में ७ कर्मों की नियमा, आयुकर्म की भजना।

११–योगद्वार—तीन योग में ७ कर्मों की भजना, वेदनीय की नियमा। अयोगी (अजोगी) में ८ कर्मों का अबन्ध।

१२–उपयोग द्वार–सागरवउत्ता अणागारवउत्ता (साकारोपयोग, अनाकारोपयोग) में ८ कर्मों की भजना।

१३–आहारक द्वार—आहारक में ७ कर्मों की भजना, वेदनीय की नियमा। अनाहारक में ७ कर्मों की भजना, आयुकर्म का अबन्ध।

१४–सूक्ष्म द्वार–सूक्ष्म में ७ कर्मों की नियमा, आयुकर्म की भजना। बादर में ८ कर्मों की भजना। नो सूक्ष्म नो बादर में ८ कर्मों का अबन्ध।

१५–चरम द्वार–चरम और अचरम में ७ कर्मों की भजना।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ४६)

श्री भगवतीजी सूत्र के छठे शतक के चौथे उद्देशे में 'काला देश' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

सपएसा आहारग भविय सण्णी, लेस्सा दिट्ठि संजय कसाए।
णाणे जोगुवओगे, वेदे य सरीर पज्जत्ती ॥ १ ॥

१ सप्रदेश द्वार, २ आहारक द्वार, ३ भव्य द्वार, ४ संज्ञी द्वार, ५ लेश्या द्वार, ६ दृष्टि द्वार, ७ संयत द्वार, ८ कषाय

४-संज्ञी (सन्नी) द्वार—संज्ञी में ७ कर्मों की भजना, वेदनीय की नियमा। असंज्ञी में ७ कर्मों की नियमा, आयुकर्म की भजना। नोसंज्ञी नो असंज्ञी में वेदनीय की भजना, ७ कर्मों का अबन्ध।

५-भवी द्वार—भवी में ८ कर्मों की भजना। अभवी में ७ कर्मों की नियमा, आयुकर्म की भजना। नो भवी नो अभवी में ८ कर्मों का अबन्ध।

६ दर्शनद्वार-तीन दर्शन (चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन) में ७ कर्मों की भजना, वेदनीय की नियमा। केवल दर्शन में वेदनीय की भजना, ७ कर्मों का अबन्ध।

७-पर्याप्तद्वार-पर्याप्ता में ८ कर्मों की भजना। अपर्याप्ता में ७ कर्मों की नियमा, आयुकर्म की भजना। नो पर्याप्ता नो अपर्याप्ता में ८ कर्मों का अबन्ध।

८-भाषकद्वार—भाषक में ७ कर्मों की भजना, वेदनीय की नियमा। अभाषक में ८ कर्मों की भजना।

९-परित्त (पड़त) द्वार—परित्त (पड़त) में ८ कर्मों की भजना। अपरित्त (अपड़त) में ७ कर्मों की नियमा, आयुकर्म की भजना। नोपरित्त नोअपरित्त (नोपड़त नो अपड़त) में ८ कर्मों का अबन्ध।

१०-ज्ञान द्वार-चार ज्ञान में ७ कर्मों की भजना, वेदनीय की नियमा। केवलज्ञान में वेदनीय की भजना, ७ कर्मों

बन्ध। तीन अज्ञान में ७ कर्मों की नियमा, आयुकर्म की भजना।

११-योगद्वार—तीन योग में ७ कर्मों की भजना, वेदनीय की नियमा। अयोगी (अजोगी) में ८ कर्मों का अबन्ध।

१२-उपयोग द्वार-सागरवउत्ता अणागारवउत्ता (साकारोपयोग, अनाकारोपयोग) में ८ कर्मों की भजना।

१३-आहारक द्वार—आहारक में ७ कर्मों की भजना, वेदनीय की नियमा। अनाहारक में ७ कर्मों की भजना, आयुकर्म का अबन्ध।

१४-सूक्ष्म द्वार-सूक्ष्म में ७ कर्मों की नियमा, आयुकर्म की भजना। बादर में ८ कर्मों की भजना। नो सूक्ष्म नो बादर में ८ कर्मों का अबन्ध।

१५-चरम द्वार-चरम और अचरम में ७ कर्मों की भजना।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ४६)

श्री भगवतीजी सूत्र के छठे शतक के चौथे उद्देशे में 'काला देश' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

सपएसा आहारग भविय सण्णी, लेस्सा दिट्ठि संजय कसाए।
णाणे जोगुवओगे, वेदे य सरीर पज्जत्ती ॥ १ ॥

१ सप्रदेश द्वार, २ आहारक द्वार, ३ भव्य द्वार, ४ संज्ञी द्वार, ५ लेश्या द्वार, ६ दृष्टि द्वार, ७ संयत द्वार, ८ कषाय

द्वार, ६ ज्ञान द्वार, १० योग द्वार, ११ उपयोग द्वार, १ वेद द्वार, १३ शरीर द्वार, १४ पर्याप्ति द्वार।

१—सप्रदेश द्वार—अहो भगवान्! क्या जीव *सप्रदे है या +अप्रदेशी (पहिले समयरा उत्पन्न हुवा) है? गौतम! सप्रदेशी अप्रदेशी के ६ भांगे होते हैं—१ सिय सप्रदेशी, २ सिय अप्रदेशी, ३ सप्रदेशी एक अप्रदेशी एक, ४ सप्रदेशी एक अप्रदेशी बहुत (घणा), ५ सप्रदेशी बहुत (घणा) अप्रदेशी एक, ६ सप्रदेशी बहुत (घणा) अप्रदेशी बहुत (घणा)।

समुच्चय जीव काल आसरी—एक जीव और बहुत जीव नियमा सप्रदेशी। २४ दण्डक के जीव, सिद्ध भगवान् काल आसरी-एक जीव सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी। बहुत जीव आसरी-एकेन्द्रिय को छोड़ कर तीन भांगे होते हैं—१ सब सप्रदेशी (सव्वे वि ताव हुज्जा सपएसा), २ सप्रदेशी बहुत अप्रदेशी एक, ३ सप्रदेशी बहुत, अप्रदेशी बहुत। एकेन्द्रिय में भांगा पावे १ तीसरा (सप्रदेशी बहुत अप्रदेशी बहुत)।

२—आहारक द्वार—अहो भगवान! क्या आहारक सप्रदेशी है या अप्रदेशी है? हे गौतम! आहारक समुच्चय जीव

---

* जिसको उत्पन्न हुवे को २-३ या ज्यादा समय होगया है उसे सप्रदेशी कहते हैं।

+ जिसको उत्पन्न हुवे को १ समय ही हुवा है उसे अप्रदेशी कहते हैं।

शाश्वते बोल हैं उनमें ३ भांगे होते हैं और अशाश्वते में ६ भांगे होवे हैं।

१४ दण्डक–एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी। बहुत जीव आसरी–जीव एकेन्द्रिय को छोड़ कर तीन भांगे होते हैं। जीव एकेन्द्रिय में भांगा पावे एक–तीसरा (सप्रदेशी बहुत अप्रदेशी बहुत)। अनाहारक–समुच्चय जीव २४ दण्डक–एक जीव सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी। बहुत जीव आसरी–जीव एकेन्द्रिय को छोड़ कर छह भांगे होते हैं। जीव एकेन्द्रिय में भांगा पावे १ तीसरा। सिद्ध भगवान् आसरी–एक जीव सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी तीन भांगे होते हैं।

३—भव्य (भवी) द्वार–अहो भगवान्! क्या भवी जीव सप्रदेशी है या अप्रदेशी? हे गौतम! भवी और अभवी एक जीव और बहुत जीव नियमा सप्रदेशी हैं। २४ दण्डक के जीव भवी अभवी–एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी। बहुत जीव आसरी एकेन्द्रिय को छोड़ कर तीन भांगे पाये जाते हैं। एकेन्द्रिय में भांगा पावे १ तीसरा। नोभवी नोअभवी जीव सिद्ध–एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी तीन भांगे पाये जाते हैं।

४—संज्ञीद्वार–संज्ञी समुच्चय जीव, १६ दण्डक–एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी–जीव और १६ दण्डक में तीन तीन भांगे होते हैं। असंज्ञी समुच्चय जीव २२ दण्डक–एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी। बहुत जीव आसरी–समुच्चय जीव तीन विकलेन्द्रिय और तिर्यंच

पंचेन्द्रिय इनमें भांगा पावे तीन तीन। एकेन्द्रिय में भांगा पावे
तीसरा। नारकी देवता मनुष्य में भांगे पावे छह छह। नो संज्ञी नो
असंज्ञी जीव, मनुष्य, सिद्ध एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी
सिय अप्रदेशी। बहुत जीव आसरी जीव, मनुष्य, सिद्धों में तीन
तीन भांगे होते हैं।

५—लेश्या द्वार—अहो भगवान्! क्या सलेशी सप्रदेशी है
या अप्रदेशी है? हे गौतम! सलेशी समुच्चय जीव में-एक
जीव बहुत जीव आसरी नियमा सप्रदेशी। २४ दण्डक के जीव
और सिद्ध भगवान् में—एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय
अप्रदेशी। बहुत जीव आसरी—एकेन्द्रिय को छोड़ कर तीन
तीन भांगे होते हैं, एकेन्द्रिय में एक-तीसरा भांगा होता
है। कृष्ण नील कापोतलेशी समुच्चय जीव, २२ दण्डक में एक
जीव सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी। बहुत जीव आसरी—जीव
एकेन्द्रिय को छोड़ कर तीन तीन भांगे होते हैं। जीव एकेन्द्रिय
में भांगा पावे १ तीसरा। तेजो लेशी समुचय जीव, १८ दण्डक
में—एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी। बहुत जीव
आसरी—समुच्चय जीव और १५ दण्डक में तीन तीन भांगे
होते हैं। पृथ्वी पानी वनस्पति में छह छह भांगे होते हैं। पद्म
लेशी शुक्ललेशी समुच्चय जीव, ३ दण्डक में—एक जीव आसरी
सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी तीन तीन भांगे
होते हैं। अलेशी जीव, मनुष्य सिद्ध में—एक जीव आसरी सिय

देशी सिय अप्रदेशी । बहुत जीव आसरी–जीव और सिद्ध तीन तीन भांगे होते हैं, मनुष्य में छह भांगे होते हैं ।

६ दृष्टिद्वार—समदृष्टि, समुच्चय जीव १६ दण्डक सिद्ध वान् में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, त जीव आसरी तीन भांगे होते हैं, नवरं तीन विकलेन्द्रिय छह भांगे होते हैं । मिथ्यादृष्टि, समुच्चय जीव २४ दण्डक में जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी । बहुत जीव सरी–एकेन्द्रिय को छोड़ कर समुच्चय जीव, १६ दंडक तीन तीन भांगे होते हैं । एकेन्द्रिय में १ तीसरा भांगा होता । सम्यग्मिथ्यादृष्टि (मिश्रदृष्टि), समुच्चय जीव, १६ डक आसरी एक जीव सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत व आसरी छह छह भांगे होते हैं ।

७ संयत द्वार—संजति में समुच्चय जीव मनुष्य, संजता-ति में समुच्चय जीव मनुष्य, तिर्यञ्च एक जीव आसरी सिय देशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी तीन तीन भांगे ते हैं । असंजति, समुच्चय जीव २४ दण्डक में एक जीव सरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी–एके-य को छोड़ कर समुच्चय जीव, १९ दंडक में तीन-तीन भांगे ते हैं, एकेन्द्रिय में १ तीसरा भांगा होता है । नो संजति नो संजति नो संजतासंजति जीव सिद्ध भगवान् एक जीव आसरी य सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी तीन भांगे होते हैं ।

८ कषाय द्वार—सकषायी समुचय जीव २४ दण्डक में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी एकेन्द्रिय को छोड़ कर* समुचय जीव १९ दण्डक में तीन तीन भांगे, एकेन्द्रिय में एक तीसरा भांगा। क्रोधकषायी समुचय जीव २४ दण्डक में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी जीव एकेन्द्रिय को छोड़ कर तीन तीन भांगे, जीव एकेन्द्रिय में तीसरा भांगा, नवरं देवता में छह भांगे। मानकषायी मायाकषायी समुचय जीव, २४ दण्डक में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी जीव एकेन्द्रिय को छोड़ कर तीन-तीन भांगे, जीव एकेन्द्रिय में तीसरा भांगा नवरं नारकी देवता में छह २ भांगे। लोभ कषा

* शंका—समुच्चय जीव में सकषायी आसरी तीन भांगे कहे और क्रोध मान माया लोभ आसरी एक तीसरा भांगा ही कहा, इसका क्या कारण ?

समाधान—सकषायी में अकषायीपने से आया हुआ एक जीव पाया जा सकता है। इस कारण से तीन भांगे बनते हैं। क्रोध, मान, माया लोभ में एकेन्द्रिय आसरी अनन्ता ही जीव क्रोध कषायी के मानकषायी और मानकषायी के मायाकषायी इत्यादि रूप से अदल बदल रूप से होते रहते हैं। इस कारण से एक जीव क्रोधकषायी, मानकषायी, मायाकषायी, लोभकषायी नहीं पाया जाता। इसलिए एक तीसरा भांगा ही बनता है। इतनी जगह समुच्चय जीव में एकेन्द्रिय साथ में होते हुए भी तीन तीन भांगे हैं—१ असंज्ञी में, २ मिथ्यादृष्टि में, ३ असंयति में, ४ सकषायी में, ५ समुच्चय अज्ञानी, मति अज्ञानी, श्रुत अज्ञानी में, ६ सवेदी नपुंसक वेदी में, ७ काय योगी में।

मुच्चय जीव २४ दण्डक में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी
य अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी जीव एकेन्द्रिय को छोड़ कर
न तीन भांगे, जीव एकेन्द्रिय में एक–तीसरा भांगा नवरं नारकी
छह भांगे। अकषायी जीव मनुष्य सिद्ध भगवान् में एक जीव
ासरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी तीन
न भांगे होते हैं।

६ ज्ञान द्वार— सज्ञान (समुच्चय ज्ञान) समुच्चय जीव
६ दण्डक सिद्ध भगवान् में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी
य अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी तीन तीन भांगे नवरं विकले-
द्रय में छह भांगे होते हैं। मतिज्ञान, श्रुतज्ञान समुचय जीव
६ दण्डक में, अवधिज्ञान समुचय जीव १६ दण्डक में,
नःपर्यय ज्ञान, केवलज्ञान समुच्चय जीव मनुष्य में एक जीव
ासरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी तीन
न भांगे नवरं मतिज्ञान, श्रुतज्ञान में तीन विकलेन्द्रिय में छह
भांगे होते हैं। समुच्चय अज्ञान, मति अज्ञान, श्रुत अज्ञान समु-
च्चय जीव २४ दण्डक में, विभंग ज्ञान समुचय जीव १६
दण्डक में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत
जीव आसरी एकेन्द्रिय को छोड़ कर तीन तीन भांगे, एकेन्द्रिय
में एक तीसरा भांगा होता है।

१० योग द्वार—सयोगी में समुचय एक जीव आसरी
बहुत जीव आसरी नियमा सप्रदेशी। २४ दण्डक में एक जीव
आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी एके-

न्द्रिय को छोड़कर तीन तीन भांगे, एकेन्द्रिय में एक तीसरा
भांगा होता है। मन योगी समुच्चय जीव १६ दण्डक में,
वचन योगी समुच्चय जीव १९ दण्डक में एक जीव आसरी
सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी तीन तीन
भांगे होते हैं। काययोगी—समुच्चय जीव २४ दण्डक एक जी
आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी स
च्चय जीव और १९ दण्डक में तीन तीन भांगे होते हैं अ
एकेन्द्रिय में एक तीसरा भांगा होता है। अयोगी जीव मनु
सिद्ध भगवान् में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेश
बहुत जीव आसरी जीव सिद्ध भगवान् में तीन तीन भांगे, मनु
में छह भांगे होते हैं।

११ उपयोग द्वार—सागारवउत्ताअणागारवउत्ता (सा
उपयोग, अनाकार उपयोग), समुच्चय जीव २४ दण्डक
भगवान् में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदे
बहुत जीव आसरी जीव एकेन्द्रिय छोड़कर बाकी १९ दण
में तीन तीन भांगे, जीव एकेन्द्रिय में एक तीसरा भांगा होता

१२ वेद द्वार—सवेदी समुच्चय जीव, २४ दण्डक में
जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आ
एकेन्द्रिय को छोड़ कर समुचय जीव और १९ दण्डक में
तीन भांगे, एकेन्द्रिय में एक तीसरा भांगा होता है। स्त्री
पुरुषवेद समुचय जीव १५ दण्डक में, नपुंसक वेद समु

व ११ दण्डक में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय
प्रदेशी, बहुत जीव आसरी स्त्रीवेद पुरुषवेद में जीवादि में
समुच्चय जीव और १५ दण्डक में) तीन तीन भांगे होते
। नपुंसक वेद में एकेन्द्रिय को छोड़ कर समुच्चय जीव और
दण्डक में तीन तीन भांगे, एकेन्द्रिय में एक तीसरा भांगा
ता है। अवेदी जीव मनुष्य सिद्ध भगवान् में एक जीव आसरी
य सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी तीन तीन
गे होते हैं।

१३ शरीर द्वार—सशरीरी और तैजस कार्मण शरीर में
मुच्चय एक जीव आसरी, बहुत जीव आसरी नियमा सप्रदेशी।
.४ दण्डक में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी-
बहुत जीव आसरी एकेन्द्रिय को छोड़कर तीन तीन भांगे, एके-
न्द्रिय में एक तीसरा भांगा होता है। अशरीरी समुच्चय जीव,
सिद्ध भगवान् में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी,
बहुत जीव आसरी तीन तीन भांगे होते हैं। औदारिक शरीर
समुच्चय जीव, १० दण्डक में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी
सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी जीव एकेन्द्रिय को छोड़कर
तीन तीन भांगे, जीव एकेन्द्रिय में एक तीसरा भांगा होता है।
वैक्रिय शरीर १७ दंडक में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय
अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी १६ दंडक में तीन तीन भांगे
समुच्चय जीव वायुकाय में एक तीसरा भांगा होता है। आहा-

रक शरीर जीव मनुष्य में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी छह भांगे होते हैं।

१४ पर्याप्ति द्वार—आहार पर्याप्ति शरीरपर्याप्ति इन्द्रिय पर्याप्ति श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति में समुच्चय जीव, २४ दंडक में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी समुच्चय जीव एकेन्द्रिय को छोड़ कर तीन तीन भांगे, समुच्चय जीव एकेन्द्रिय में एक–तीसरा भांगा होता है। भाषा पर्याप्ति समुच्चय जीव १६ दंडक में, मनः पर्याप्ति में समुच्चय जीव १६ दंडक में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी बहुत जीव आसरी तीन तीन भांगे होते हैं। आहार अपर्याप्ति समुच्चय जीव, २४ दंडक में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी जीव एकेन्द्रिय को छोड़ कर छह छह भांगे, जीव एकेन्द्रिय में एक तीसरा भांगा होता है। शरीर अपर्याप्ति इन्द्रिय अपर्याप्ति श्वासोच्छ्वास अपर्याप्ति समुच्चय जीव २४ दंडक में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी जीव एकेन्द्रिय में एक–तीसरा भांगा होता है, नारकी देवता मनुष्य में छह छह भांगे होते हैं। तीन विकलेन्द्रिय और तिर्यञ्च पंचेन्द्रिय में तीन तीन भांगे होते हैं। भाषा अपर्याप्ति में समुच्चय जीव, १६ दंडक में, मनः अपर्याप्ति में समुच्चय जीव १६ दंडक में एक जीव आसरी सिय सप्रदेशी सिय अप्रदेशी, बहुत जीव आसरी तीन तीन भांगे नवरं नारकी देवता मनुष्य में छह छह भांगे होते हैं।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ५०)

श्री भगवतीजी सूत्र के छठे शतक के चौथे देशे में 'पच्चक्खाण' का थोकड़ा चलता है सो हते हैं—

पच्चक्खाणं जाणइ, कुव्वइ तिण्णेव आउणिव्वत्ती ।
सपएसुद्देसम्मि य, एमेए दंडगा चउरो ॥

१—अहो भगवान्! क्या जीव पच्चक्खाणी है, अपच्च-खाणी है या पच्चक्खाणापच्चक्खाणी है? हे गौतम! समु-च्चय जीव पच्चक्खाणी भी है, अपच्चक्खाणी भी है, पच्च-क्खाणापच्चक्खाणी भी है। नारकी, देवता, पांच स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय ये २२ दंडक अपच्चक्खाणी। तिर्यंचपंचेन्द्रिय में भांगा पावे २—अपच्चक्खाणी और पच्चक्खाणापच्चक्खाणी। मनुष्य में भांगा पावे तीनों ही, समुच्चय जीव माफक कह देणा।

२—अहो भगवान्! क्या जीव पच्चक्खाण को जानता है, अपच्चक्खाण को जानता है, पच्चक्खाणापच्चक्खाण को जानता है? हे गौतम! १६ दण्डक (नारकी, देवता, तिर्यंच पंचेन्द्रिय, मनुष्य) के समदृष्टि पंचेन्द्रिय जीव तीनों ही भांगों को (पच्चक्खाण को, अपच्चक्खाण को और पच्चक्खाणा-पच्चक्खाण को) जानते हैं। शेष ८ दंडक (पांच स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय) के जीव तीनों ही भांगों को नहीं जानते हैं।

३—अहो भगवान्! क्या जीव पच्चक्खाण करता है, अपच्चक्खाण करता है, पच्चक्खाणापच्चक्खाण करता है?

गौतम ! समुच्चय जीव, मनुष्य तीनों ही भांगों को करते है तिर्यंच पंचेन्द्रिय २ भांगों को (अपच्चक्खाण और पच्चक्खाण पच्चक्खाण को) करता है । शेष २२ दंडक के जीव सिर्फ १ भांगा (अपच्चक्खाण) करते हैं ।

४—अहो भगवान् ! क्या जीव पच्चक्खाण में आयु बांधते हैं या अपच्चक्खाण में आयुष्य बांधते हैं ? या पच्च क्खाणापच्चक्खाण में आयुष्य बांधते हैं ? हे गौतम ! समुच्च जीव और वैमानिक देवों में उत्पन्न होने वाले जीव पच्चक्खा आदि तीनों भांगों में आयुष्य बांधते है । शेष २३ दंडक जीव अपच्चक्खाण में आयुष्य बांधते हैं । पच्चक्खाण की ग वैमानिक ही है ।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

॰* (थोकड़ा नं० ५१)

श्री भगवतीजी सूत्र के छठे शतक के पांच उद्देशे में 'तमस्काय' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! तमस्काय किस की बनी हुई है ? गौतम ! तमस्काय पानी की बनी हुई है ।

२—अहो भगवान् ! तमस्काय कहाँ से उठी है (शुरू हु है) और इसका अन्त कहाँ हुआ है ? हे गौतम ! इस जम्बूद्वी के बाहर असंख्याता द्वीप समुद्रों को उल्लंघन कर आगे जा पर अरुणवर द्वीप आता है । उसकी वेदिका के बाहर के च

न्त से ४२ हजार योजन अरुणोदक समुद्र में जाने पर वहाँ
ल के उपरिभाग से तमस्काया उठी है। ❀एक प्रदेशी श्रेणी
१२१ योजन ऊंची गई है। पीछे तिरछी विस्तृत होती हुई
ला दूसरा तीसरा चौथा, इन चार देवलोकों को ढक कर
चवें ब्रह्मदेवलोक के तीसरे रिष्ट विमान पाथड़े तक चली गई
। यहाँ इसका अन्त है।

२—अहो भगवान्! तमस्काय का क्या संठाण (संस्थान)
? हे गौतम! नीचे तो शरावला (मिट्टी के दीपक) के
कार है, ऊपर कूकड़ पींजरा के आकार है।

❀ यहाँ 'एक प्रदेशी श्रेणी' का मतलब एक प्रदेश वाली श्रेणी ऐसा
करना चाहिए, किन्तु यहाँ एक प्रदेशी श्रेणी का मतलब 'समभित्ति'
श्रेणी अर्थात् नीचे से लेकर ऊपर तक एक समान भींत (दीवाल)
श्रेणी है। यहाँ 'एक प्रदेश वाली श्रेणी' ऐसा अर्थ करना ठीक नहीं
सकता है क्योंकि तमस्काय स्तिबुकाकार जल जीव रूप है। उन
वों के रहने के लिये असंख्यात आकाशप्रदेशों की आवश्यकता है।
प्रदेश वाली श्रेणी का विस्तार बहुत थोड़ा होता है। उसमें वे जल
व कैसे रह सकते हैं? इसलिए यहाँ एक प्रदेश वाली श्रेणी ऐसा अर्थ
ित नहीं होता है किंतु 'समभित्ति रूप श्रेणी' यह अर्थ घटित होता है।

४—अहो भगवान् ! तमस्काय की लम्बाई चौड़ाई और परिधि कितनी कही गई है ? हे गौतम ! तमस्काय दो प्रकार की कही गई है—एक तो संख्याता विस्तार वाली और दूसरी असंख्याता विस्तार वाली। संख्याता विस्तार वाली तमस्काय की लम्बाई चौड़ाई संख्याता हजार योजन की है और परिधि असंख्याता हजार योजन की है। असंख्याता विस्तार वाली तमस्काय की लम्बाई चौड़ाई असंख्याता हजार योजन की है और परिधि असंख्याता हजार योजन की है।

५—अहो भगवान् ! तमस्काय कितनी मोटी है ? हे गौतम ! कोई महर्द्धिक देव, जो तीन चुटकी बजावे उतने समय में इस जम्बूद्वीप की २१ बार परिक्रमा करे, ऐसी शीघ्र गति से छह मास तक चले तो संख्याता विस्तार वाली तमस्काय का पार पावे किन्तु असंख्याता विस्तार वाली तमस्काय का पार नहीं पावे, ऐसी मोटी तमस्काय है।

६—अहो भगवान् ! तमस्काय में घर, दूकान, ग्रामादि हैं ? हे गौतम ! नहीं हैं।

७—अहो भगवान् ! तमस्काय में गाज, बीज, बादल, बरसात है ? हे गौतम ! है।

८—अहो भगवान् ! तमस्काय में गाज, बीज, बादल, बरसात कौन करते हैं ? हे गौतम ! देव, असुरकुमार, नागकुमार करते हैं।

९—अहो भगवान् ! क्या तमस्काय में बादर पृथ्वीकाय और बादर अग्निकाय है ? हे गौतम ! नहीं है परन्तु विग्रहगति

ापन्न (विग्रहगति करते हुए) बादर पृथ्वीकाय और बादर ग्निकाय के जीव हो सकते हैं।

१०—अहो भगवान् ! क्या तमस्काय में चन्द्र, सूर्य ग्रह, त्र, तारा हैं ? हे गौतम ! चन्द्र, सूर्य आदि नहीं हैं किन्तु स्काय के पास में चन्द्र-सूर्य की प्रभा पड़ती है परन्तु वह प्रभा सरीखी है।

११—अहो भगवान् ! तमस्काय का वर्ण कैसा है ? हे तम ! तमस्काय का वर्ण काला भयंकर, डरावना है। कितनेक न तमस्काय को देखते ही क्षोभ पाते हैं और अगर कोई देवता मस्काय में प्रवेश करता है तो शरीर और मन की चंचलता से ल्दी उसको पार कर जाता है।

१२—अहो भगवान् ! तमस्काय के कितने नाम हैं ? हे तम ! तमस्काय के* १३ नाम हैं—१ तम, २ तमस्काय,

* यहां तमस्काय के १३ नाम कहे गये हैं। उनका अर्थ इस प्रकार —१ अन्धकार रूप होने से इसको 'तम' कहते हैं। २ अन्धकार का गला (समूह) रूप होने से इसे 'तमस्काय' कहते हैं। ३ तमो रूप होने इसे अन्धकार कहते हैं। ४ महातमो रूप होने से इसे 'महाअन्धकार' ते हैं। ५-६ लोक में इस प्रकार का दूसरा अन्धकार न होने से इसे ोकान्धकार' और 'लोकतमिस्र' कहते हैं। ७-८ तमस्काय में किसी ार का उद्योत (प्रकाश) न होने से वह देवों के लिए भी अन्धकार प है, इसलिए इसको देवअन्धकार और देवतमिस्र कहते हैं। ९ बल- न देवता के भय से भागते हुए देवता के लिए यह एक प्रकार का गल रूप होने से यह शरणभूत है, इसलिए इसको 'देव अरण्य' कहते । १० जिस प्रकार चक्रव्यूह का भेदन करना कठिन होता है, उसी

३ अन्धकार, ४ महाअन्धकार, ५ लोक अन्धकार, ६ लोक तमिस्र, ७ देव अन्धकार, ८ देव तमिस्र, ९ देव अरण्य, १० देव व्यूह, ११ देव परिघ, १२ देव प्रतिक्षोभ, १३ अरुणोदक समुद्र ।

१३—अहो भगवान्! तमस्काय क्या पृथ्वी का परिणाम है, पानी का परिणाम है, जीव का परिणाम है अथवा पुद्गल का परिणाम है ? हे गौतम ! तमस्काय पृथ्वी का परिणाम नहीं है, किन्तु पानी का, जीव का और पुद्गल का परिणाम है।

१४—अहो भगवान्! क्या सब प्राणी भूत जीव सत्त्व तमस्काय में पृथ्वीकायपणे यावत् त्रसकायपणे पहले उत्पन्न हुए हैं ? हे गौतम ! सब प्राणी भूत जीव सत्त्व अनेक बार अथवा अनन्त बार तमस्काय में पृथ्वीकायपणे यावत् त्रसकायपणे उत्पन्न हुए हैं परन्तु बादर पृथ्वीकायपणे और बादर तेउकायपणे उत्पन्न नहीं हुए हैं।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

प्रकार यह तमस्काया देवताओं के लिये दुर्भेद्य है, इसका पार करना कठिन है, इसलिए इसको 'देव व्यूह' कहते हैं। ११ तमस्काय को देखकर देवता भयभीत होते हैं, इसलिए वह उनके गमन में बाधक है अतः इसको 'देवपरिघ' कहते हैं। १२ तमस्काय देवताओं के लिए क्षोभ का कारण है, इसलिए इसको 'देव प्रतिक्षोभ' कहते हैं। १३ तमस्काय अरुणोदक समुद्र के पानी का विकार है, इसलिए इसको 'अरुणोदक समुद्र' कहते हैं।

(थोकड़ा नं० ५२)

श्री भगवतीजी सूत्र के छठे शतक के पांचवें देशे में '८ कृष्णराजि और लोकान्तिक देवों' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! कृष्णराजियाँ कितनी कही गई हैं ? हे गौतम ! कृष्णराजियाँ ८ कही गई हैं !

२—अहो भगवान् ! ये कृष्णराजियाँ कहाँ पर हैं ? हे गौतम ! ये पांचवें देवलोक के तीसरे रिष्ट पड़तल में हैं । पूर्व में दो, पश्चिम में दो, उत्तर में दो और दक्षिण में दो, इस तरह चार दिशाओं में ८ कृष्णराजियाँ सम चौरस अखाड़ा के आकार हैं । पूर्व दिशा की आभ्यन्तर कृष्णराजि ने दक्षिण दिशा की बाह्य कृष्णराजि को स्पर्शी है । इसी तरह चारों दिशा में परस्पर स्पर्शी है । पूर्व और पश्चिम की बाह्य कृष्णराजि छह-कूणी (छह कोणों वाली षट्कोण) है* । दक्षिण और उत्तर की बाह्य कृष्णराजि तिखुणी (त्रिकोण) है । बाकी आभ्यन्तर की चारों ही कृष्णराजियाँ चोखुणी (चतुष्कोण) है ।

३—अहो भगवान् ! कृष्णराजियों की लम्बाई, चौड़ाई और परिधि कितनी है ? हे गौतम ! संख्याता योजन की चौड़ी है, असंख्याता योजन की लम्बी है और असंख्याता योजन की परिधि है ।

---

* गाथा इसप्रकार है—
पुव्वाऽवरा छलंसा, तंसा पुण दाहिणुत्तरा बज्झा ।
अब्भिंतर चउरंस, सव्वा वि य कण्हराईओ

४—अहो भगवान् ? कृष्णराजियाँ कितनी मोटी हैं ? हे गौतम ! कोई महाऋद्धि का देवता जो तीन चुटकी बजावे उतने में इस जम्बूद्वीप की २१ परिक्रमा करे ऐसी तीव्र गति से अर्द्धमास (१५ दिन) तक जावे तो भी कोई कृष्णराजी का पार पावे और कोई का पार नहीं पावे, ऐसी कृष्णराजियें मोटी हैं ।

५—अहो भगवान् ! क्या कृष्णराजियों में घर दुकान आदि हैं ? हे गौतम ! नहीं हैं ।

६—अहो भगवान् ! क्या कृष्णराजियों में ग्रामादि हैं ? हे गौतम ! नहीं हैं ।

७—अहो भगवान् ! क्या कृष्णराजियों में गाज बीज आदि है, बरसात बरसती है ? हाँ, गौतम ! गाज बीज आदि है, बरसात भी बरसती है ।

८—अहो भगवान् ! यह गाज, बीज, बरसात कौन करता है ? हे गौतम ! यह देव (वैमानिक देव) करता है किन्तु असुरकुमार नागकुमार नहीं करते हैं ।

९—अहो भगवान् ! क्या कृष्णराजियों में बादर अप्काय, बादर अग्निकाय, और बादर वनस्पतिकाय है ? हे गौतम ! नहीं है, याने विग्रहगति समापन्न (वाटे वहता) जीव सिवाय नहीं ।

१०—अहो भगवान् ! क्या कृष्णराजियों में सूर्य, चन्द्र, ग्रह, नक्षत्र तारा हैं ? हे गौतम ! नहीं है ।

११—अहो भगवान् ! क्या कृष्णराजियों में सूर्य चन्द्रमा प्रभा (कान्ति) है ? हे गौतम ! नहीं है ।

१२—अहो भगवान् ! कृष्णराजियों का वर्ण कैसा है ? गौतम ! कृष्णराजियों को देख कर देवता भी भय पावे, ऐसा का काला वर्ण है ।

१३—अहो भगवान् ! कृष्णराजियों के कितने नाम हैं ? गौतम ! कृष्णराजियों के ८ *नाम हैं—१ कृष्णराजि, २ मेघजि, ३ मघा, ४ माघवती, ५ वातपरिघा, ६ वात परिखोभा, देवपरिघा, ८ देवपरिखोभा ।

१४—अहो भगवान् ! क्या कृष्णराजियाँ पृथ्वी का परि-

---

*यहाँ पर कृष्णराजि के ८ नाम कहे गये हैं । उनका अर्थ इस प्रकार —१ काले पुद्गलों की रेखा को 'कृष्णराजि' कहते हैं । २ काले मेघ रेखा के तुल्य होने से इसको 'मेघराजि' कहते हैं । ३ 'मघा' छठी की का नाम है । छठी नारकी के समान अन्धकार वाली होने से को 'मघा' कहते हैं । ४ 'माघवती' सातवीं नरक का नाम है । सातवीं की के समान अन्धकार वाली होने से इसको 'माघवती' कहते हैं । कृष्णराजि वायु के समूह के समान गाढ़ अन्धकार वाली है, परिघ आगल) के समान दुर्लंघ्य (मुश्किल से उल्लंघन करने योग्य) ने से इसको 'वातपरिघा' कहते हैं । ६ कृष्णराजि वायु के समूह के मान गाढ़ अन्धकार वाली होने से परिक्षोभ (भय) उत्पन्न करने वाली इसलिए इसको 'वातपरिखोभा' कहते हैं । ७ दुर्लंघ्य होने से कृष्णजि देवताओं के लिए 'परिघ' आगल के समान है, इसलिए इसको वपरिघा' कहते हैं । ८ देवताओं को भी क्षोभ (भय) उत्पन्न करने ली होने से कृष्णराजि को 'देवपरिखोभा' कहते हैं ।

हैं। इस तरह सब के नरकावासा कह देना यावत् पांच अनुत्तर
विमान तक कह देना चाहिए।

३—अहो भगवान्! जो जीव मारणान्तिक समुद्घात
करके रत्नप्रभा नरक में नारकीपने उत्पन्न होते हैं तो क्या वे
जीव वहाँ जाकर आहार करते हैं? आहार को परिणमाते हैं?
और शरीर बांधते हैं? हे गौतम! कितनेक जीव* वहाँ जाकर
आहार लेते हैं, परिणमाते हैं, शरीर बांधते हैं। और कितनेक जीव†
वहाँ जाकर वापिस अपने पहले के शरीर में आजाते हैं और
फिर दूसरी बार मारणान्तिक समुद्घात करके मर कर वापिस
रत्नप्रभा नरक में नैरयिकपने उत्पन्न होकर आहार लेते हैं,
परिणमाते हैं और शरीर बाँधते हैं। इसी तरह यावत् तमतमा
प्रभा तक कह देना चाहिए।

जिस तरह रत्नप्रभा का कहा उसी तरह १८ दण्डक में
(१३ दण्डक देवता के, ३ दण्डक तीन विकलेन्द्रिय के, तिर्यंच
पंचेन्द्रिय और मनुष्य, ये १८ दण्डक में) कह देना चाहिए।

---

* जो जीव यहां से मर कर जाते हैं वे वहां जाकर आहार करते हैं
यावत् शरीर बांधते हैं।

† जो जीव मारणान्तिक समुद्घात करके बिना मरे ही यानी उस
जीव के कितनेक आत्मप्रदेश रत्नप्रभा नरक में जाते हैं वहां जाकर
आहार लिये बिना ही अपने पहले के शरीर में वापिस आते हैं फिर
दूसरी बार मारणान्तिक समुद्घात करके मर कर वापिस रत्नप्रभा नरक
में उत्पन्न होकर आहार लेते हैं, परिणमाते हैं यावत् शरीर बांधते हैं।

पाँच स्थावर मेरु पर्वत से छह दिशाओं में अंगुल के
संख्यातवें भाग से असंख्यात हजार योजन लोकान्त तक
क प्रदेशी श्रेणी (विदिशा) को छोड़ कर चाहे जहाँ उत्पन्न
ते हैं। इनमें भी पूर्वोक्त प्रकार से दो दो अलावा (आलापक)
हना। इस तरह पाँच स्थावर के छह दिशा आसरी ६०
लावा हुए और त्रस के १६ दण्डकों के ३८ अलावा हुए।
सब मिलकर ६८ अलावा हुए ठिकाणा (स्थान) आसरी
ो अनेक अलावा होते हैं। ठिकाणा आसरी अनेक अलावों
पहला अलावा देश थकी समुद्घात इलिकागति का है और
सरा अलावा सर्व थकी समुद्घात डेडका (मेंढक) गति का है।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

० (थोकड़ा नं० ५४)

श्री भगवतीजी सूत्र के छठे शतक के सातवें
देशे में 'काल विशेषण' का थोकड़ा चलता है सो
हते हैं—

१ अहो भगवान् ! कोठा में खाई आदि में बन्द किये हुए
ांदण दिये हुए धान की योनि (अंकुर उत्पन्न करने की शक्ति)
कतने काल तक रहती है ? हे गौतम ! जघन्य अन्तर्मुहूर्त सचित्त
हती है, पीछे अचित्त अबीज हो जाती है, उत्कृष्ट शालि
कलमी आदि अनेक जाति के चावल), व्रीहि (सामान्य जाति

※ जघन्य सब धान की योनि अन्तर्मुहूर्त तक सचित्त रहती है।

के चावल), गेहूँ, जव, जवार की योनि ३ वर्ष तक सचि रहती है

कलाय (मटर), मसूर, तिल, मूंग, उड़द, चवला, कुल्थ (चोला के आकार वाला चपटा धान—कलथी) तूर, चना आं की योनि (उत्कृष्ट) ५ वर्ष तक सचित्त रहती है। अलसी कुसुम्भ, कोद्रव, कांगणी, वरटी, राल, सण, सरसों आदि कं योनि (उत्कृष्ट) ७ वर्ष तक सचित्त रहती है, पीछे अचित्त हं जाती है।

२—अहो भगवान् ? एक मुहूर्त के कितने [illegible] होते हैं ? हे गौतम ! एक मुहूर्त में ३७७३ [illegible] हैं। एक समय से लेकर शीर्षप्रहेलिका तक गणित हैं। इसके बाद पल्योपम, सागरोपम यावत् कालचक्र तक उपमा काल हैं।

३—अहो भगवान् ! अवसर्पिणी काल के सुषमासुषम आरा में इस जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में कैसा भाव था ? हे गौतम ! भूमि—भाग बहुत सम रमणीय था यावत् देवकुरु उत्तरकुरु क्षेत्र के जुगलियों की तरह यहाँ ६ प्रकार के उत्कृष्ट सुख वाले मनुष्य बसते थे—१ पद्म समान गन्ध वाले, २ कस्तूरी समान गन्ध वाले, ३ ममत्व रहित, ४ तेजस्वी, रूपवन्त, ५ सहनशील, ६ उतावल रहित गम्भीर गति से चलने वाले मनुष्य बसते थे।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ५५)

श्री भगवतीजी सूत्र के छठे शतक के आठवें देशे में 'पृथ्वी', आदि का थोकड़ा चलता है सो हते हैं-

तमुकाए कप्पपणए अगणी पुढवी य अगणिपुढवीसु ।
आऊ तेऊ वणस्सइ, कप्पुवरिम कण्हराईसु ॥

१—अहो भगवान् ! पृथ्वियाँ कितनी हैं ? हे गौतम ! थ्वियाँ ८ हैं (७ नरक, १ ईषत्–प्राग्भारा– सिद्धशिला) ।

२—अहो भगवान् ! क्या ७ नरक, १२ देवलोक, नव ग्रैवेक, पांच अनुत्तर विमान, १ सिद्धशिला इन २२ ठिकानों के चे घर, हाट, ग्रामादि हैं ? हे गौतम ! नहीं हैं ।

३—अहो भगवान् ! नारकी और देवलोकों के नीचे गाज, ज, मेघ, बादल, वृष्टि कौन करते हैं ? हे गौतम ! पहली सरी नारकी के नीचे गाज, बीज, मेघ, बादल, वृष्टि देव, सुर कुमार और नागकुमार ये ३ करते हैं। तीसरी नरक, पहला सरा देवलोक के नीचे देव और असुरकुमार ये दो करते हैं । प ४ नरक, और तीसरे देवलोक से बारहवें देवलोक तक, इन ४ के नीचे देव (वैमानिक देव) करते हैं (असुरकुमार, नागमार नहीं) । नव ग्रैवेयक, पांच अनुत्तर विमान और सिद्धशिला नीचे कोई नहीं करता । सात नरकों के नीचे बादर अग्निाय नहीं है परन्तु विग्रह गति वाले जीव पाये जाते हैं । देव-

लोकों से लेकर सिद्धशिला तक १५ ठिकानों के नीचे बादर पृथ्वीकाय, बादर अग्निकाय नहीं है परन्तु विग्रह गति वाले जीव पाये जाते हैं। नवमे देवलोक से लेकर सिद्धशिला तक इन नौ ठिकानों के नीचे बादर अप्काय भी नहीं है परन्तु विग्रह गति वाले जीव पाये जाते हैं। २२ ही ठिकानों के नीचे चन्द्र सूर्य आदि नहीं है, चन्द्र सूर्य आदि की प्रभा भी नहीं है।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ५६)

श्री भगवतीजी सूत्र के छठे शतक के आठवें उद्देशे में 'आयुष्य बन्ध' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं।

१—अहो भगवान् ! आयुष्य बन्ध कितने प्रकार का कहा गया है ? हे गौतम ! आयुष्य बन्ध छह प्रकार का कहा गया है—१ जातिनाम-निधत्तायु, २ गति नाम निधत्तायु, ३ स्थिति नाम निधत्तायु, ४ अवगाहना नाम निधत्तायु, ५ प्रदेश नाम निधत्तायु, ६ अनुभाग नाम निधत्तायु। ये ६ निधत्त (ढीला) बन्ध आसरी हैं और ६ निकाचित (गाढ़ा-मजबूत) बन्ध आसरी हैं। ये १२ एक जीव आसरी और १२ बहुत (घणा) जीव आसरी, ये २४ अलावा हुए। २४ समुच्चय के और २४ नीच गोत्र के साथ बंधने वाले तथा २४ उच्च गोत्र के साथ बंधने वाले, ये ७२ अलावा हुए। इनको समुच्चय जीव और २४ दण्डक, इन २५ से गुणा करने से १८०० अलावा होते हैं।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ५७)

**श्री भगवती जी सूत्र के छठे शतक के दसवें
देशे में जीव के 'सुख दुःखादि' का थोकड़ा चलता
सो कहते हैं—**

जीवाण य सुहं दुक्खं, जीवे जीवति तहेव भविया य ।
एगंतदुक्खं वेयण, अत्तमायाय केवली ॥

१—अहो भगवान् ! अन्यतीर्थी इस प्रकार कहते हैं कि
राजगृह नगर में जितने जीव हैं उन जीवों के सुख दुःख बाहर
निकाल कर हाथ में लेकर बोर की गुठली प्रमाण यावत् जूं
लीख प्रमाण भी दिखाने में कोई समर्थ नहीं है । अहो भग-
वान् ! क्या यह ठीक है ? हे गौतम ! अन्यतीर्थियों का यह
कहना मिथ्या है । मैं इस तरह से कहता हूँ कि सम्पूर्ण लोक के
जीवों के सुख दुःख को बाहर निकाल कर हाथ में लेकर दिखाने
में कोई समर्थ नहीं है। अहो भगवान् ? किस कारण से दिखाने
में समर्थ नहीं है ? हे गौतम ! जिस तरह तीन चुटकी बजावे
उतने में इस जम्बूद्वीप की २१ परिक्रमा करे ऐसी शीघ्रगति
वाला कोई देव सम्पूर्ण जम्बूद्वीप में व्याप्त होवे ऐसा गन्ध का
डिब्बा खोल कर जम्बूद्वीप की २१ परिक्रमा करे उतने में
गन्ध उड़ कर जीवों के नाक में प्रवेश करे उस गन्ध को अलग
निकाल कर बताने में कोई समर्थ नहीं है, इसी तरह जीवों के
सुख दुःख को बाहर निकाल कर बताने में कोई समर्थ नहीं है ।

२—अहो भगवान् ! क्या जीव है सो चैतन्य है या चैतन्य है सो जीव है ? हे गौतम ! जीव है सो चैतन्य है और चैतन्य है सो जीव है, जीव और चैतन्य एक ही है। नारकी का नेरीया व नियमा जीव है, और जीव है सो नेरीया अनेरीया दोनों ही है। इसी तरह २४ ही दण्डक कह देना चाहिए।

३—अहो भगवान् ! जीव है सो प्राण-धारण करता है या प्राण धारण करता है सो जीव है ? हे गौतम ! जो प्राण धारण करता है सो नियमा जीव है परन्तु जीव प्राण धारण करता भी है और नहीं भी करता है, जैसे सिद्ध भगवान्, द्रव्यप्राण धारण नहीं करते हैं। नारकी का नेरीया नियमा प्राणधारी है और प्राणधारी है सो नेरीया अनेरीया दोनों ही है। इसी तरह २४ ही दण्डक कह देना चाहिए।

४—अहो भगवान् ! भवसिद्धिक (भवी) नेरीया होता है या नेरीया भवसिद्धिक होता है ? हे गौतम ! भवसिद्धिक नेरीया अनेरीया दोनों ही होता है। इसी तरह नेरीया भी भवसिद्धिक और अभवसिद्धिक दोनों होता है। इस तरह २४ ही दण्डक कह देना चाहिए।

५—अहो भगवान् ! अन्यतीर्थी कहते हैं कि सब प्राणी भूत जीव सत्त्व एकान्त दुःखरूप वेदना वेदते हैं। क्या यह ठीक है ? हे गौतम ! अन्यतीर्थियों का यह कहना मिथ्या है। मैं इस तरह से कहता हूँ—नारकी का नेरीया एकान्त दुःखरूप वेदना वेदता है, कदाचित् सुखरूप वेदना भी वेदता है। चारों

ति के देवता एकान्त सुखरूप वेदना वेदते हैं, कदाचित् दुःख
वेदना भी वेदते हैं। औदारिक के १० दण्डक विविध
ार की (वेमाया) वेदना वेदते हैं अर्थात् कदाचित् सुख और
ाचित् दुःख वेदते हैं।

६–अहो भगवान्! क्या नारकी का नेरीया आत्मशरीर
ावगाढ़ (स्व शरीर क्षेत्र ओघाया) पुद्गलों को ग्रहण कर
हार करता है या अनन्तर क्षेत्रावगाढ़ (अपने शरीर क्षेत्र
घाया की अपेक्षा दूसरा क्षेत्र) पुद्गलों को ग्रहण कर
हार करता है या परंपरक्षेत्रावगाढ (आत्म क्षेत्र से अनन्तर
उससे पर क्षेत्र वह परंपर क्षेत्र) पुद्गलों को ग्रहण कर
हार करता है? हे गौतम! आत्मशरीर क्षेत्रावगाढ पुद्गलों को
त्मा द्वारा ग्रहण कर आहार करता है। अनन्तर क्षेत्रावगाढ
र परंपरक्षेत्रावगाढ पुद्गलों को आत्मा द्वारा ग्रहण कर आहार
ीं करता है। इसी तरह २४ ही दण्डक कह देना चाहिए।

७–अहो भगवान्! क्या केवली महाराज इन्द्रियों से
नते और देखते हैं? हे गौतम! केवली महाराज इन्द्रियों से
ीं जानते और नहीं देखते हैं। छही दिशाओं में द्रव्य क्षेत्र
ल भाव मित (मर्यादा सहित) भी जानते देखते हैं और
मित (मर्यादा रहित) भी जानते देखते हैं यावत् केवली
दर्शन निरावरण (आवरण रहित) है।

सेवं भंते! सेवं भंते!!

(थोकड़ा नं० ५८)

श्री भगवतीजी सूत्र के सातवें शतक के पां
उद्देशे में 'आहार' का थोकड़ा चलता है सो
कहते हैं—

१—अहो भगवान्! जीव मर कर परभव में जाता हुआ
कितने समय तक अनाहारक रहता है? हे गौतम! परभव
जाता हुआ जीव पहले, दूसरे, तीसरे समय में सिय (कदाचित्)
आहारक, सिय अनाहारक होता है। चौथे समय में नियमा
(अवश्य) आहारक होता है। समुच्चय जीव और एकेन्द्रिय
पहले, दूसरे तीसरे समय तक आहार की भजना है, चौथे समय
में आहार की नियमा है। त्रस के १६ दण्डक के जीवों
पहले दूसरे समय आहार की भजना है तीसरे समय आहा
की नियमा है।

२—अहो भगवान्! जीव किस समय अल्प आहारी हो
है? हे गौतम! उत्पन्न होते वक्त प्रथम समय में और म
वक्त चरम (अन्तिम) समय में जीव अल्प-आहारी होता है।

३—अहो भगवान्! लोक का कैसा संठाण (संस्थान
है? हे गौतम! लोक का संठाण सुप्रतिष्ठ (सरावला)
आकार है। नीचे चौड़ा, बीच में संकड़ा और ऊपर पतला है
ऐसे शाश्वत लोक में केवलज्ञान केवल दर्शन के धारक अरिह
जिन केवली जीवों को अजीवों को सब को जानते देखते
फिर वे सिद्ध होते हैं यावत् सब दुःखों का अन्त करते हैं।

४—अहो भगवान् ! उपाश्रय में रह कर सामायिक करने श्रावक को ईर्यापथिकी क्रिया लगती है या सांपरायिकी ? गौतम ! सकषायी होने से उसको सांपरायिकी क्रिया ती है।

५—अहो भगवान् ! किसी श्रावक के त्रसजीवों को ने का त्याग किया हुवा है लेकिन पृथ्वीकाय के वध का ण नहीं है वह पृथ्वी खोदे उस वक्त कोई त्रस जीव मर । तो क्या उसके व्रत में अतिचार लगता है ? हे गौतम ! इणट्ठे समट्ठे । वह श्रावक त्रस जीवों को *मारने की रो नहीं करता है, इसलिए ग्रहण किए हुए उसके व्रत में तिचार नहीं लगता है, व्रत भंग नहीं होता है। इसी तरह र श्रावक ने वनस्पति छेदने का त्याग किया है, पीछे वी खोदते हुए जड़ मूल आदि छेदन हो जाय तो उसके ण किये हुए व्रत में अतिचार (दोष) नहीं लगता है, व्रत नहीं होता है।

६—अहो भगवान् ! तथारूप के (उत्तम) श्रमण माहण प्रासुक एषणीय आहार पानी वहरावे (देवे) तो क्या लाभ ा है ? हे गौतम ! वह जीव समाधि प्राप्त करता है, बोध-

* सामान्य रीति से देशविरति श्रावक को संकल्प पूर्वक त्रस जीव हिंसा का त्याग होता है, इसलिए जब तक जिसकी हिंसा का त्याग ा हो, उसकी संकल्प पूर्वक हिंसा करने की प्रवृत्ति न करे तब उसके ग्रहण किये हुए व्रत में दोष नहीं लगता है।

बीज समकित को प्राप्त करता है और अनुक्रम से मोक्ष में जाता है।

७—अहो भगवान् ! क्या कर्मरहित जीव की गति (गमन) होती है ? हाँ, गौतम ! होती है। अहो भगवान् ! कर्मरहित जीव की कैसी गति होती है ? हे गौतम ! *तुम्बी, फली, धूम (धूंआ), वाण के दृष्टान्त से कर्म रहित जीव की गति ऊर्ध्व (ऊंची) होती है।

८—अहो भगवान् ! दुखी जीव दुःख से व्याप्त होता है अथवा अदुखी (दुःख रहित) जीव दुःख से व्याप्त होता है ? हे गौतम ! दुखी जीव दुःख से व्याप्त होता है परंतु अदुखी जीव दुःख से व्याप्त नहीं होता है। १ दुखी जीव दुःख से व्याप्त होता है, २ दुःख को ग्रहण करता है, ३ दुःख की उदीरणा करता है, ४ दुःख को वेदता है, ५ दुःख की निर्जरा करता है, ये पांच बोल समुच्चय जीव और २४ दण्डक के साथ कहने से १२५ अलावा हुए।

९—अहो भगवान् ! बिना उपयोग गमन करते, खड़े रहते, बैठते, सोते, वस्त्र पात्रादि लेते रखते हुए साधु को ईर्यापथि-

---

* जैसे कोई पुरुष तुम्बी पर मिट्टी के आठ लेप करके पानी में डाले तो भारी होने से वह तुम्बी नीचे चली जाय परन्तु वे मिट्टी के लेप गल कर उतर जाने से तुम्बी पानी के ऊपर आ जाती है। इसी प्रकार आठ कर्म रहित जीव की भी ऊर्ध्वगति (ऊंची गति) होती है।

जैसे एरण्ड का फल सूखने पर उसका बीज उछल कर बाहर पड़ता है। धूम (धूंआ) स्वाभाविक ही ऊपर जाता है। धनुष से छूटा हुआ बाण एक दम सीधा जाता है। इसी तरह आठ कर्मों से छूटे (रहित) जीव की गति ऊर्ध्व (ऊंची) होती है, इसलिए वह मोक्ष में जाता है।

ा लगती है या सांपरायिकी क्रिया लगती है ? हे गौतम ! ईर्यापथिकी क्रिया नहीं लगती है किन्तु सकपायी होने से को सांपरायिकी क्रिया लगती है ।

१०—अहो भगवान् ! इंगाल दोष, धूम दोष और संयोजना किसको कहते हैं ? हे गौतम ! प्रासुक एषणीय आहार पानी ार उसमें मूर्च्छित, गृद्ध, आसक्त होकर आहार करे तो इंगाल ंगार) दोष लगता है । उसी आहार को क्रोध से खिन्न होकर ा धुनता धुनता आहार करता है, (खाता है) तो धूम दोष ता है। प्रासुक एषणीय निर्दोष आहार पानी लाकर उसमें द उत्पन्न करने के लिये एक दूसरे के साथ संयोग मिला कर हार करे तो संयोजना दोष लगता है ।

११—अहो भगवान् ! खेत्ताइक्कंते (क्षेत्रातिक्रान्त), लाइक्कंते, (कालातिक्रान्त), मग्गाइक्कंते (मार्गाति-न्त), पमाणाइक्कंते (प्रमाणातिक्रान्त) दोष किसे कहते ? हे गौतम ! कोई साधु साध्वी सूर्य उदय से पहले आहार नी लाकर सूर्य उदय से पीछे भोगता है तो उसे खेत्ताइक्कंते लगता है। प्रथम पहर में लाये हुए आहार पानी को न्तिम पहर में भोगता है तो कालाइक्कंते दोष लगता है। दो (गाऊ) उपरान्त ले जाकर आहार पानी भोगता है तो गाइक्कंते दोष लगता है । प्रमाण से अधिक आहार करता है पमाणाइक्कंते दोष लगता है ।

१२—अहो भगवान् ! शस्त्रातीत शस्त्रपरिणत आ
पानी किसे कहते हैं ? हे गौतम ! जो अग्नि वगैरह शस्त्र
अच्छी तरह परिणत होकर अचित्त (जीव रहित) हो गया
उस आहार पानी को शस्त्रातीत शस्त्रपरिणत कहते हैं ।

साधु को चाहिए कि आहार पानी के सब दोष टाल
संयम निर्वाह के लिए शुद्ध आहार पानी भोगवे ।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ५६)

श्री भगवतीजी सूत्र के सातवें शतक के दूसरे उद्देशे में 'सुपच्चक्खाण दुपच्चक्खाण (पच्चक्खा णापच्चक्खाणी) का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं

१—अहो भगवान् ! कोई कहता है कि मुझे सर्व प्राण
भूत सर्व जीव सर्व सत्त्व को हनने का (मारने का) पच्चक्खा
है तो उसके पच्चक्खाण को सुपच्चक्खाण कहना चाहिए
दुपच्चक्खाण कहना चाहिए ! हे गौतम !* उसके पच्चक्खा
को सिय (कदाचित्) सुपच्चक्खाण कहना चाहिए और सि
दुपच्चक्खाण कहना चाहिए । अहो भगवान् ! इसका
कारण है ? हे गौतम ! जिसको ऐसा जाणपणा नहीं है कि
जीव हैं, ये अजीव हैं, ये त्रस हैं, ये स्थावर हैं, यदि वह कहता है कि
सर्व प्राण सर्व भूत सर्व जीव सर्व सत्त्व को हनने का त्याग
तो (१) वह मृषावादी है, सत्यवादी नहीं, २. तीन करण

---

* ये दोनों तरह के पचक्खाण साधु आसरी (साधु के लिए) कहे

ग से असंजति है, ३ अविरति है, ४ पाप-कर्म नहीं पच्चक्खे ५ वह सक्रिय (आश्रव सहित) है, ६ असंवुडा (संवर-हित) है, ७ छह काया का दण्डी (दण्ड देने वाला–हिंसा-ने वाला) है, ८ एकान्त बाल-अज्ञानी है, उसके पच्चक्खाण चक्खाण है, सुपच्चक्खाण नहीं*।

जिसको ऐसा जाणपणा (ज्ञान) है कि 'ये जीव हैं, ये जीव हैं, ये त्रस हैं, ये स्थावर हैं, यदि वह कहता है कि मुझे प्राण सर्व भूत सर्व जीव सर्व सत्त्व को हनने (मारने) का ाग है तो १ वह सत्यवादी है, मृषावादी नहीं, २ तीन करण न जोग से संजति है, ३ विरति है, ४ पाप कर्म का पच्-ाण किया है, ५ अक्रिय (आश्रव रहित) है, ६ संवुडा संवर सहित) है, ७ छह काया का रक्षक है, ८ एकान्त पण्डित नी है। उसके पच्चक्खाण सुपच्चक्खाण है, दुपच्चक्खाण नहीं*।

२ अहो भगवान्! पच्चक्खाण कितने प्रकार के हैं? हे तम! पच्चक्खाण दो प्रकार के हैं–मूलगुण पच्चक्खाण और र गुण पच्चक्खाण। मूलगुण पच्चक्खाण के दो भेद–सर्व मूल पच्चक्खाण और देश मूल गुण पच्चक्खाण। सर्व मूल गुण क्खाण के ५ भेद–सर्वथा प्रकार से हिंसा, झूठ, चोरी, मैथुन, ग्रह का त्याग करना अर्थात् पाँच महाव्रतों का पालन ना। देश मूल गुण पच्चक्खाण के ५ भेद–स्थूल प्राणाति-

---

* ये पच्चक्खाण साधु के लिए हैं।

पात यावत् स्थूल परिग्रह का त्याग करना अर्थात् पांच अ
व्रतों का पालन करना। उत्तर गुण पच्चक्खाण के दो भेद-स
उत्तरगुण पच्चक्खाण, देश उत्तरगुण पच्चक्खाण। सर्व उत्त
गुण पच्चक्खाण के* १० भेद-१ अणागयं-(जो तप आगा
काल में करना है वह पहले कर लेवे), २ अइक्कंतं-(जो तप प
करना था वह किसी कारण से नहीं हो सका तो पीछे क
३ कोडी सहियं-(जैसा तप पहले दिन-आदि में करे वैसा ही
दिन (अंतमें) भी करे, बीच में नाना प्रकार का तप करे), ४ नियंटि
(नियमित दिन में विघ्न आने पर भी धारा हुआ-विचारा हु
तप अवश्य करे), ५ सागारं (आगार सहित तप करे),
अणागारं (आगार रहित तप करे), ७ परिमाणकडं (×द
दात कवल-(ग्रास), घर, चीज आदि का परिमाण करे)
८ निरवसेसं (चारों प्रकार के आहार का त्याग करे, संथा
करे), ९ संकेयं-(मुष्टि आदि संकेत पूर्वक तप करे), १
अद्धा÷ (काल का परिमाण कर तप करे)। देश उत्तरगुण प

* गाथा—अणागय मइक्कंतं, कोडीसहियं नियंटियं चेव।
सागारमणागारं, परिमाणं कडं निरवसेसं॥
संकेयं चेव अद्धाए, पच्चक्खाणं भवे दसहा॥

× एक साथ एकबार पात्र में पड़ा हुवा अन्नादि को १ दात कहते

÷ अद्धा तप के १० भेद हैं—१ नवकारसी, २ पोरिसी, ३ दो पोरि
४ एकासन, ५ एकलठाण, ६ आयम्बल, ७ नीवि, ८ उपवास, ९ अ
मह १० दिवस चरिम।

खाण के ७ भेद–तीन गुणव्रत (दिशाव्रत, उपभोगपरिभोग रिमाण व्रत, अनर्थदण्डविरमण व्रत)। चार शिक्षाव्रत-सामायिक, देशावकाशिक, पौषधोपवास, अतिथि संविभाग त और * संलेखना)।

३—अहो भगवान् ! क्या जीव मूलगुण पच्चक्खाणी है उत्तरगुण पच्चक्खाणी है या अपच्चक्खाणी है ? हे तिम ! समुच्चय जीव में भांगा पावे तीन। मनुष्य और र्यञ्च पञ्चेन्द्रिय में भांगा पावे ३–३, बाकी २२ दण्डक पच्चक्खाणी है।

अल्पबहुत्व-समुच्चय जीव में सब से थोड़े मूलगुण पच्च-क्खाणी, उससे उत्तरगुण पच्चक्खाणी असंख्यातगुणा, उससे अप-च्चक्खाणी अनन्तगुणा। तिर्यञ्च पंचेन्द्रिय में सबसे थोड़े मूल

---

* संलेखना का पूरा नाम है–अपश्चिम मारणान्तिक संलेखना षणा आराधना–सब से पीछे मरण के समय में शरीर और कषायों को कृश करने के लिये जो तप विशेष स्वीकार कर आराधन किया जाय, से अपश्चिम मारणान्तिक संलेखना जोषणा आराधना कहते हैं।

देशउत्तरगुणपच्चक्खाण में दिशाव्रत आदि ३ गुणव्रत ४ शिक्षाव्रत सात गुणों की गिनती की गई है किन्तु संलेखना की गिनती नहीं की गई इसका कारण यह है कि दिशाव्रत आदि सात गुण अवश्य देशो-त्तर गुण रूप हैं परन्तु इस संलेखना का नियम नहीं है क्योंकि देशोत्तर गुण वाले को यह देशोत्तर गुण रूप है और सर्वोत्तर गुण वाले के लिए यह सर्वोत्तर गुण रूप है। देशोत्तर गुण वाले को भी अन्त में यह संले-खना करने योग्य है। यह बात बतलाने के लिए यहां पर आठवीं संले-खना कही गई है।

गुण पच्चक्खाणी, उससे उत्तरगुण पचक्खाणी असंख्या
गुणा, उससे अपच्चक्खाणी असंख्यात गुणा। मनुष्य में सब
थोड़े मूलगुण पचक्खाणी, उससे उत्तरगुण पचक्खा
संख्यात गुणा, उससे अपच्चक्खाणी असंख्यात गुणा।

४—अहो भगवान्! क्या जीव सर्व मूलगुण पचक्खा
है या देश मूलगुण पच्चक्खाणी है या अपच्चक्खाणी है!
गौतम! समुच्चय जीव में भांगा पावे ३। नारकी में
तक मनुष्य और तिर्यंच पंचेन्द्रिय वर्ज कर २२
पावे एक–अपच्चक्खाणी। तिर्यञ्च पंचेन्द्रिय में भांगा
(देशमूलगुण पच्चक्खाणी, अपच्चक्खाणी)। मनुष्य
भांगा पावे ३।

अल्पबहुत्व—समुच्चय जीव में सबसे थोड़े सर्वमूलगु
पच्चक्खाणी, उससे देशमूलगुण पच्चक्खाणी असंख्यातगुण
उससे अपच्चक्खाणी अनन्तगुणा। तिर्यंच पंचेन्द्रिय में सब
थोड़े देशमूलगुण पच्चक्खाणी, उससे अपच्चक्खाणी असंख्य
गुणा। मनुष्य में सबसे थोड़े सर्व मूलगुण पच्चक्खाणी, उ
देश मूलगुण पच्चक्खाणी संख्यात गुणा, उससे अपच्चक्खा
असंख्यातगुणा।

५—अहो भगवान्! क्या जीव सर्वउत्तर गुण पच्चक्खा
है या देशउत्तरगुणपच्चक्खाणी है या अपच्चक्खाणी है?
गौतम! समुच्चय जीव में भांगा पावे ३। मनुष्य और तिर्यं

चेन्द्रिय में भांगा पावे ३—३। बाकी २२ दण्डक में भांगा पावे एक (अपच्चक्खाणी)।

अल्पबहुत्व—समुच्चय जीव में सबसे थोड़े सर्व उत्तरगुण पच्चक्खाणी, उससे देशउत्तरगुण पच्चक्खाणी असंख्यातगुणा, उससे अपच्चक्खाणी अनन्तगुणा। तिर्यंच पंचेन्द्रिय में सब से थोड़े सर्व उत्तरगुणपच्चक्खाणी, उससे देशउत्तरगुणपच्चक्खाणी असंख्यातगुणा, उससे अपच्चक्खाणी असंख्यातगुणा। मनुष्य में सब से थोड़े सर्वउत्तरगुण पच्चक्खाणी, उससे देशउत्तरगुण पच्चक्खाणी संख्यातगुणा, उससे अपच्चक्खाणी असंख्यातगुणा।

४—अहो भगवान्! क्या जीव संजति (संयति) है या असंजति (असंयति) है या संजतासंजति (संयतासंयति) है? हे गौतम! समुच्चय जीव में भांगा पावे ३। मनुष्य में भांगा पावे ३। तिर्यंच पंचेन्द्रिय में भांगा पावे २ (असंजति और संजतासंजति)। बाकी २२ दंडक में भांगा पावे एक-असंजति।

अल्पबहुत्व—समुच्चय जीव में सब से थोड़े संजति, उससे संजतासंजति असंख्यातगुणा, उससे असंजति अनन्तगुणा। तिर्यंच पंचेन्द्रिय में सब से थोड़े संजतासंजति, उससे असंजति असंख्यातगुणा। मनुष्य में सबसे थोड़े संजति, उससे संजतासंजति संख्यातगुणा, उससे असंजति असंख्यातगुणा।

७—अहो भगवान्! क्या जीव पच्चक्खाणी है या पच्चक्खाणापच्चक्खाणी है या अपच्चक्खाणी है? हे गौतम! समु-

च्चय जीव में भांगा पावे ३ । मनुष्य में भांगा पावे ३ । तिर्यं
पंचेन्द्रिय में भांगा पावे २ । बाकी २२ दण्डक में भांगा पा
एक–अपच्चक्खाणी ।

अल्पबहुत्व–समुच्चय जीव में सब से थोड़े पच्चक्खाणी
उससे पच्चक्खाणापच्चक्खाणी असंख्यातगुणा, उससे अप
च्चक्खाणी अनन्तगुणा । तिर्यंच पंचेन्द्रिय में सबसे थो
पच्चक्खाणापच्चक्खाणी, उससे अपच्चक्खाणी असंख्यातगुणा
मनुष्य में सबसे थोड़े पच्चक्खाणी, उससे पच्चक्खाणापच्चक्खा
संख्यातगुणा, उससे अपच्चक्खाणी असंख्यातगुणा ।

८ अहो भगवान् ! क्या जीव शाश्वत है या अशाश्वत ?
हे गौतम ! जीव द्रव्य की अपेक्षा शाश्वत है और पर्याय की अपे
अशाश्वत है । इसी तरह २४ ही दण्डक कह देना चाहिये

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ६०)

श्री भगवतीजी सूत्र के सातवें शतक के तीसरे उद्दे
'वनस्पति के आहार आदि' का थोकड़ा चलता है
कहते हैं—

१–अहो भगवान् ! वनस्पति किस काल में अल्पा
होती है और किस काल में महाआहारी होती है ? हे गौत
पावस ऋतु (श्रावण भादवा) और वर्षा ऋतु (आस
कार्तिक) में सब से अधिक महा आहारी होती है । उसके
शरद् ऋतु (मिगसर, पौष), हेमन्त ऋतु (माघ, फाल्गु

न्त ऋतु (चैत्र, वैशाख) में अनुक्रम से अल्पाहारी होती है वत् ग्रीष्म ऋतु (जेठ, आषाढ़) में सबसे अल्पाहारी होती है।

२–अहो भगवान्! ग्रीष्म ऋतु में वनस्पति सबसे अल्पाहारी ती है सो बहुत सी वनस्पति में खूब पान फूल फल होते हैं किस तरह से? हे गौतम! ग्रीष्म ऋतु में वनस्पति में उष्ण-निया जीव बहुत उत्पन्न होते हैं यावत् वृद्धि पाते हैं, इस रण से वनस्पति में पान फूल, फल बहुत होते हैं।

३–अहो भगवान्! वनस्पति का मूल, कन्द यावत् बीज स जीव से व्याप्त है? हे गौतम! वनस्पति का मूल, मूल के जीव से व्याप्त है यावत् बीज, बीज के जीव से व्याप्त है।

४–अहो भगवान्! वनस्पति के जीव किस तरह आहार लेते हैं और किस तरह परिणमाते हैं? हे गौतम! वनस्पति का मूल पृथ्वी से संबद्ध (जुड़ा हुआ) है जिससे वनस्पति आहार लेती है और परिणमाती है। इस तरह, बीज तक १० अलावा कह देना चाहिए।

५–अहो भगवान्! आलू, मूला आदि अनेक वनस्पतियाँ क्या अनन्त जीव वाली और भिन्न भिन्न जीव वाली हैं? हाँ, गौतम! आलू, मूला आदि अनेक वनस्पतियाँ अनन्त जीव वाली और भिन्न भिन्न जीव वाली हैं।

६–अहो भगवान्! क्या कृष्णलेशी नैरयिक अल्पकर्मी और नीललेशी नैरयिक महाकर्मी हो सकता है? हाँ, गौतम!

स्थिति*आसरी कृष्ण लेशी नैरयिक अल्पकर्मी और नीललेशी नैरयिक महाकर्मी हो सकता है। इस तरह ज्योतिषी+देव को वर्ज कर २३ दण्डक में जिस में जितनी लेश्या पावे उसमें उतनी लेश्या से अल्पकर्मी और महाकर्मी कह देना चाहिए।

७-अहो भगवान् ! क्या वेदना और निर्जरा एक कही जा सकती है ? हे गौतम ! वेदना और निर्जरा एक नहीं कही जा सकती है। वेदना कर्म है और निर्जरा नोकर्म× है। इस तरह

* कृष्ण लेश्या अत्यन्त अशुभ परिणाम रूप है उसकी अपेक्षा नील लेश्या कुछ शुभ परिणाम रूप है। इसलिये सामान्यतः कृष्णलेश्या वाला महाकर्मी और नीललेश्या वाला अल्पकर्मी होता है। परन्तु कदाचित् आयुष्य की स्थिति की अपेक्षा कृष्ण लेश्या वाला अल्पकर्मी और नील लेश्या वाला महाकर्मी भी हो सकता है। जैसे कि-कृष्ण लेश्या वाला नैरयिक जिसने अपनी आयुष्य की बहुत स्थिति क्षय कर दी है उसने बहुत कर्म भी क्षय कर दिये हैं, उसकी अपेक्षा कोई नील लेश्या वाला नैरयिक १० सारोपगम की स्थिति से पांचवीं नरक में अभी तत्काल उत्पन्न हुआ ही है उसने आयुष्य की स्थिति अधिक क्षय नहीं की है, इसलिये अभी उसके बहुत कर्म बाकी हैं। इस कारण वह उस कृष्ण लेशी नैरयिक की अपेक्षा महाकर्मी है।

+ ज्योतिषी देवों में सिर्फ एक तेजोलेश्या पाई जाती है, दूसरी लेश्या नहीं पाई जाती। इस कारण से दूसरी लेश्या की अपेक्षा अल्पकर्मी और महाकर्मी नहीं कहा जा सकता।

× उदय में आये हुये कर्म को भोगना वेदना कहलाती है और जो कर्म भोग कर क्षय कर दिया गया है वह निर्जरा कहलाती है। इसलिये वेदना को कर्म कहा गया है और निर्जरा को नोकर्म कहा गया है।

वेदना और निर्जरा में तीन काल आसरी कह देना। वेदना और निर्जरा का समय एक नहीं है। जिस समय वेदता है, उस समय निर्जरता नहीं है। जिस समय निर्जरता है, उस समय वेदता नहीं। वेदना और निर्जरा का समय अलग अलग है। इस तरह २४ ही दण्डक पर १२० अलावा कह देना।

८—अहो भगवान्! क्या समुच्चय जीव शाश्वत हैं या अशाश्वत हैं? हे गौतम! द्रव्य की अपेक्षा (द्रव्यार्थिक नय की अपेक्षा) जीव शाश्वत हैं और पर्याय की अपेक्षा (पर्यायार्थिक नय की अपेक्षा) जीव अशाश्वत हैं। इस तरह २४ ही दण्डक कह देना।

सेवं भंते! सेवं भंते!!

(थोकड़ा नं० ६१)

श्री भगवतीजी सूत्र के सातवें शतक के चौथे उद्देशे में 'जीव' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

जीवा १, छव्विह पुढवी २, जीवाण ३, ठिई भवट्ठिई ४, काये ५,। णिल्लेवण ६, अणगारे ७, किरियासम्मच मिच्छतं ८॥

१—अहो भगवान्! संसारी जीव के कितने भेद हैं? हे गौतम! ६ भेद हैं—पृथ्वीकाय, अप्काय, तेउकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय, त्रसकाय*।

* छहकाय जीवों के भेदानुभेद श्री पन्नवणा सूत्र पद पहले के अनुसार जान लेना चाहिये।

२—अहो भगवान् ! पृथ्वीकाय के कितने भेद हैं ? हे गौतम ! ६ भेद हैं—१ सण्हा* पृथ्वी, २ शुद्ध पृथ्वी, ३ वालुका पृथ्वी, ४ मणोसिला (मनः शिला) पृथ्वी, ५ शर्करा पृथ्वी, ६ खर पृथ्वी ।

३—अहो भगवान् ! इन छहों पृथ्वी की कितनी स्थिति है ? हे गौतम ! इन छहों पृथ्वी की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त की है, उत्कृष्ट स्थिति सण्हा पृथ्वी की १००० एक हजार वर्ष, शुद्ध पृथ्वी की १२००० बारह हजार वर्ष, वालुका पृथ्वी की १४००० चौदह हजार वर्ष, मणोसिला (मनः शिला-मेनसिल) पृथ्वी की १६००० सोलह हजार वर्ष, शर्करा पृथ्वी की १८००० अठारह हजार वर्ष, खर पृथ्वी की २२००० बाईस हजार वर्ष की है ।

४—अहो भगवान् ! नारकी, देवता, तिर्यञ्च मनुष्य की कितनी स्थिति है ? हे गौतम ! नारकी देवता की जघन्य स्थिति दस हजार वर्ष की, उत्कृष्ट ३३ सागर की, तिर्यञ्च और मनुष्य की जघन्य अन्तर्मुहूर्त की, उत्कृष्ट तीन पल्योपम की। इस तरह सब जीवों की भवस्थिति÷ स्थिति पद के अनुसार कह देनी चाहिये ।

---

* सण्हा य सुद्धवालु य, मणोसिला सक्करा य खरपुढवी ।
इग बार चोद्दस सोलढार बावीससयसहस्सा ॥
इस गाथा में पृथ्वीकाय के छह भेद और उनकी स्थिति बताई गई है।

÷श्री पन्नवणा सूत्र के थोकड़ों का प्रथम भाग पत्र ५५ से [illegible] तक इसी संस्था द्वारा छपा हुआ माफक कह देना चाहिये ।

५–अहो भगवान् ! जीव जीवपने कितने काल तक रहता है ? हे गौतम ! जीव जीवपने सदैव रहता है।

६–अहो भगवान् ! वर्तमान समय में तत्काल के उत्पन्न हुए पृथ्वीकाय के जीवों को प्रति समय एक एक अपहरे तो कितने समय में निर्लेप होवे (खाली होवे) ? हे गौतम ! जघन्य पद में असंख्याता अवसर्पिणी उत्सर्पिणी काल में और उत्कृष्ट पद में भी असंख्याता अवसर्पिणी उत्सर्पिणी काल में निर्लेप होवे। जघन्य पद से उत्कृष्ट पद में असंख्यातगुणा काल ज्यादा समझना चाहिये। इसी तरह अप्काय, तेउकाय, वायुकाय का भी कह देना चाहिये। वनस्पति अनन्तानन्त होने से कभी निर्लेप नहीं होती है। त्रसकाय जघन्य प्रत्येक सौ सागर में और उत्कृष्ट प्रत्येक सौ सागर में निर्लेप होती है। जघन्य पद से उत्कृष्ट पद विसेसाहिया (विशेषाधिक) है।

७–अवधिज्ञानी अणगार के शुद्धाशुद्ध लेश्या आसरी १२ अलावा कहे जाते हैं—

१–अविशुद्धलेशी अणगार समुद्घात रहित अविशुद्धलेशी देव देवी को नहीं जानता नहीं देखता है। २–अविशुद्धलेशी अणगार समुद्घातरहित विशुद्धलेशी देव देवी को नहीं जानता, नहीं देखता है। इसीतरह समुद्घात सहित के २ अलावा कह देना। इसी तरह समुद्घात असमुद्घात के शामिल २ अलावा कह देना। अविशुद्ध लेश्या आसरी इन ६ अलावों में नहीं जानता नहीं देखता है। विशुद्ध लेश्या आसरी ६ अलावों में जानता है, देखता है। ये १२ अलावा हुए।

८—अन्यतीर्थिक की क्रिया आसरी प्रश्न चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान्! अन्यतीर्थिक कहते हैं कि एक जीव एक समय में सम्यक्त्व की और मिथ्यात्व की दो क्रिया करता है। क्या उनका यह कहना ठीक है? हे गौतम! अन्यतीर्थिकों का यह कहना मिथ्या है। एक जीव एक समय में एक ही क्रिया कर सकता है, दो क्रिया नहीं कर सकता *।

सेवं भंते! सेवं भंते!!

(थोकड़ा नं० ६२)

श्री भगवतीजी सूत्र के सातवें शतक के पांचवें उद्देशे में 'खेचर तिर्यञ्च पंचेन्द्रिय की योनि संग्रह' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं।

जोणी संग्गह लेस्सा, दिट्ठी णाणे य जोग उवओगे।
उववाय ठिइसमुग्घाय, चवण जाई कुल विहीओ॥

१—अहो भगवान्! खेचर तिर्यंच पंचेन्द्रिय की कितने प्रकार की योनि है? हे गौतम तीन प्रकार की है—+अण्डज, पोतज, सम्मू-

---

* यह सारा थोकड़ा जीवाभिगम सूत्र के तिर्यंच के दूसरे उद्देशे में है (आगमोदय समिति पृष्ठ १३८ से १४२ तक)।

+ अण्डज—अण्डे से उत्पन्न होने वाले जीव अण्डज कहलाते हैं जैसे—कबूतर, मोर आदि।

पोतज—जो जीव जन्म के समय चर्म से आवृत्त होकर कोथली [illegible] होते हैं वे पोतज कहलाते हैं, जैसे—हाथी चिमगादड़ आदि।

च्छिम। अण्डज और पोतजके ३-३ भेद हैं—स्त्री, पुरुष, नपुंसक। सम्मूर्च्छिम जीव सब नपुंसक होते हैं। इनमें लेश्या पावे ६, दृष्टि पावे ३, तीन ज्ञान, तीन अज्ञान की भजना। जोग पावे ३, उपयोग पावे २ (साकारोपयोग, अनाकारोपयोग)। असंख्याता वर्ष की आयुष्य वाले युगलियां मनुष्य और तिर्यंचों को छोड़ कर शेष यावत् आठवें देवलोक तक के जीव आकर खेचर तिर्यंच पंचेन्द्रिय में उत्पन्न होते हैं। इन की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त की, उत्कृष्ट पल्योपम के असंख्यातवें भाग की है। इनमें समुद्घात पावे ५ (पहले की)। ये समोहया असमोहया दोनों मरण से मरते हैं। पहली से तीसरी नरक तक भवनपति से लेकर आठवें देवलोक तक और मनुष्य तिर्यंच में सब ठिकाने जाकर उत्पन्न होते हैं। खेचर की १२ लाख कुल कोड़ी है।

जिस तरह खेचर का अधिकार कहा उसी तरह जलचर, स्थलचर, उरपुर और भुजपर का अधिकार भी कह देना चाहिये। नवरं (इतना विशेष) जलचर की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट कोड पूर्व की, कुल कोड़ी १२५०००० साढे बारह लाख है। पहली से सातवीं नरक तक जाते हैं। स्थलचर में योनि पावे २ (पोतज और सम्मूर्च्छिम) स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट ३ पल्योपम की, कुलकोडी दस लाख है। चौथी नरक तक

सम्मूर्च्छिम—देव नारकी के सिवाय जो जीव माता पिता के संयोग के बिना उत्पन्न होते हैं वे सम्मूर्च्छिम कहलाते हैं, जैसे—कीड़ी, कुंथुआ, पतंगा आदि।

जाते हैं। उरपर की स्थिति, जघन्य अन्तमुहूर्त, उत्कृष्ट कोड़ पूर्व की, कुलकोडी दस लाख है, पांचवीं नरक तक जाते हैं। भुजपर की स्थिति जघन्य अन्तमुहूर्त, उत्कृष्ट कोड पूर्व की, कुलकोडी नव लाख है। दूसरी नरक तक जाकर उत्पन्न होते हैं।

२—अहो भगवान्! बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय की कितनी कुलकोडी है? हे गौतम! बेइन्द्रिय की कुलकोडी सात लाख है। तेइन्द्रिय की कुलकोडी आठ लाख है। चौइन्द्रिय की कुलकोडी नव लाख है।

३—अहो भगवान्! गन्ध कितने प्रकार का कहा गया है? हे गौतम! गन्ध सात प्रकार का तथा सात सौ* प्रकार का कहा गया है।

४—अहो भगवान्! पुष्प (फूल) की कितनी कुलकोडी है? हे गौतम! पुष्प की सोलह लाख कुलकोडी है। जल से

---

* सामान्य रूप से गन्ध के ७ भेद हैं—१ मूल—मोच वनस्पति आदि। २-त्वचा-वृक्ष की छाल। ३ काष्ठ- चन्दन आदि। ४ निर्यास वृक्ष का रस-कपूर आदि। ५ पत्र-जातिपत्र, तमालपत्र आदि। ६ पुष्प-पुष्प प्रियङ्गु-वृक्ष के फूल आदि। ७ फल—इलायची, लौंग आदि। इन सात को काला आदि पांच वर्ण से गुणा करने से ३५ भेद हो जाते हैं। ये सब सुगन्धित पदार्थ हैं। इसलिये एक 'सुगन्ध' से गुणा करने पर फिर ३५ के ३५ ही रहे। इन ३५ को पांच रस से गुणा करने पर १७५ हुए। यद्यपि स्पर्श आठ हैं किन्तु उपरोक्त सुगन्धित पदार्थों में व्यवहारदृष्टि में उत्तम चार स्पर्श (कोमल, हल्का, ठण्डा, गर्म) ही माने गये हैं। इसलिए १७५ को ४ से गुणा करने पर ७०० भेद होते हैं। (७×५×१×५×४=७००)।

उत्पन्न होने वाले स्थल से उत्पन्न होने वाले महावृक्ष के, महागुल्म के इन चार जाति के फूलों की प्रत्येक की चार चार लाख कुल कोडी है।

५—अहो भगवान्! वल्ली, लता, हरित काय के कितने भेद हैं? हे गौतम! ४ वल्ली के ४००, ८ लता के ८०० और ३ हरितकाय के ३०० भेद हैं।

६—अहो भगवान्! स्वस्तिक आदि ११ विमानों का कितना विस्तार है? हे गौतम! कोई देवता ३ आकाश आन्तरा * प्रमाण (२८३५८०६/६० योजन) का एक पाउंडा (कदम) भरता हुआ जावे, ऐसी शीघ्रगति से एक दिन दो दिन यावत् छह मास तक जावे तो भी स्वस्तिक आदि ११ विमानों में से किसी का पार पावे और किसी का पार नहीं पावे। स्वस्तिक आदि विमानों का इतना विस्तार है।

७—अहो भगवान्! अर्चि आदि ११ विमानों का कितना विस्तार है? हे गौतम! कोई देवता ५ आकाश आन्तरा प्रमाण (४७२६३३३/६ योजन) का एक कदम भरता जावे, ऐसी शीघ्रगति से एक दिन दो दिन यावत् छह मास तक जावे तो भी किसी विमान का पार पावे और किसी विमान का पार नहीं पावे। अर्चि आदि ११ विमानों का इतना विस्तार है।

८—अहो भगवान्! काम आदि ११ विमानों का कितना

---

*जैसे जम्बूद्वीप में सर्वोत्कृष्ट दिन में ४७२६३२१/६ योजन दूर से सूर्य दिखता है उसका दुगुना (९४५२६४३/६ योजन प्रमाण) को एक आकाश आन्तरा कहते हैं।

विस्तार है ? हे गौतम ! कोई देवता ७ आकाश आन्तरा प्रमाण (६६१६८६६५४ योजन) का एक कदम भरता हुआ छह महीने तक चले तो भी किसी विमान का पार पावे और किसी विमान का पार नहीं पावे। काम आदि ११ विमानों का इतना विस्तार है।

९—अहो भगवान् ! विजय वैजयंत जयंत अपराजित इन चार विमानों का कितना विस्तार है ? हे गौतम ! कोई देवता ९ आकाश आन्तरा प्रमाण (८५०७४०१६ योजन) का एक कदम भरता हुआ छह महीने तक चले तो किसी विमान का पार पावे और किसी विमान का पार नहीं पावे। विजय आदि चार विमानों का इतना विस्तार है।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ६२)

श्री भगवतीजी सूत्र के सातवें शतक के छठे उद्देशे में 'आयुष्य बन्ध आदि' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं *।

अहो भगवान् ! नारकी में उत्पन्न होने वाला जीव नारकी का आयुष्य क्या इस भव में बांधता है, या नरक में उत्पन्न होती वक्त बांधता है या उत्पन्न होने के बाद बांधता है ? हे गौतम ! इस भव में बांधता है, नरक में उत्पन्न होती वक्त नहीं बांधता है, उत्पन्न होने के बाद भी नहीं बांधता है। (पहले भांगे में

* यह थोकड़ा श्री जीवाभिगम सूत्र के तिर्यंच के प्रथम उद्देशे में है।

धता है, दूसरे तीसरे भांगे में नहीं)। इसी तरह २४ दण्डक कह देना।

२—अहो भगवान् ! नारकी में उत्पन्न होने वाला जीव रक का आयुष्य क्या इस भव में वेदता है ? या नरक में पन्न होती वक्त वेदता है या उत्पन्न होने के बाद वेदता है ? गौतम ! इस भव में नहीं वेदता किन्तु उत्पन्न होती वक्त ौर उत्पन्न होने के बाद वेदता है। (पहले भांगे में नहीं दता, दूसरे तीसरे भांगे में वेदता है) इसी तरह २४ दण्डक कह देना।

अहो भगवान् ! नरक में उत्पन्न होने वाला जीव क्या स भव में रहा हुआ महावेदना वाला होता है ? या नरक में त्पन्न होते समय महावेदना वाला होता है ? या नरक में त्पन्न होने के बाद महावेदना वाला होता है ? हे गौतम ! स भव में रहा हुआ कदाचित् महावेदना वाला होता है, कदाचित् अल्प वेदना वाला होता है, नरक में उत्पन्न होते समय कदाचित् महावेदना वाला होता है कदाचित् अल्प वेदना ाला होता है, नरक में उत्पन्न होने के बाद एकान्त दुःख वेदना वेदता है, कदाचित् किंचित् सुख वेदना वेदता है। देवता में पहले दूसरे भांगे में कदाचित् महावेदना वाला कदाचित् अल्प वेदना वाला होता है परन्तु देवता में उत्पन्न होने के बाद एकान्त साता वेदना वेदता है किन्तु किं-

असाता वेदना भी वेदता है। दस दण्डक औदारिक के
पहले दूसरे भांगे में कदाचित् महा वेदना वेदते हैं
अल्प वेदना वेदते हैं उत्पन्न होने के बाद वेमाया (वि
प्रकार से) वेदना वेदते हैं।

३—अहो भगवान्! क्या जीव आभोग (जाण
से आयुष्य बांधता है या अनाभोग (अजाणपणा) से
ष्य बांधता है? हे गौतम! जीव अनाभोग से आयुष्य बां
है। इसी तरह २४ ही दण्डक में कह देना चाहिए।

४—अहो भगवान्! क्या जीव कर्कश वेदनीय (
से वेदने योग्य) कर्म बांधता है? हाँ, गौतम! बांधता
अहो भगवान्! इसका क्या कारण! हे गौतम! १८ पाप
से जीव कर्कश वेदनीय कर्म बांधता है। इसी तरह २४
दण्डक में कह देना चाहिए।

५—अहो भगवान्! क्या जीव अकर्कश वेदनीय (सु
पूर्वक वेदने योग्य) कर्म बांधता है? हाँ, गौतम! बांधता है
अहो भगवान्! इसका क्या कारण? हे गौतम! १८ पाप
त्याग करने से जीव अकर्कश वेदनीय कर्म बांधता है।
तरह मनुष्य में कह देना। शेष २३ दण्डक के जीव अक
वेदनीय कर्म नहीं बांधते हैं।

६—अहो भगवान्! क्या जीव सातावेदनीय कर्म बांध
है? हाँ, गौतम! बांधता है। अहो भगवान्! जीव सा

नीय कर्म किस तरह से बांधता है ? हे गौतम ! जीव साता नीय कर्म* १० प्रकार से बांधता है। इसी तरह २४ ही डक में कह देना चाहिए।

७—अहो भगवान् ! क्या जीव असाता वेदनीय कर्म ता है ? हाँ, गौतम ! बांधता है। अहो भगवान् ! जीव ाता वेदनीय कर्म किस तरह से बांधता है ? हे गौतम ! ×१२ प्रकार से असाता वेदनीय कर्म बांधता है। इसी ह २४ ही दण्डक में कह देना चाहिए।

८—अहो भगवान् ! इस जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में इस सर्पिणी काल का दुःषमा-दुःषम नाम का छठा आरा कैसा ा ? हे गौतम ! यह छठा आरा मनुष्य पशु पक्षियों के दुःख नित हाहाकार शब्द से व्याप्त होगा। इस आरे के प्रारंभ

---

*साता वेदनीय कर्म बन्ध के दस कारणः—
-४-प्राण, भूत, जीव, सत्त्वों पर अनुकम्पा करने से, ५-बहुत प्राण जीव सत्त्वों को दुःख नहीं देने से, ६-उन्हें शोक नहीं उपजाने से, खेद नहीं उपजाने से, ८-वेदना नहीं उपजाने से, ९-नहीं मारने से, -परिताप नहीं उपजाने से जीव साता वेदनीय कर्म बांधता है।

× असातावेदनीय कर्म बांधने के १२ कारण—
दूसरे जीवों को दुःख देने से, २-शोक उपजाने से, ३-खेद उपजाने , ४-पीड़ा पहुंचाने से, ५-मारने से, ६-परिताप उपजाने से, ७-१२- त प्राण, भूत, जीव, सत्त्वों को दुःख देने से, शोक उपजाने से, खेद जाने से, पीड़ा पहुंचाने से, मारने से, परिताप उपजाने से, जीव साता वेदनीय कर्म बांधता है।

में धूलि युक्त भयंकर आंधी चलेगी, फिर संवर्तक हवा चलेगी, दिशाएं धूल से भर जाएंगी, प्रकाश रहित होंगी, अरस, विरस खार खात अग्नि बिजली विष मिश्रित बरसात होगी। वनस्पतियाँ, ×त्रसप्राणी पर्वत नगर सब नष्ट हो जाएंगे। पर्वतों में एक वैताढ्य पर्वत और नदियों में गंगा सिन्धु नदी रहेगी। सूर्य खूब तपेगा, चन्द्रमा अत्यन्त शीतल होवेगा। भूमि अंगार, भोभर, राख तथा तपे हुए तवे के समान होगी। गंगा सिन्धु नदियों का पाट रथ के चीले जितना चौड़ा रहेगा। उसमें रथ की धुरी प्रमाण पानी रहेगा। उसमें मच्छ कच्छ आदि जलचर जीव बहुत होंगे। गंगा सिंधु महानदियों के पूर्व पश्चिम तट पर ॐ७२ बिल हैं। उनमें मनुष्य रहेंगे। वे मनुष्य खाते

× बिलों और गंगा सिन्धु नदी के सिवा गांव और जंगल में चलने वाले त्रस प्राणी।

० वैताढ्य पर्वत के इस तरफ दक्षिण भरत में ९ बिल पूर्व के तट पर हैं और ९ बिल पश्चिम के तट पर हैं। इसी तरह १८ बिल वैताढ्य पर्वत के उत्तर की तरफ उत्तर भरत में हैं। ये ३६ बिल गंगा नदी के तट पर वैताढ्य पर्वत के पास हैं। ऐसे ही ३६ बिल सिंधु नदी के तट पर वैताढ्य पर्वत के पास हैं। इन ७२ बिलों में से ६३ बिलों में मनुष्य मनुष्यणी रहेंगे। ६ बिलों में चौपद पशु रहेंगे और बाकी ३ बिलों में पक्षी रहेंगे। मनुष्य मच्छ कच्छप

र वाले, दीन हीन अनिष्ट अमनोज्ञ स्वर वाले, काले कुरूप
गे। उनकी उत्कृष्ट अवगाहना लगते आरे १ हाथ की उतरते
गरे मुण्ड हाथ (१ हाथ से कुछ कम) प्रमाण होगी और
ग्रायु लगते आरे २० वर्ष की उतरते आरे १६ वर्ष की होगी।
वे अधिक सन्तान वाले होंगे। उनका वर्ण, गंध, रस, स्पर्श,
संहनन, संस्थान सब अशुभ होंगे। वे बहुत रोगी, क्रोधी मानी
मायी लोभी होंगे। वे लोग सूर्य उदय और अस्त के समय
अपने बिलों में से बाहर निकल कर गंगा सिंधु नदियों में से
मच्छ कच्छप पकड़ कर रेत में गाड़ देंगे। शाम को गाड़े
हुए मच्छादि को सुबह निकाल कर खावेंगे और सुबह गाड़े
हुए मच्छादि को शाम को निकाल कर खावेंगे। व्रत, नियम
पच्चक्खाण से रहित मांसाहारी संक्लिष्ट परिणामी (खराब
परिणाम वाले) वे जीव मर कर प्रायः नरक तिर्यंच गति में
जावेंगे। पशु पक्षी भी मर कर प्रायः नरक तिर्यंच गति में
जावेंगे।

यह आरा इक्कीस हजार वर्ष का होगा।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

ढर की नाक के समान नाक होगी ऊँट की जौल के समान होठ होंगे
सीप संतोलिया के समान नख होंगे। उदई की बम्बी के समान शरीर
हाथा नाक कान आदि सब ही द्वार बहते रहेंगे। वे माता पिता की
सेवा से रहित होंगे।

में धूलि युक्त भयंकर आंधी चलेगी, फिर संवर्तक हवा चलेगी दिशाएं धूल से भर जाएंगी, प्रकाश रहित होंगी, अरस विरस क्षार खात अग्नि विजली विप मिश्रित वरसात होगी। वनस्पतियाँ, ×त्रसप्राणी पर्वत नगर सब नष्ट हो जाएंगे। पर्वतों में एक वैताढ्य पर्वत और नदियों में गंगा सिन्धु नदी रहेगी। सूर्य खूब तपेगा, चन्द्रमा अत्यन्त शीतल होवेगा। भूमि अंगार, मोमर, राख तथा तपे हुए तवे के समान होगी। गंगा सिन्धु नदियों का पाट रथ के चीले जितना चौड़ा रहेगा। उसमें रथ की धुरी प्रमाण पानी रहेगा। उसमें मच्छ कच्छ आदि जलचर जीव बहुत होंगे। गंगा सिंधु महानदियों के पूर्व पश्चिम तट पर *७२ बिल हैं। उनमें मनुष्य रहेंगे। वे मनुष्य खराब

× बिलों और गंगा सिन्धु नदी के सिवा गांव और जंगल में चलने वाले त्रस प्राणी।

* वैताढ्य पर्वत के इस तरफ दक्षिण भरत में ६ बिल पूर्व के तट पर हैं और ६ बिल पश्चिम के तट पर हैं। इसी तरह १८ बिल वैताढ्य पर्वत के उत्तर की तरफ उत्तर भरत में हैं। ये ३६ बिल गंगा नदी के तट पर वैताढ्य पर्वत के पास हैं। ऐसे ही ३६ बिल सिंधु नदी के तट पर वैताढ्य पर्वत के पास हैं। इन ७२ बिलों में से ६३ बिलों में मनुष्य मनुष्यणी रहेंगे। ६ बिलों में चौपद पशु रहेंगे और बाकी ३ बिलों में पक्षी रहेंगे। मनुष्य मच्छ कच्छप का आहार करेंगे। पशु पक्षी उन मच्छ कच्छप आदि की हड्डियां आदि चाट कर रहेंगे। मनुष्यों के शरीर की रचना इस प्रकार होगी—घड़े के पींदा (नीचे का भाग) समान शिर होगा, जौ के शालू के समान माथे के केश होंगे, कढ़ाई के पींदे के समान ललाट होगा, चीड़ी के पांखों के समान भाँफण होंगे,

रूप वाले, दीन हीन अनिष्ट अमनोज्ञ स्वर वाले, काले कुरूप होंगे। उनकी उत्कृष्ट अवगाहना लगते आरे १ हाथ की उतरते आरे मुण्ड हाथ (१ हाथ से कुछ कम) प्रमाण होगी और आयु लगते आरे २० वर्ष की उतरते आरे १६ वर्ष की होगी। वे अधिक सन्तान वाले होंगे। उनका वर्ण, गंध, रस, स्पर्श, संहनन, संस्थान सब अशुभ होंगे। वे बहुत रोगी, क्रोधी मानी मायी लोभी होंगे। वे लोग सूर्य उदय और अस्त के समय अपने बिलों में से बाहर निकल कर गंगा सिंधु नदियों में से मच्छ कच्छप पकड़ कर रेत में गाड़ देंगे। शाम को गाड़े हुए मच्छादि को सुबह निकाल कर खावेंगे और सुबह गाड़े हुए मच्छादि को शाम को निकाल कर खावेंगे। व्रत, नियम पचक्खाण से रहित मांसाहारी संक्लिष्ट परिणामी (खराब परिणाम वाले) वे जीव मर कर प्रायः नरक तिर्यंच गति में जावेंगे। पशु पक्षी भी मर कर प्रायः नरक तिर्यंच गति में जावेंगे।

यह आरा इक्कीस हजार वर्ष का होगा।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

करे की नाक के समान नाक होगी ऊंट की नील के समान होठ होंगे सीप संखोलिया के समान नख होंगे। उदई की थम्भी के समान शरीर होगा नाक कान आदि सब ही द्वार बहते रहेंगे। वे माता, पिता की आज्ञा से रहित होंगे।

(थोकड़ा नं० ६४)

श्री भगवतीजी सूत्र के सातवें शतक के सातवें उद्देशे में 'काम भोगादि' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! उपयोग सहित गमनागमनादि क्रिया करते हुए संवुडा (संवर युक्त) अणगार को इरियावही (ऐर्यापथिकी) क्रिया लगती है या सांपरायिकी क्रिया लगती है ? हे गौतम ! अकषायी संवुडा अणगार सूत्र प्रमाणे चलता है, इसलिए उसे इरियावही क्रिया लगती है, सांपरायिकी क्रिया नहीं लगती । कषायसहित, उत्सूत्र चलने वाले अणगार को सांपरायिकी क्रिया लगती है।

२—अहो भगवान् ! काम कितने प्रकार के हैं ? हे गौतम ! काम दो प्रकार के हैं—शब्द और रूप । अहो भग- भगवान् ! काम रूपी है या अरूपी ? सचित्त है या अचित्त ? जीव है या अजीव ? हे गौतम ! काम रूपी है, अरूपी नहीं, काम सचित्त भी है और अचित्त भी है, काम जीव भी है और अजीव भी है । अहो भगवान् ! काम जीवों के होते हैं या अजीवों के होते हैं ? हे गौतम ! काम जीवों के होते हैं, अजीवों के नहीं होते ।

३—अहो भगवान् ! भोग कितने प्रकार के हैं ? हे गौतम ! भोग तीन प्रकार के हैं—गंध, रस, स्पर्श । अहो भगवान् ! भोग रूपी हैं या अरूपी ? सचित्त हैं या अचित्त

जीव हैं या अजीव ? हे गौतम ! भोग रूपी हैं, अरूपी नहीं। भोग सचित्त भी हैं और अचित्त भी हैं। भोग जीव भी हैं और अजीव भी हैं। अहो भगवान् ! भोग जीवों के होते हैं या अजीवों के होते हैं ? हे गौतम ! भोग जीवों के होते हैं, अजीवों के नहीं होते।

४—अहो भगवान् ! नारकी के नेरीये कामी हैं या भोगी हैं ? हे गौतम ! कामी भी हैं और भोगी भी हैं। अहो भगवान् इसका क्या कारण ? हे गौतम ! श्रोत्रेन्द्रिय चक्षुइन्द्रिय आसरी कामी हैं और घ्राणेन्द्रिय रसेन्द्रिय स्पर्शेन्द्रिय आसरी भोगी हैं। इसी तरह भवनपति वाणव्यंतर, ज्योतिषी, वैमानिक, तिर्यंच पंचेंद्रिय और मनुष्य ये १५ दण्डक कह देना। चौइन्द्रिय चक्षुइन्द्रिय आसरी कामी हैं, घ्राणेन्द्रिय रसेन्द्रिय स्पर्शेन्द्रिय आसरी भोगी हैं। तेइन्द्रिय, बेइद्रिंय और एकेन्द्रिय (पांच स्थावर) भोगी हैं, कामी नहीं।

अल्प बहुत्व—सबसे थोड़े कामी भोगी, उससे नोकामी नो भोगी अनंतगुणा, उससे भोगी अनंतगुणा।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ६५)

श्री भगवतीजी सूत्र के सातवें शतक के सातवें उद्देशे में 'अनगार क्रिया' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं

१—अहो भगवान् ! किसी भी देवलोक में उत्पन्न होने योग्य क्षीण भोगी (दुर्बल शरीर वाला) छद्मस्थ मनुष्य क्या उत्थान, कर्म, बल, वीर्य, पुरुषकार, पराक्रम द्वारा विपुल भोग (मनोज्ञ शब्दादि) भोगने में समर्थ नहीं होता। अहो भगवान् ! क्या आप इस अर्थ को ऐसा ही कहते हैं* ? हे गौतम णो इणट्ठे समट्ठे (यह अर्थ ठीक नहीं है)। अहो भगवान् इसका क्या कारण है ? हे गौतम ! वह उत्थान, कर्म, बल वीर्य पुरुषकार पराक्रम से कोई भी विपुल भोग (मनोज्ञ शब्दादि) भोगने में समर्थ है। इसलिए वह भोगी पुरुष भोगों का त्याग पच्चक्खाण करने से महा निर्जरा वाला और महा पर्यवसान (महाफल) वाला होता है।

२—जिस तरह छद्मस्थ का कहा उसी तरह अधो अवधिज्ञानी (नियत क्षेत्र का अवधि ज्ञान वाला) का भी कह देना चाहिए।

६—अहो भगवान् ! उसी भव में सिद्ध होने योग्य यावत् सर्व दुःखों का अन्त करने योग्य क्षीणभोगी (दुर्बल शरीर वाला) परम अवधिज्ञानी मनुष्य क्या उत्थान कर्म बल वीर्य पुरुषकार पराक्रम से विपुल भोग भोगने में समर्थ नहीं है ?

---

* इस प्रश्न का आशय यह है कि जो भोग भोगने में समर्थ नहीं है, वह अभोगी है किन्तु अभोगी होने मात्र से ही त्यागी नहीं हो सकता। त्याग करने से त्यागी होता है और त्याग करने से ही निर्जरा होती है।

हे गौतम ! णों इणट्ठे समट्ठे — वह उत्थानादि मे साधु के योग्य विपुल भोग भोगने में समर्थ है। भोगों का त्याग पच्चक्खाण करने से वह महानिर्जरा और महा पर्यवसान (महा फल) वाला होता है।

४—जिस तरह परमावधिज्ञानी का कहा उसी तरह से केवलज्ञानी का कह देना चाहिये।

अहो भगवान् ! क्या ÷ असंज्ञी (मन रहित) त्रस और पांच स्थावर अज्ञानी अज्ञानके अन्धकार में डूबे हुए अज्ञान रूपी मोह जाल में फंसे हुए अकाम निकरण (अनिच्छा पूर्वक) वेदना वेदते हैं ? हाँ, गौतम ! वेदते हैं।

* अहो भगवान् ! क्या संज्ञी (मन सहित) जीव अकाम निकरण वेदना वेदते हैं ? हाँ, गौतम ! वेदते हैं। अहो भगवान् !

÷ जो जीव असंज्ञी (मन रहित) हैं उनके मन नहीं होनेमें इच्छा शक्ति और ज्ञान शक्ति के अभावमें क्या अकामनिकरण (अनिच्छा-पूर्वक) अज्ञान पणे वेदना-सुख दुःखका अनुभव करते हैं ? इस प्रश्न का यह भावार्थ है। इसका उत्तर—हाँ अनुभव करते हैं इस तरह दिया है।

* अहो भगवान् ! जो जीव इच्छा शक्ति युक्त और संज्ञी (मनसहित-समर्थ) है क्या वह भी अनिच्छापूर्वक अज्ञान पणे से सुख दुःख का अनुभव करते हैं ? हाँ गौतम ! करते हैं। अहो भगवान् ! इसका क्या कारण ? हे गौतम ! जैसे कोई पुरुष देखने की शक्ति से युक्त है तो भी वह पुरुष दीपक के बिना अन्धकार में रहे हुए पदार्थों को नहीं देख सकता तथा उपयोग बिना ऊंचे नीचे और पीठ पीछे के पदार्थों को

इसका क्या कारण ? हे गौतम ! जैसे—अन्धकार में दीपक विन आंखों से देखा नहीं जा सकता। ऊर्ध्व दिशाओं में दृष्टि फैला कर देखे विना रूप देखा नहीं जा सकता। इस कारण से, अकाम निकरण वेदना वेदते हैं।

७—× अहो भगवान् ! क्या संज्ञी (मन सहित) जीव प्रकाम (तीव्र इच्छा पूर्वक) वेदना वेदते हैं ? हाँ, गौतम वेदते हैं। अहो भगवान् ! इसका क्या कारण है ? हे गौतम वे समुद्र पार नहीं जा सकते, समुद्र पार के रूपों को नहीं देख सकते, देवलोक के रूपों को नहीं देख सकते, इस कारण से वे प्रकाम (तीव्र इच्छा पूर्वक) वेदना वेदते हैं।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

देख सकता है। ये इच्छा शक्ति और ज्ञानशक्ति युक्त होते हुए भी उपयोग बिना सुख दुःख का अनुभव करते हैं। जिस प्रकार असंज्ञी जीव इच्छा और ज्ञान शक्ति रहित होने से अनिच्छापणे और अज्ञान दशा में सुख दुःख वेदते हैं उसी तरह से संज्ञी जीव इच्छा और ज्ञानशक्ति होते हुए भी शक्ति की प्रवृत्ति के अभाव में तीव्र अभिलाषा के कारण अनिच्छा पूर्वक सुख दुःख वेदते हैं।

× अहो भगवान् ! क्या संज्ञी (मन सहित) जीव प्रकाम निकरण-तीव्र अभिलाषा पूर्वक सुख दुःख वेदते हैं ? हाँ, गौतम ! वेदते हैं। अहो भगवान् ! किस तरह वेदते हैं ? हे गौतम ! जो समुद्र के पार नहीं जा सकते, समुद्र के पार रहे हुए रूपों को नहीं देख सकते, वे तीव्र अभिलाषा पूर्वक सुख दुःख वेदते हैं। वे इच्छाशक्ति और ज्ञानशक्ति से युक्त हैं किन्तु उनको प्राप्त करने की शक्ति नहीं है, केवल तीव्र अभि-

(थोकड़ा नं० ६६)

श्री भगवतीजी सूत्र के सातवें शतक के आठवें उद्देशे में 'छद्मस्थ अवधिज्ञानी' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! गत अनन्त काल में क्या छद्मस्थ मनुष्य सिर्फ तप संयम, संवर ब्रह्मचर्य और आठ प्रवचन माता के पालने से सिद्ध बुद्ध मुक्त हुआ है ? हे गौतम ! णो इणट्ठे समट्ठे (ऐसा नहीं हुआ)। अहो भगवान् ! इसका क्या कारण ? हे गौतम ! गत अनन्त काल में जो सिद्ध बुद्ध मुक्त हुए हैं वे सब उत्पन्न ज्ञान दर्शन के धारक अरिहंत जिन केवली होकर सिद्ध बुद्ध मुक्त हुए हैं, होते हैं और होवेंगे। जिस तरह छद्मस्थ का कहा उसी तरह अधोअवधिक और परम अधोअवधिक का भी कह देना चाहिए !

२—अहो भगवान् ! गत अनन्त काल में क्या केवली मनुष्य सिद्ध बुद्ध मुक्त हुए हैं ? हाँ, गौतम, ! हुए हैं, वर्तमान काल में होते हैं और भविष्य काल में होवेंगे।

लाया है। इसलिये वे सुख दुःख को वेदते हैं। असंज्ञी जीव इच्छा और ज्ञानशक्ति के अभाव से अनिच्छा और अज्ञान पूर्वक सुख दुःख वेदते हैं। संज्ञी जीव इच्छा और ज्ञानशक्ति युक्त होते हुए भी उपयोग के अभाव से अनिच्छा और अज्ञान पूर्वक सुख दुःख वेदते हैं तथा संज्ञी जीव समर्थ और इच्छा युक्त होते हुए भी प्राप्त करने की शक्ति की प्रवृत्ति के अभाव से सिर्फ तीव्र अभिलाषा पूर्वक सुख दुःख वेदते हैं।

३—अहो भगवान् ! गत अनन्त काल में, वर्तमान काल में और भविष्यत काल में जितने सिद्ध बुद्ध मुक्त हुए हैं, होते हैं, होवेंगे क्या वे सभी उत्पन्न ज्ञान दर्शन के धारक अरिहंत जिन केवली होकर सिद्ध बुद्ध मुक्त हुए हैं होते हैं और होवेंगे ? हाँ, गौतम ! वे सब उत्पन्न ज्ञान दर्शन के धारक अरिहंत जिन केवली होकर सिद्ध बुद्ध मुक्त हुए हैं, होते हैं, होवेंगे।

४—अहो भगवान् ! क्या उन उत्पन्न ज्ञान दर्शन के धारक अरिहंत जिन केवली को 'अलमत्थु' (अलमस्तु-पूर्ण) कहना चाहिए ? हाँ, गौतम ! उन्हें अलमत्थु (अलमस्तु)-पूर्ण कहना चाहिए।

५—अहो भगवान् ! क्या हाथी और कुंथुआ का जीव समान है ? हाँ, गौतम ! * दीपक के दृष्टान्त अनुसार समान है, सिर्फ शरीर का फर्क है।

नारकी के नेरीये यावत् वैमानिक तक २४ ही दण्डक के जीव जो पापकर्म करते हैं, किये हैं और करेंगे वे सब दुःख रूप

*जैसे एक दीपक का प्रकाश किसी एक कमरे में फैला हुआ है यदि उसको किसी बर्तन द्वारा ढक दिया जाय तो उसका प्रकाश बर्तन परिमाण हो जाता है। इसी तरह जब जीव हाथी का शरीर धारण करता है तो उतने बड़े शरीर में व्याप्त रहता है और जब कुंथुआ का शरीर धारण करता है तो उस छोटे शरीर में व्याप्त रहता है। इस प्रकार सिर्फ शरीर में फर्क रहता है। जीव में कुछ भी फर्क नहीं है। सब जीव समान हैं।

और जो निर्जरा करते हैं, की है और करेंगे वह सब सुख रूप है।

४—अहो भगवान् ! संज्ञा कितने प्रकार की है? हे गौतम ! संज्ञा १० प्रकार की है—१ आहार संज्ञा, २ भय संज्ञा, ३ मैथुन संज्ञा, ४ परिग्रह संज्ञा, ५ क्रोध संज्ञा, ६ मान संज्ञा, ७ माया संज्ञा, ८ लोभ संज्ञा, ९ * ओघ संज्ञा, ÷ १० लोक संज्ञा। २४ ही दण्डक में १० संज्ञा पाती है।

५—अहो भगवान् ! नारकी के नेरीये कितने प्रकार की वेदना वेदते हैं ? हे गौतम ! १० प्रकार की क्षेत्र वेदना वेदते हैं—१ शीत, २ उष्ण, ३ भूख, ४ प्यास, ५ खाज खुजली, ६ परतन्त्रता, ७ ज्वर, ८ दाह, ९ भय, १० शोक।

६—अहो भगवान् ! क्या हाथी और कुंथुआ के अपच्चक्खाणिया क्रिया समान (सरीखी) होती है ? हाँ, गौतम ! अविरति के कारण से (पच्चक्खाण नहीं होने के कारण से) दोनों के अपच्चक्खाणिया क्रिया समान होती है।

* मति ज्ञानावरणीयादि के क्षयोपशम से शब्द और अर्थ के सामान्य ज्ञान को ओघ संज्ञा कहते हैं।

÷ सामान्य रूप से जानी हुई बात को विशेष रूप से जानने को लोक संज्ञा कहते हैं।

अर्थात् दर्शनोपयोग को ओघ संज्ञा तथा ज्ञानोपयोग को लोक संज्ञा कहते हैं। किसी के मत से ज्ञानोपयोग ओघ संज्ञा है और दर्शनोपयोग लोक संज्ञा। सामान्य प्रवृत्ति को ओघ संज्ञा कहते हैं तथा लोकदृष्टि को लोक संज्ञा कहते हैं, यह भी एक मत है।

३—अहो भगवान् ! गत अनन्त काल में, वर्तमान काल में और भविष्यत काल में जितने सिद्ध बुद्ध मुक्त हुए हैं, होते हैं, होवेंगे क्या वे सभी उत्पन्न ज्ञान दर्शन के धारक अरिहंत जिन केवली होकर सिद्ध बुद्ध मुक्त हुए हैं होते हैं और होवेंगे ? हाँ गौतम ! वे सब उत्पन्न ज्ञान दर्शन के धारक अरिहंत जिन केवली होकर-सिद्ध बुद्ध मुक्त हुए हैं, होते हैं, होवेंगे।

४—अहो भगवान् ! क्या उन उत्पन्न ज्ञान दर्शन के धारक अरिहंत जिन केवली को 'अलमत्थु' (अलमस्तु-पूर्ण) कहना चाहिए ? हाँ, गौतम ! उन्हें अलमत्थु (अलमस्तु)-पूर्ण कहना चाहिए।

५—अहो भगवान् ! क्या हाथी और कुंथुआ का जीव समान है ? हाँ, गौतम ! * दीपक के दृष्टान्त अनुसार समान है, सिर्फ शरीर का फर्क है।

नारकी के नेरीये यावत् वैमानिक तक २४ ही दण्डक के जीव जो पापकर्म करते हैं, किये हैं और करेंगे वे सब दुःख रू

*जैसे एक दीपक का प्रकाश किसी एक कमरे में फैला हुआ है यदि उसको किसी बर्तन द्वारा ढक दिया जाय तो उसका प्रकाश बर्तन परिमाण हो जाता है। इसी तरह जब जीव हाथी का शरीर धारण करता है तो उतने बड़े शरीर में व्याप्त रहता है और जब कुंथुआ का शरीर धारण करता है तो उस छोटे शरीर में व्याप्त रहता है। इस प्रकार सिर्फ शरीर में फर्क रहता है। जीव में कुछ भी फर्क नहीं है। सब जीव समान हैं।

ा। इस प्रकार अन्त में संसार सागर को उल्लंघन कर
है। अहो भगवान्! इसका क्या कारण? हे गौतम!
एषणीय आहारादि का सेवन करने वाला श्रमण निर्ग्रन्थ
धर्म का उल्लंघन नहीं करता, वह पृथ्वीकाय से लेकर
ाय तक के जीवों की रक्षा करता है, उन जीवों की अनु-
ा करता है, इस कारण वह संसार सागर को तिर जाता है।

९—अहो भगवान्! क्या अस्थिर पदार्थ बदलता है?
ा है और स्थिर पदार्थ नहीं बदलता, नहीं टूटता? हाँ,
न! अस्थिर पदार्थ बदलता है, टूटता है और स्थिर पदार्थ
ीं बदलता, नहीं टूटता है।

१०—अहो भगवान्! क्या बालक शाश्वत है और बालक-
ा अशाश्वत है? क्या पंडित शाश्वत है, पंडितपना अशा-
त है? हाँ, गौतम! बालक शाश्वत है बालकपना अशाश्वत
। पण्डित शाश्वत है, पंडितपना अशाश्वत है।

सेवं भंते! सेवं भंते!!

(थोकड़ा नं० ६७)

श्री भगवतीजी सूत्र के सातवें शतक के नवमें उद्देशे में 'असं-
ड़ा अणगार' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान्! क्या वैक्रिय लब्धिवंत असंवुडा
अणगार (प्रमादी साधु) बाहर के पुद्गलों को ग्रहण किये बिना

७—अहो भगवान्! आधाकर्मी आहारादि (आहार, वस्त्र, पात्र, मकान) को सेवन करने वाला श्रमण निर्ग्रन्थ क्या बांधता है? क्या करता है? क्या चय करता है? क्या उपचय करता है? हे गौतम! आधाकर्मी आहारादि का सेवन करने वाला श्रमण निर्ग्रन्थ आयुष्य कर्म को छोड़ कर शिथिल बन्धन में बंधी हुई सात कर्म प्रकृतियों को मजबूत बन्धन में बांधता है यावत् बारम्बार संसार परिभ्रमण करता है। अहो भगवान्! इसका क्या कारण? हे गौतम! आधाकर्मी आहारादि का सेवन करने वाला श्रमण निर्ग्रन्थ अपने धर्म का उल्लंघन कर जाता है, वह पृथ्वीकाय के जीवों से लेकर त्रसकाय तक के जीवों की घात की परवाह नहीं करता और जिन जीवों के शरीर का वह भक्षण करता है, उन जीवों पर वह अनुकम्पा नहीं करता।

८—अहो भगवान्! प्रासुक एषणीय आहारादि का सेवन करनेवाला श्रमण निर्ग्रन्थ क्या बांधता है? यावत् क्या उपचय करता है? हे गौतम! आयुष्य कर्म को छोड़ कर मजबूत बन्धन में बंधी हुई सात कर्म प्रकृतियों को शिथिल बन्धन वाली करता है, आदि सारा वर्णन* संवुड (संवृत) अनगार की तरह कह देना चाहिये। किंतु इतनी विशेषता है कि कदाचित् आयुष्य कर्म बांधता है और कदाचित् नहीं

* भगवती सूत्र के थोकड़ों का पहिला भाग पृष्ठ २९ में विस्तृत वर्णन है।

हजार जीव एक मछली के पेट में उत्पन्न हुए। बाकी प्रायः सब जीव नरक तिर्यंच में उत्पन्न हुए।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ६८)

श्री भगवतीजी सूत्र के सातवें शतक के दसवें उद्देशे में 'अन्यतीर्थी' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

राजगृह नगर के बाहर * बहुत अन्यतीर्थी रहते हैं। उनमें से कालोदायी भगवान् के पास आया और भगवान से पञ्चास्तिकाया के विषय में प्रश्न पूछा। भगवान ने फरमाया कि हे कालोदायी ! पांच अस्तिकाय हैं--धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय। इन में से जीवास्तिकाय जीव है, बाकी ४ अजीव हैं। इनमें से पुद्गलास्तिकाय रूपी है, बाकी ४ अरूपी हैं धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, ये अजीव अरूपी है इन पर कोई खड़ा रहने में, सोने में बैठने में समर्थ नहीं है। पुद्गलास्तिकाय अजीवरूपी है इस पर कोई भी खड़ा रह सकता है, सो सकता है, बैठ सकता है।

१—अहो भगवान् ! क्या अजीवकाय (धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय) को पाप-

* १ कालोदायी, २ शैलोदायी, ३ शैवालोदायी, ४ उदय, ५ नामोदय, ६ नर्मोदय, ७ अन्यपालक, ८ शैलपालक, ९ शंख पालक, १० सुहस्ती, ११ गृहपति।

वैक्रिय कर सकता है ? हे गौतम ! नहीं कर सकता, किन्तु बाहर के पुद्गलों को ग्रहण करके १ एक वर्ण एक रूप, २ एक वर्ण अनेक रूप, ३ अनेक वर्ण एक रूप, ४ अनेक वर्ण अनेक रूप वैक्रिय कर सकता है।

२—अहो भगवान् ! क्या वैक्रिय लब्धिवंत अणगार बाहर के पुद्गलों को ग्रहण किये बिना काले को नीला रूप और नीले को काला रूप परिणमा सकता है ? हे गौतम ! नहीं परिणमा सकता, किन्तु बाहर के पुद्गल ग्रहण करके काले को नीला और नीले को काला परिणमा सकता है। इस तरह वर्ण के १०, गन्ध का १, रस के १० और स्पर्श के ४ ये २५ भांगे हुए। ४ भांगे पहले के मिला कर कुल २६ भांगे हुए।

३—अहो भगवान् ! चेड़ा कोणिक के महाशिला कंटक संग्राम में और रथमूसल संग्राम में कितने मनुष्य मरे और वे कहाँ जाकर उत्पन्न हुए ? हे गौतम ! महाशिला कंटक संग्राम में ८४ लाख मनुष्य मरे, वे सब नरक तिर्यञ्च में उत्पन्न हुए। रथ-मूसल संग्राम में ९६ लाख मनुष्य मरे, उनमें से एक वरुण नाग नत्तुआ का जीव सौधर्म देवलोक के अरुणाभ विमान में महर्द्धिक देवपने उत्पन्न हुआ। और एक (वरुण नाग नत्तुआ के बाल मित्र का जीव *) उत्तम मनुष्यकुल में उत्पन्न हुआ।

* वरुण नाग नत्तुआ का जीव और वरुण नाग नत्तुए के बाल मित्र का जीव फिर महाविदेह क्षेत्र में जन्म लेकर मोक्ष जायेंगे।

हजार जीव एक मछली के पेट में उत्पन्न हुए। बाकी प्रायः सब जीव नरक तिर्यंच में उत्पन्न हुए।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ६८)

श्री भगवतीजी सूत्र के सातवें शतक के दसवें उद्देशे में 'अन्यतीर्थी' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

राजगृह नगर के बाहर *बहुत अन्यतीर्थी रहते हैं। उनमें से कालोदायी भगवान् के पास आया और भगवान से पञ्चास्तिकाया के विषय में प्रश्न पूछा। भगवान ने फरमाया कि हे कालोदायी ! पांच अस्तिकाय हैं—धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय। इन में से जीवास्तिकाय जीव है, बाकी ४ अजीव हैं। इनमें से पुद्गलास्तिकाय रूपी है, बाकी ४ अरूपी हैं धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, ये अजीव अरूपी है इन पर कोई खड़ा रहने में, सोने में बैठने में समर्थ नहीं है। पुद्गलास्तिकाय अजीवरूपी है इस पर कोई भी खड़ा रह सकता है, सो सकता है, बैठ सकता है।

१—अहो भगवान् ! क्या अजीवकाय (धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय) को पाप-

* १ कालोदायी, २ शैलोदायी, ३ शैवालोदायी, ४ उदय, ५ नामोदय, ६ नर्मोदय, ७ अन्यपालक, ८ शैलपालक, ६ शंख पालक, १० सुहस्ती, ११ गृहपति।

कर्म लगता है ? हे कालोदायी ! अजीवकाय को पापकर्म नहीं लगता है किंतु जीवास्तिकाय को पापकर्म लगता है।

भगवान् से प्रश्नोत्तर करके कालोदायी बोध को प्राप्त हुआ। खन्दक जी की तरह भगवान् के पास दीक्षा अङ्गीकार की, ग्यारह अङ्ग पढ़े।

किसी एक समय कालोदायी अणगार ने भगवान् से पूछा कि अहो भगवान् ! क्या जीवों को पापकर्म अशुभफल विपाक सहित होते हैं ? हाँ, कालोदायी ! जीवों को पापकर्म अशुभफल विपाक सहित होते हैं-जैसे विषमिश्रित भोजन करते समय तो मीठा लगता है किन्तु पीछे परिणमते समय दुःखरूप दुर्वर्णादि रूप होता है। इसी तरह १८ पापकर्म करते हुए तो जीव को अच्छा लगता है किंतु पाप के कड़वे फल भोगते समय जीव दुःखी होता है।

अहो भगवान् ! क्या जीवों को शुभकर्म शुभफल वाले होते हैं ? हाँ, कालोदायी ! शुभकर्म शुभफल वाले होते हैं-जैसे कड़वी औषधि मिश्रित स्थाली पाक (मिट्टी के बर्तन में अच्छी तरह पकाया हुआ भोजन) खाते समय तो अच्छा नहीं लगता किन्तु पीछे परिणमते समय शरीर में सुखदायी होता है। इसी तरह १८ पाप त्यागते समय तो अच्छा नहीं लगता परन्तु पीछे जब शुभ कल्याणकारी पुण्यफल उदय में आता है तब बड़ा सुखदायी होता है।

अहो भगवान् ! एक पुरुष अग्नि जलाता है और एक पुरुष अग्नि बुझाता है, इन दोनों में कौन महाकर्मी, महा क्रिया वाला महा आस्रवी महा वेदना वाला है और कौन अल्पकर्मी अल्प क्रिया वाला, अल्प आस्रवी अल्प वेदना वाला है ? हे कालोदायी ! जो पुरुष अग्नि जलाता है वह महाकर्मी यावत् महावेदना वाला है क्योंकि वह पांच काया (पृथ्वीकाय, अप्काय, वायुकाय, वनस्पतिकाय, त्रसकाय) का महा आरम्भी है, एक तेउकाया का अल्प आरम्भी है। जो पुरुष अग्नि बुझाता है वह अल्पकर्मी यावत् अल्प वेदना वाला है क्योंकि वह पांच काया का अल्प आरम्भी है, एक तेउकाया का महा आरम्भी है, इसलिए अल्पकर्मी यावत् अल्प वेदना वाला है।

अहो भगवान् ! क्या अचित्त पुद्गल अवभास करते हैं, उद्योत करते हैं, तपते हैं, प्रकाश करते हैं ? हाँ, कालोदायी ! अचित्त पुद्गल अवभास करते हैं यावत् प्रकाश करते हैं। कोपायमान तेजोलेशी लब्धिवंत अणगार की तेजोलेश्या निकल कर नजदीक या दूर जहाँ जाकर गिरती है वहाँ वे अचित्त पुद्गल अवभास करते हैं यावत् प्रकाश करते हैं।

कालोदायी अणगार उपवास बेला तेला आदि तपस्या करते हुए केवलज्ञान केवलदर्शन उपार्जन कर सिद्ध बुद्ध यावत् मुक्त हुए।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

※ समाप्त ※

पता—अगरचन्द भैरोदान सेठिया
जैन पारमार्थिक संस्था, मरोठियों का मोहल्ला
बीकानेर (राजस्थान)

मुद्रक :—
कमल प्रिन्टर्स, मदनगंज

श्री भगवती सूत्र के थोकड़ों का

तृतीय भाग

(अष्टम नवम शतक)

★

प्रकाशक:—
श्री अगरचन्द भैरोंदान सेठिया
जैन पारमार्थिक संस्था
बीकानेर

श्री सेठिया जैन ग्रन्थमाला पुष्प नं० १३०

श्री भगवती सूत्र के थोकड़ों का

तृतीय भाग

(अष्टम नवम शतक-थोकड़ा नं० ६६ से ६२ तक)

अनुवादक—

पं० घेवरचन्द्र बाँठिया 'वीरपुत्र'

प्रकाशक—

श्री अगरचंद भैरोंदान सेठिया

जैन पारमार्थिक संस्था, बीकानेर

प्रथमावृत्ति १००० | अक्षय तृतीया
वीर सं० २४८२
विक्रम सं० २०१४ | मूल्य ॥=)
नये पैसे ६

किया है। इस भागमें, जहाँ आवश्यक समझा गया, फुट नोट में विशेष खुलासा दिया गया है।

प्रूफ संशोधन में पूरी सावधानी रखते हुए भी इस भाग में दृष्टि दोष से कुछ अशुद्धियाँ रह गई हैं जिनका शुद्धि पत्र अलग दिया गया है। पाठक देखेंगे कि शुद्धिपत्र में अधिकांश अशुद्धियाँ छपाई में प्रेस की असावधानी से रही हैं। कई अक्षर ब ध र द व रेफ श पूरे तौर नहीं उठे हैं तो कई जगह टाइप टूटे हुए हैं और कई जगह मात्राएं भी नहीं उठी हैं। हमने शुद्धिपत्रमें छपाई की वे ही अशुद्धियाँ दी हैं जिनसे समझनेमें कठिनाई या भ्रान्ति हो सकती है। शेष छपाई की गलतियाँ पाठक स्वयं सुधार लेवें। भगवती सूत्रका विषय अति गंभीर है अतः उसके विषय प्रतिपादन में यदि कोई कमी या गलती पाठक महसूस करें तो हमें अवश्य सूचित करने की कृपा करें ताकि आगामी आवृत्तिमें इसका संशोधन किया जा सके। पाठकों की इस कृपा के लिये हम उनके आभारी होंगे।

श्री भगवती सूत्र के थोकड़ों के द्वितीय तृतीय भाग में पृष्ठ संख्या अधिक हो जानेसे तथा कागजके भाव में कुछ वृद्धि हो जाने आदि कारणोंसे हमें पहले भाग की अपेक्षा इनका अधिक मूल्य यानी ह्म आना रखना पड़ा है।

निवेदक
भैरोंदान सेठिया

अनुक्रमणिका

शुद्धिपत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५	११	वुल	कुल
८	६	रांजोगी	संजोगी
१७	२	भाँगं	भाँगे
२२	७	केयलज्ञान	केवलज्ञान
२६	१	उवधारणा	उवधारणया
२७	१६	स्थित	स्थिति
३१	१४	केवलज्ञान	केवलज्ञान
३२	१६	चका	चुका
३६	२१	सागोरावउत्ता	सागारोवउत्ता
३७	१४	ज्ञान	ज्ञान
४०	१	विपुलमात	विपुलमति
४२	६	दा	का
५१	११	स्यविर	स्थविर
५२	२५	करने के भाव	करने के भाव
६६	८	पर्यहां	परीपहां
७०	१८	पृष्ठ	पृष्ठ
७१	७	सम्यन्धी	सम्बन्धी
८०	२१	तैजस कार्मण शरीर	तैजस कार्मण शरीर
८७	१४	वंदनीय	वेदनीय
९१	१४	मं	से
१०२	५	सं	से
१०३	१३	तहर	तरह
११२	३ (जीवके नीचे)		१
११३	१६	जीव	जाव
११४	८	वहाँ	वहाँ
१२०	१७	महावीर	महावीर

(थोकड़ा नं० ६६)

श्री भगवतीजी सूत्र के आठवें शतक के पहले उद्देशे में ६
दण्डक का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१ नाम द्वार २ भेद द्वार ३ शरीर द्वार ४ इन्द्रिय द्वार ५
रीर की इन्द्रिय द्वार ६ वर्णादिक द्वार ७ शरीरका वर्णादिक
ार ८ इन्द्रियों का वर्णादिक द्वार, ९ शरीर की इन्द्रियों का
वर्णादिक द्वार।

१—अहो भगवान्! पुद्गल कितने प्रकार के हैं?
हे गौतम! पुद्गल तीन प्रकार के हैं— पओगसा (प्रयोगसा—
मन वचन काया आदि १५ प्रयोगों (योगों) से जीव द्वार
ग्रहण किये हुए पुद्गल जैसे जीव सहित शरीर आदि), २ मिस्स
(मिश्रसा—प्रयोग (योग) और स्वभाव दोनों के सम्बन्ध
परिणमे हुए पुद्गल जैसे जीव का मृतशरीर कपड़ा, लव
आदि), ३ वीससा (विश्रसा—स्वभाव से परिणमे हुए पु
जैसे— बादल धूप छाया आदि)।

१—पहले बोले नाम द्वार में जीव के ८१ भेद—स्थाव
१० भेद (५ सूक्ष्म स्थावर, ५ बादर स्थावर), ३ विकलें
७ नारकी, ५ संज्ञी तिर्यंच पञ्चेन्द्रिय, ५ असंज्ञी तिर्यंच
न्द्रिय, १ गर्भज मनुष्य, १ सम्मूर्च्छिम मनुष्य, देवता

भेद (१० भवनपति, ८ वाणव्यन्तर, ५ ज्योतिषी, १२ देवलोक, ९ ग्रैवेयक ५ अनुत्तर विमान), ये कुल मिलाकर ८१ भेद हुए।

२—दूसरे बोले भेद द्वार में जीव के १६१ भेद—पहले बोल में जीव के ८१ भेद कहे उनमें (सम्मूर्च्छिम मनुष्य निकाल कर) ८० के पर्जापता (पर्याप्ता) और अपजापता (अपर्याप्ता)=१६० और सम्मूर्च्छिम मनुष्य का अपजापता=कुल १६१ भेद हुए।

३—तीसरे बोले शरीर द्वार में १६१ जीव के भेदों के ४९१ शरीर होते हैं—ऊपर कहे हुए १६१ भेदों में से १५४ भेदों में (वायुकाय, पांच गर्भज तिर्यंच, गर्भज मनुष्य ये ७ टले) एक एक के तीन तीन शरीर=४६२। वायुकाय के ४ शरीर (औदारिक वैक्रिय, तैजस, कार्मण)। पांच गर्भज तिर्यंच के चार चार करके २० शरीर और गर्भज मनुष्य के ५ शरीर कुल मिलाकर ४९१ शरीर हुए।

४—चौथे बोले इन्द्रिय द्वार में जीव के १६१ भेदों के ७१३ इन्द्रियाँ—जीवके १६१ भेदों में से १३५ भेदों में (२० एकेन्द्रियका ६ विकलेन्द्रियका ये २६ टला) प्रत्येक के पांच पांच इन्द्रियाँ=६७५। एकेन्द्रिय के २० भेद-जिनकी २० इन्द्रियाँ। तीन विकलेन्द्रिय के छह भेद-जिनकी १८ इन्द्रियाँ ये कुल मिलाकर ७१३ इन्द्रियाँ हुईं।

५—पाँचवें बोले शरीर की इन्द्रिय द्वार में ४९१ शरीर की २१७५ इन्द्रियाँ-शरीर के ४९१ भेदों में से ४१२ शरीर

प्रत्येक के पांच पांच इन्द्रियाँ=२०६०, एकेन्द्रिय के ६१ शरीर की ६१ इन्द्रियाँ, तीन विकलेन्द्रिय के १८ शरीर की ५४ इन्द्रियाँ, कुल मिलाकर शरीर की=२१७५ इन्द्रियाँ हुईं।

६—छठे बोले वर्णादि द्वार में जीव के १६१ भेदों के ४०२५ वर्ण गन्ध रस स्पर्श संठाण हैं। वर्ण ५, गन्ध २, रस ५, स्पर्श ८, संठाण ५=२५×१६१=४०२५ हुए।

७—सातवें बोले शरीर के वर्णादि द्वार में ४६१ शरीरके ११६३१ वर्ण गन्ध रस स्पर्श संठाण हैं–४६१×२५=१२२७५ हुए। १६१ कार्मण शरीर चौफरसी है, इस कारण से १६१×४=६४४ कम कर देने से=११६३१ वर्णादि हुए।

८—आठवें बोले इन्द्रियों के वर्णादि द्वार में ७१३ इन्द्रियों के १७८२५ वर्ण गन्ध रस स्पर्श संठाण हैं–७१३×२५=१७८२५ इन्द्रियाँ के वर्णादि हुए।

९—नवमें बोले शरीरकी इन्द्रियों के वर्णादि द्वार में–२१७५ शरीर की इन्द्रियों के ५१५२३ वर्ण गन्ध रस स्पर्श संठाण हैं–२१७५×२५=५४३७५ हुए। १६१ कार्मण शरीर चौफरसी है, इसलिये इंद्रियाँ ७१३×४=२८५२ कम कर देने से ५१५२३ शरीरको इन्द्रियों के वर्णादि हुए।

सर्व मिलाकर ८८६२५ पओगसा परिणम्या पुद्गल, ८८६२५ मिस्सा परिणम्या पुद्गल, ५३० वीससा परिणम्या पुद्गल हुए कुल मिला कर १७७७८० भेद हुए।

जीव ग्रह्या ते पओगसा, मिस्सा जीवा रहित।
विससा हाथ आवे नहीं, जिणवर वाणी तहत॥

अल्पबहुत्व—सब से थोड़े पओगसा परिणम्या पुद्गल, उससे मिस्सा परिणम्या पुद्गल अनन्तगुणा, उससे वीससा परिणम्या पुद्गल अनन्तगुणा।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ७०)

श्री भगवतीजी सूत्र के आठवें शतक के पहले-उद्देशे में 'भांगों' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—परमाणु से लेकर अनन्त प्रदेशी खंध तक पओगसा, मिस्सा वीससा पुद्गलपणे परिणमते हैं उनके भांगे संख्याते असंख्याते अनन्ते होते हैं। परमाणु में असंजोगी भांगा होता है, दो प्रदेशी में असंजोगी और द्विसंजोगी भांगा होते हैं। इस तरह तीनप्रदेशी चारप्रदेशी आदि जितने प्रदेश जितने या होवें उतने संजोग तक भांगे बना लेना, * गांगेय अणगार के भांगों की तरह कह देना। इसके मूल घर ३ हैं—पओगसा, मिस्सा, विससा। पओगसा के ३ भेद—मन वचन काया। मन के ४ भेद—सत्यमन, असत्यमन, मिश्रमन, व्यवहारमन। एक एक के छह छह भेद होते हैं—आरम्भ, अनारम्भ, सारम्भ, असारम्भ, समारम्भ, असमारम्भ, ६×४=२४ भेद मन के हुए। इसी तरह २४ भेद वचन के होते हैं। [illegible]

*भगवतीजी शतक नवम [illegible]

क, औदारिक मिश्र, वैक्रिय, वैक्रिय मिश्र, आहारक, आहा-
क मिश्र, कार्मण। × औदारिक के ४६ भेद, औदारिक मिश्र
के ३२ भेद, वैक्रिय के ११६ भेद, वैक्रिय मिश्र के ६३ भेद,
आहारक का १ भेद, आहारक मिश्र का १ भेद, कार्मण के
१६१ भेद, ये सब मिलाकर काया जोग के उत्तर भेद ४२६
होते हैं। इस प्रकार पओगसा परिणम्या के ४७४ (मन के

×नोट—औदारिक के ४६ भेद—४६ तिर्यञ्च के, ३ मनुष्य के=४६
पन्नवणा सूत्र के छठे पद के अनुसार)। औदारिक मिश्र के ३२ भेद—
र्यञ्च अपर्जापता के २३, वायुकाय पर्जापता का १, सन्नी तिर्यञ्च
र्जापता के ५, मनुष्य के ३ (गर्भज मनुष्य का पर्जापता और
अपर्जापता सम्मुर्छिम मनुष्य का अपर्जापता) ये कुल ३२ हुए।

वैक्रिय के ११६ भेद—७ नारकी, १० भवनपति, ८ वाणव्यन्तर,
ज्योतिषी, १२ देवलोक, ६ ग्रैवेयक, ५ अनुत्तर विमान, ये ५६ के
अपर्जापता और पर्जापता=११२ तथा ५ सन्नी तिर्यञ्च, १ वायुकाय
का पर्जापता, १ मनुष्य का पर्जापता, ये कुल मिला कर ११६ भेद हुए।

वैक्रिय मिश्र के ६३ भेद—यहां नारकी देवता के पर्याप्त में वैक्रि
का मिश्र नहीं लिया। कारण यह है कि कार्माण के साथ में या उदारि
के साथ में वैक्रिय होने से ही मिश्र माना है, वैक्रिय के साथ में नहीं
७ नारकी के अपर्जापता, ४६ देवता के अपर्जापता, ५ सन्नी तिर्यञ्च
पर्जापता, १ वायुकाय का पर्जापता, १ मनुष्य का पर्जापता, ये
मिला कर ६३ भेद हुए।

कार्मण के १६१ भेद—७ नारकी के, ४६ देवता के, १० एके
(५ सूक्ष्म, ५ बादर), ३ विकलेन्द्रिय के, १० तिर्यञ्च के (५
५ असंज्ञी), १ सन्नी मनुष्य का, ये ८० हुए, इनके अपर्जापता
पर्जापता १६० और १ सम्मूर्छिम मनुष्य का अपर्जापता, ये
१६१ भेद हुए। नव दण्डक के थोकड़े के दूसरे द्वार माफक यह दे

२४, वचन के २४, काया के ४२६=४७४) हुवे। इसी तर
मिस्सा परिणम्या के ४७४ भेद होते हैं।

वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श, संठाण ये ५ मूल भेद हैं। इनके
उत्तर भेद २५ होते हैं—५ वर्ण, २ गन्ध, ५ रस, ८ स्पर्श
५ संठाण=२५। इनके ५३०× भेद रूपी अजीव के होते हैं।
ये ५३० वीससा पुद्गल के भेद हैं।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ७१)

श्री भगवतीजी सूत्र के आठवें शतक के पहले उद्देशे में 'भांगों' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

एक से लेकर अनन्ता जीव या एक से लेकर अनन्ता द्रव्य के *विकल्प कहते हैं।

१ एक द्रव्य का विकल्प १
२ दो द्रव्य के विकल्प २—असंजोगी १, दो संजोगी १।
३ तीन द्रव्य के विकल्प ४—असंजोगी १, दो संजोगी २, तीन संजोगी १।
४ चार द्रव्य के विकल्प ८—असंजोगी १, दोसंजोगी ३, तीन संजोगी ३, चार संजोगी १।
५ पांच द्रव्य के विकल्प १६—असंजोगी १, दो संजोगी ४, तीन संजोगी ६, चार संजोगी ४, पांच संजोगी १=१६

× वर्ण के १०० गंध के ४६ रस के १०० स्पर्श के १८४ संठाण के १००=५३०।
* द्रव्य के विकल्प निकालने हों तो ठाम दुगने करते जाना चाहिए।

६ छह द्रव्य के विकल्प ३२—असंजोगी १, दो संजोगी ५, तीन संजोगी १०, चार संजोगी १०, पांच संजोगी ५, छह संजोगी १=३२।

७ सात द्रव्य के विकल्प ६४—असंजोगी १, दो संजोगी ६, तीन संजोगी १५, चार संजोगी २०, पांच संजोगी १५, छह संजोगी ६, सात संजोगी १=६४।

८ आठ द्रव्यों के विकल्प १२८—असंजोगी १, दो संजोगी ७, तीन संजोगी २१, चारसंजोगी ३५, पांच संजोगी ३५, छह संजोगी २१, सात संजोगी ७, आठ संजोगी १ = १२८।

९ नौ द्रव्यों के विकल्प २५६—असंजोगी १, दो संजोगी ८, तीन संजोगी २८, चार संजोगी ५६, पांच संजोगी ७०, छह संजोगी ५६, सात संजोगी २८, आठ संजोगी ८, नव संजोगी १ = २५६।

१० दस द्रव्यों के विकल्प ५१२—असंजोगी १, दो संजोगी ९, तीन संजोगी ३६, चार संजोगी ८४, पांच संजोगी १२६, छह संजोगी १२६, सात संजोगी ८४, आठ संजोगी ३६, नवसंजोगी ९, दस संजोगी १ = ५१२।

[illegible]त द्रव्य के विकल्प—असंजोगी १, दो संजोगी ११, तीन संजोगी २१, चार संजोगी ३१, पांच संजोगी

४१, छह संजोगी ५१, सात संजोगी ६१, आठ संजोगी ७१, नव संजोगी ८१, दस संजोगी ६१
इस तरह दस दस बढ़ाते जाना चाहिए।

असंख्यात द्रव्य के विकल्प—असंजोगी १, दो संजोगी १२ तीन संजोगी २३, चार संजोगी ३४, पांच संजोगी ४५, छह संजोगी ५६, सात संजोगी ६७, आठ संजोगी ७८, नव संजोगी ८६, दस संजोगी १००
इस तरह ११–११ बढ़ाते जाना चाहिए।

अनन्ता द्रव्य के विकल्प—असंजोगी १, दो संजोगी १३ तीन संजोगी २५, चार संजोगी ३७, पांच संजोगी ४६, छह संजोगी ६१, सात संजोगी ७३, आठ संजोगी ८५, नव संजोगी ६७ दस संजोगी १०६
इस तरह १२–१२ बढ़ाते जाना चाहिए।×

१–एक ठिकाने का ÷एक पद–असंजोगी १।
२–दो ठिकाने का ३ पद–असंजोगी१, दो संजोगी २।

× ये द्रव्य के विकल्प कहे हैं। इसी तरह 'जीव' के भी कहे जा सकते हैं। यहां 'द्रव्य' के स्थान में 'जीव' कहना चाहिए।

÷ विकल्प को पद से गुणा करने से भांगे निकल जाते हैं। जितने संजोगी हों उतने के उतने संजोगी से गुणा करना चाहिए।

पद निकालने की विधि—दुगुणा करके एक एक बढ़ाते जाना चाहिए। जैसे—एक ठिकाने का एक पद। दो ठिकाने का १×२=२ और १ मिलाने से ३ पद हुए। तीन ठिकाने का ३×२=६ और

...असंजोगी ३, दो संजोगी ३,

३—तीन ठिकाने का ७ पद—असंजोगी ३, दो संजोगी ३, तीन संजोगी १।

४—चार ठिकाने के १५ पद—असंजोगी ४, दो संजोगी ६, तीन संजोगी ४, चार संजोगी १।

५—पांच ठिकाने के ३१ पद—असंजोगी ५, दो संजोगी १०, तीन संजोगी १०, चार संजोगी ५, पांच संजोगी १।

६—छह ठिकाने के ६३ पद—असंजोगी ६, दो संजोगी १५, तीन संजोगी २०, चार संजोगी १५, पांच संजोगी ६, छह संजोगी १।

...मिलाने से ७ पद हुए। चार ठिकाने का ७×२=१४ और १ मिलाने से १५ पद हुए। इसी तरह दुगुणा करके एक मिलाते जाना चाहिए।

दूसरा तरह से विधि—तीन-ठिकानों के दो द्रव्य के भांगे निकालने हों तो एक द्रव्य के ३ भांगे हैं, उनमें एक बढ़ाने से ४ होते हैं। चार को तीन से (क्योंकि एक द्रव्य के तीन भांगे हैं इसलिए तीन से) गुणा करने से १२ हुए। १२ में दो का भाग देने से (क्योंकि दो द्रव्य के भांगे निकालने हैं) ६ भांगे हुए।

३—तीन द्रव्य के भांगे निकालने हों तो चार में एक और बढ़ा देने से पांच होते हैं। पांच को छह से (क्योंकि दो द्रव्य के ६ भांगे होते हैं, इसलिए) गुणा करने से ३० हुए। ३० में तीन का भाग देने से (क्योंकि ३ द्रव्य के भांगे निकालने हैं, इसलिए) १० हुए।

४—चार द्रव्य के भांगे निकालने हों तो ५ में एक और बढ़ा देने से ६ होते हैं। छह को तीन द्रव्य के १० भांगों से गुणा करने से ६० हुए। ६० में चार का भाग देने से १५ भांगे हुए। इसी तरह १-१ गुणा करके उस अंक में बढ़ाते जाना और एक एक भाग देते उस अंक में बढ़ाते जाना इस तरह चाहे जितने द्रव्य तक के भांगे निकल सकते

७—सात ठिकाने के १२७ पद—असंजोगी ७, दो संजोगी २१, तीन संजोगी ३५, चार संजोगी ३५, पांच संजोगी २१, छह संजोगी ७, सात संजोगी १।

तीन ठिकाणा—१ पओगसा (प्रयोगसा), २ मिस्सा (मिश्रसा), ३ वीससा (विसूसा)। तीन ठिकानों के ७ पद * होते हैं—असंजोगी ३, दो संजोगी ३, तीन संजोगी १।

१—एक द्रव्य जाने के भांगे ३—असंजोगी ३।

२—दो द्रव्य जाने के भांगे ६—असंजोगी ३, दो संजोगी ३।

३—तीन द्रव्य जाने के भांगे १०—असंजोगी ३, दो संजोगी ६, तीन संजोगी १।

४—चार द्रव्य जाने के भांगे १५—असंजोगी ३, दो संजोगी ९, तीन संजोगी ३।

५—पांच द्रव्य जाने के भांगे २१—असंजोगी ३, दो संजोगी १२, तीन संजोगी ६।

---

* ठिकानों का पद निकालने की विधि—जैसे ७ ठिकानों का पद निकालना हो तो असंजोगी ७, दो संजोगी ७ को ६ से गुणा करने से ४२ हुए। इनमें २ का भाग देने से दो संजोगी २१ पद हुए। अब २१ को ५ से गुणा करने से १०५ हुए। इनमें ३ का भाग देने से तीन संजोगी ३५ पद हुए। अब ३५ को ४ से गुणा करने से १४० हुए। इनमें ४ का भाग देने से चार संजोगी ३५ पद हुए। अब ३५ को ३ से गुणा करने से १०५ हुए। इनमें ५ का भाग देने से पांच संजोगी २१ पद हुए। अब २१ को दो से गुणा करने से ४२ हुए। इनमें छह का भाग देने से छह संजोगी ७ पद हुए। अब ७ को एक से गुणा करने से ७। इनमें ७ का भाग देने से सात संजोगी १ पद हुआ।

ई—छह द्रव्य जाने के भांगे २८—असंजोगी ३, दो संजोगी १५, तीन संजोगी १० ।

—सात द्रव्य जाने के भांगे ३६—असंजोगी ३, दो संजोगी १८, तीन संजोगी १५ ।

—आठ द्रव्य जाने के भांगे ४५—असंजोगी ३, दो संजोगी २१, तीन संजोगी २१ ।

—नौ द्रव्य जाने के भांगे ५५—असंजोगी ३, दो संजोगी २४, तीन संजोगी २८ ।

०—दस द्रव्य जाने के भांगे ६६—असंजोगी ३, दो संजोगी २७, तीन संजोगी ३६ ।

ख्याता द्रव्य जाने के भांगे ५७—असंजोगी ३, दो संजोगी ३३, तीन संजोगी २१ ।

संख्याता द्रव्य जाने के भांगे ६२—असंजोगी ३, दो संजोगी ३६, तीन संजोगी २३ ।

नन्ता द्रव्य जाने के भांगे ६७—असंजोगी ३, दो संजोगी ३६, तीनसंजोगी २५ ।

ार ठिकाणे जाता है—१ सत्य मन, २ असत्य मन, ३ मिश्र मन, ४ व्यवहार मन ।

ार ठिकाणे के पद १५— असंजोगी ४, दो संजोगी ६, तीन संजोगी ४, चार संजोगी १ ।

—चार ठिकाणे एक द्रव्य जावे उसके भांगे ४—असंजोगी ४ ।

२—चार ठिकाणे दो द्रव्य जावे उसके भांगे १०–असंजोगी ४, दो संजोगी ६ ।

३—चार ठिकाणे तीन द्रव्य जावे उसके भांगे २०–असंजोगी ४, दो संजोगी १२, तीन संजोगी ४ ।

४—चार ठिकाणे चार द्रव्य जावे उसके भांगे ३५–असंजोगी ४, दो संजोगी १८, तीन संजोगी १२, चार संजोगी १।

५—चार ठिकाणे पांच द्रव्य जावे उसके भांगे ५६–असंजोगी ४, दो संजोगी २४, तीन संजोगी २४, चार संजोगी ४।

६—चार ठिकाणे छह द्रव्य जावे उसके भांगे ८४–असंजोगी ४, दो संजोगी ३०, तीन संजोगी ४०, चार संजोगी १०।

७—चार ठिकाणे सात द्रव्य जावे उसके भांगे १२०–असंजोगी ४, दो संजोगी ३६, तीन संजोगी ६०, चार संजोगी २०।

८—चार ठिकाणे आठ द्रव्य जावे उसके भांगे १६५– असंजोगी ४, दो संजोगी ४२, तीन संजोगी ८४, चार संजोगी ३५।

९—चार ठिकाणे नौ द्रव्य जावे उसके भांगे २२०–असंजोगी ४, दो संजोगी ४८, तीन संजोगी ११२, चार संजोगी ५६।

१०—चार ठिकाणे दस द्रव्य जावे उसके भांगे २८६–असंजोगी ४, दो संजोगी ५४, तीन संजोगी १४४, चार संजोगी ८४।

११—चार ठिकाणे संख्याता द्रव्य जावे उसके भांगे १८५–असंजोगी ४, दो संजोगी ६६, तीन संजोगी ८४–चार संजोगी ३१ ।

चार ठिकाणे असंख्याता द्रव्य जावे उसके भांगे २०२–
असंजोगी ४, दो संजोगी ७२, तीन संजोगी ६२, चार
संजोगी ३४।

–चार ठिकाणे अनन्ता द्रव्य जावे उसके भांगे २१६-असंजोगी
४, दो संजोगी ७८, तीन संजोगी १००, चार संजोगी ३७।

व ठिकाणे जावे–१एकेन्द्रिय, २ बेइन्द्रिय, ३ तेइन्द्रिय, ४
चौइन्द्रिय, ५ पंचेन्द्रिय।

ठिकाणां के पद ३१–असंजोगी ५, दो संजोगी १०, तीन
संजोगी १०, चार संजोगी ५, पांच संजोगी १।

पांच ठिकाणे एक द्रव्य जावे उसके भांगे ५–असंजोगी ५।

–पांच ठिकाणे दो द्रव्य जावे उसके भांगे १५– असंजोगी
५, दो संजोगी १०।

—पांच ठिकाणे तीन द्रव्य जावे उसके भांगे ३५–असंजोगी
५, दो संजोगी २०, तीन संजोगी १०।

पांच ठिकाणे चार द्रव्य जावे उसके भांगे ७०–असंजोगी
५, दो संजोगी ३०, तीन संजोगी ३०, चार संजोगी ५।

–पांच ठिकाणे पांच द्रव्य जावे उसके भांगे १२६–असंजोगी
५, दो संजोगी ४०, तीन संजोगी ६०, चार संजोगी २०,
पांच संजोगी १।

—पांच ठिकाणे छह द्रव्य जावे उसके भांगे २१०– असं-
जोगी ५, दो संजोगी ५०, तीन संजोगी १००, चार
संजोगी ५०, पांच संजोगी ५।

७—पांच ठिकाणे सात द्रव्य जावे उसके भांगे ३३०-असं जोगी ५, दो संजोगी ६०, तीन संजोगी १५०, चार संजोगी १००, पांच संजोगी १५ ।

८—पांच ठिकाणे आठ द्रव्य जावे उसके भांगे ४६५ असंजोगी ५, दो संजोगी ७०, तीन संजोगी २१०, चार संजोगी १७५, पांच संजोगी ३५ ।

९—पांच ठिकाणे नौ द्रव्य जावे उसके भांगे ७१५-असंजोगी ५, दो संजोगी ८०, तीन संजोगी २८०, चार संजोगी २८०, पांच स जोगी ७० ।

१०-पांच ठिकाणे दस द्रव्य जावे उसके भांगे १००१-असं जोगी ५, दो संजोगी ९०, तीन संजोगी ३६०, चार संजोगी ४२०, पांच संजोगी १२६ ।

११-पांच ठिकाणे संख्याता द्रव्य जावे उसके भांगे ४२१-असं जोगी ५, दो संजोगी ११०, तीन संजोगी २१०, चार संजोगी १५५, पांच संजोगी ४१ ।

१२-पांच ठिकाणे असंख्याता द्रव्य जावे उसके भांगे ५७०-असंजोगी ५, दो संजोगी १२०, तीन संजोगी २३०, चार संजोगी १७०, पांच संजोगी ४५ ।

१३-पांच ठिकाणे अनन्ता द्रव्य जावे उसके भांगे ६१९-असं जोगी ५, दो संजोगी १३०, तीन संजोगी २५०, चार संजोगी १८५, पांच संजोगी ४९ ।

...णेजावे—१ आरम्भ, २ अनारम्भ, ३ सारम्भ, ४ असा-
...म, ५ समारम्भ, ६ असमारम्भ।
...काणे के पद ६३—असंजोगी ६, दो संजोगी १५, तीन
...संजोगी २०, चार संजोगी १५, पांच संजोगी ६, छह
...

—छह ठिकाणे एक द्रव्य जावे उसके भांगे ६—असंजोगी ६।
—छह ठिकाणे दो द्रव्य जावे उसके भांगे २१—असंजोगी ६,
दो संजोगी १५।
छह ठिकाणे तीन द्रव्य जावे उसके भांगे ५६—असंजोगी
६, दो संजोगी ३०, तीन संजोगी २०।
—छह ठिकाणे चार द्रव्य जावे उसके भांगे १२६—असंजोगी
६, दो संजोगी ४५, तीन संजोगी ६०, चार संजोगी १५।
—छह ठिकाणे पांच द्रव्य जावे उसके भांगे २५२—असंजोगी
६, दो संजोगी ६०, तीन संजोगी १२०, चार संजोगी
६०, पांच संजोगी ६।
छह ठिकाणे छह द्रव्य जावे उसके भांगे ४६२—असंजोगी
६, दो संजोगी ७५, तीन संजोगी २००, चार संजोगी
१५०, पांच संजोगी ३०, छह संजोगी १।
छह ठिकाणे सात द्रव्य जावे उसके भांगे ७९२—असंजोगी
६, दो संजोगी ९०, तीन संजोगी ३००, चार संजोगी
३००, पांच संजोगी ९०, छह संजोगी ६।
—छह ठिकाणे आठ द्रव्य जावे उसके भांगे १२८७, असं-

जोगी ६, दो संजोगी १०५, तीन संजोगी ४२०, चार संजोगी ५२५, पांच संजोगी २१०, छह संजोगी २१।

६—छह ठिकाणे नौ द्रव्य जावे उसके भांगे २००२– असंजोगी ६, दो संजोगी १२०, तीन संजोगी ५६०, चार संजोगी ८४०, पांच संजोगी ४२०, छह संजोगी ५६।

१०—छह ठिकाणे दस द्रव्य जावे उसके भांगे ३००३, असंजोगी ६, दो संजोगी १३५, तीन संजोगी ७२०, चार संजोगी १२६०, पांच संजोगी ७५६, छह संजोगी १२६।

११—छह ठिकाणे संख्याता द्रव्य जावे उसके भांगे १३५३— असंजोगी ६, दो संजोगी १६५, तीन संजोगी ४२०, चार संजोगी ४६५, पांच संजोगी २४६, छह संजोगी ५१।

१२—छह ठिकाणे असंख्याता द्रव्य जावे उसके भांगे १४८८- असंजोगी ६, दो संजोगी १८०, तीन संजोगी ४६०, चार संजोगी ५१०, पाँच संजोगी २७०, छहसंजोगी ५६।

१३—छह ठिकाणे अनन्ता द्रव्य जावे उसके भाँगे १६११-असंजोगी ६, दो संजोगी १६५, तीन संजोगी ५००, चार संजोगी ५५५, पांच संजोगी २६४, छह संजोगी ६१।

सात ठिकाणे जावे— १ औदारिक, २ औदारिक मिश्र, ३ वैक्रिय ४ वैक्रियमिश्र, ५ आहारक, ६ आहारक मिश्र, ७ कार्मण योग।

सात ठिकाणे के पद १२७—असंजोगी ७, दो संजोगी २१ तीन संजोगी ३५, चार संजोगी ३५, पाँच संजोगी २१

छह संजोगी ७, सात संजोगी १।

–सात ठिकाणे एक द्रव्य जावे उसके भाँगे ७—असंजोगी ७।

–सात ठिकाणे दो द्रव्य जावे उसके भाँगे २८—असंजोगी ७, दो संजोगी २१।

–सात ठिकाणे तीन द्रव्य जावे उसके भाँगे ८४–असंजोगी ७, दो संजोगी ४२, तीन संजोगी ३५।

–सात ठिकाणे चार द्रव्य जावे उसके भाँगे २१०— असंजोगी ७, दो संजोगी ६३, तीन संजोगी १०५, चार संजोगी ३५।

–सात ठिकाणे पांच द्रव्य जावे उसके भांगे ४६२– असंजोगी ७, दो संजोगी ८४, तीन संजोगी २१०, चार संजोगी १४० पांच संजोगी २१।

–सात ठिकाणे छह द्रव्य जावे उसके भांगे ६२४–असंजोगी ७, दो संजोगी १०५, तीन संजोगी ३५०, चार संजोगी ३५०, पांच संजोगी १०५ छह संजोगी ७।

–सात ठिकाणे सात द्रव्य जावे उसके भांगे १७१६–असंजोगी ७, दो संजोगी १२६, तीन संजोगी ५२५, चार संजोगी ७००, पांच संजोगी ३१५, छह संजोगी ४२, सात संजोगी १।

–सात ठिकाणे आठ द्रव्य जावे उसके भांगे ३००३–असंजोगी ७, दो संजोगी १४७, तीन संजोगी ७३५, चार संजोगी १२२५, पांच संजोगी ७३५, छह संजोगी १४७, सात संजोगी ७।

९—सात ठिकाणे नौ द्रव्य जावे उसके भांगे ५००५-असंजोगी ७, दो संजोगी १६८, तीन संजोगी ९८०, चार संजोगी १९६०, पांच संजोगी १४७०, छह संजोगी ३९२, सात संजोगी २८।

१०—सात ठिकाणे दस द्रव्य जावे उसके भांगे ८००८-असंजोगी ७, दो संजोगी १८९, तीन संजोगी १२६०, चार संजोगी २९४०, पांच संजोगी २६४६, छह संजोगी ८८२, सात संजोगी ८४।

११—सात ठिकाणे संख्याता द्रव्य जावे उसके भांगे ३३[illegible] असंजोगी ७, दो संजोगी २३१, तीन संजोगी ७३५, चार संजोगी १०८५, पांच संजोगी ८६१, छह संजोगी ३[illegible] सात संजोगी ६१।

१२—सात ठिकाणे असंख्याता द्रव्य जावे उसके भांगे ३६[illegible] असंजोगी ७, दो संजोगी २५२, तीन संजोगी ८०५, चार संजोगी ११९०, पांच संजोगी ९४५, छह संजोगी ३[illegible] सात संजोगी ६७।

१३—सात ठिकाणे अनन्ता द्रव्य जावे उसके भांगे ३९७९-असंजोगी ७, दो संजोगी २७३, तीन संजोगी ८७५, चार संजोगी १२९५, पांच संजोगी १०२९, छह संजोगी ४[illegible] सात संजोगी ७३।

एक से लेकर १३ तक द्रव्यों के भांगे—

ठिकाणा ३	ठिकाणा ४	ठिकाणा ५	ठिकाणा ६	ठिकाणा ७
...सा ...सा ...सा	सत्यमन असत्यमन मिश्रमन व्यवहारमन	एकेन्द्रिय बेइन्द्रिय तेइन्द्रिय चौइन्द्रिय पंचेन्द्रिय	पृथ्वीकाय अप्काय तेउकाय वायुकाय वनस्पतिकाय त्रसकाय	औदारिक, औदारिक मिश्र, वैक्रिय, वैक्रिय मिश्र, आहारक, आहारक-मिश्र, कार्मण
...गा	भांगा	भांगा	भांगा	भांगा
	४	५	६	७
	१०	१५	२१	२८
१०	२०	३५	५६	८४
१५	३५	७०	१२६	२१०
२१	५६	१२६	२५२	४६२
२८	८४	२१०	४६२	९२४
३६	१२०	३३०	७९२	१७१६
४५	१६५	४९५	१२८७	३००३
५५	२२०	७१५	२००२	५००५
६६	२८६	१००१	३००३	८००८
७८	३६४	१३६५	४३६८	१२३७६
९१	४५५	१८२०	६१८८	१८५६४
१०५	५६०	२३८०	८५६८	२७१३२

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नं० ७२)

श्री भगवतीजी सूत्र के आठवें शतक के दूसरे उद्दे
'आशीविष' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! * आशीविष कितने प्रकार का है ! गौतम ! आशीविष दो प्रकार का है—जाति आशीविष और क आशीविष ।

२—अहो भगवान् ! जाति आशीविष कितने प्रकार का है ? हे गौतम ! चार प्रकार का है—१ वृश्चिक (बिच्छू) जाति आशीविष, २ मण्डूक, (मेंढक) जाति आशीविष, ३ उर (सांप) जाति आशीविष, ४ मनुष्य जाति आशीविष ।

३—जाति आशीविष का कितना विषय है ? हे गौत

* आशीविष—आशी का अर्थ है—दाढ । जिन जीवों की दा विष होता है उनको आशीविष कहते हैं । आशीविष प्राणियों के दो है—जाति आशीविष और कर्म आशीविष । सांप बिच्छू आदि प्राणी (जन्म) से ही आशीविष वाले होते हैं, इस लिए उन्हें जाति आशी कहते हैं ।

जो कर्म द्वारा अर्थात् शाप (श्राप) आदि द्वारा प्राणियों का न करते हैं उन को कर्म आशीविष कहते हैं । पर्याप्त तिर्यंच पंचेन्द्रिय मनुष्य को तपश्चर्या आदि से अथवा और कोई दूसरे कारण से कर्म विष लब्धि उत्पन्न हो जाती है । इसलिए वे शाप (श्राप) आदि दे दूसरे का नाश करने की शक्ति वाले होते हैं । ये जीव आशीविष लब्धि के स्वभाव से आठवें देवलोक से आगे उत्पन्न नहीं हो सकते हैं । वे अपर्याप्त अवस्था तक कर्म आशीविष वाले होते हैं ।

वृश्चिक जाति आशीविषका विषय*अर्द्ध भरत प्रमाण है। मण्डूक-जाति आशीविष का विषय भरतक्षेत्र प्रमाण है। उरग जाति आशीविष का विषय जम्बूद्वीप प्रमाण है। मनुष्य जाति आशीविष का विषय समय क्षेत्र (अढ़ाई द्वीप) प्रमाण है। यह इनका विषय है किन्तु ऐसा कभी किया नहीं, करते नहीं और करेंगे नहीं।

४—अहो भगवान्! कर्म आशीविष कितने प्रकार का है? हे गौतम! तीन प्रकार का है—१ मनुष्य, २ तिर्यंच, ३ देवता। १५ कर्म भूमि के मनुष्य और ५ सन्नी तिर्यंच इन २० बोलों के पर्जापतों में और भवनपति से लेकर आठवें देव-लोक के देवता के अपर्जापतों में कर्म आशीविष होता है।

५—छद्मस्थ (अवधि-आदि विशिष्ट ज्ञानरहित) दस बातों को सर्वभाव से (साक्षात् प्रत्यक्षरूप से) नहीं जानता, नहीं देखता है-१ धर्मास्तिकाय, २ अधर्मास्तिकाय, ३ आकाशास्तिकाय, ४ अशरीरी जीव (मुक्त जीव), ५ परमाणु पुद्गल, ६ शब्द, ७ गन्ध, ८ वायु, ९ यह जीव जिन (तीर्थङ्कर) होगा या नहीं, १० यह जीव सिद्ध होगा या नहीं।

केवलज्ञानी भगवान् इन सब को सर्व भाव से (साक्षात् ज्ञान से) जानते देखते हैं।

सेवं भंते! सेवं भंते!!

---

* असत्कल्पनासे जैसे किसी मनुष्यने अर्द्ध भरत प्रमाण अपना शरीर बनाया हो उसके पांवमें बिच्छू डंक दे तो उसके मस्तक तक उसका जहर चढ़ जाता है इस तरह चारों ही समझ लेना।

(थोकड़ा नं० ७३)

श्री भगवतीजी सूत्र के आठवें शतक के दूसरे उद्देशे में ५ ज्ञान का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१ अहो भगवान्! ज्ञान के कितने भेद हैं? हे गौतम! ज्ञानके ५ भेद हैं–१ मतिज्ञान (आभिनिबोधिकज्ञान), २ श्रुतज्ञान, ३ अवधिज्ञान।, ४ मनःपर्ययज्ञान, ५ केवलज्ञान।

संक्षेप में ज्ञान के दो भेद हैं—प्रत्यक्ष और परोक्ष। प्रत्यक्ष के दो भेद–इन्द्रियप्रत्यक्ष, नोइन्द्रियप्रत्यक्ष। इन्द्रिय प्रत्यक्ष के ५ भेद–१ स्पर्शनेन्द्रियप्रत्यक्ष, २ रसेन्द्रियप्रत्यक्ष, ३ घ्राणेन्द्रियप्रत्यक्ष, ४ चक्षुइन्द्रियप्रत्यक्ष, ५ श्रोत्रेन्द्रियप्रत्यक्ष। नोइन्द्रियप्रत्यक्ष के तीन भेद–अवधिज्ञान, मनःपर्यय ज्ञान, केवलज्ञान। अवधिज्ञान के २ भेद*—पडिवाई (प्रतिपाती) अपडिवाई (अप्रतिपाती)।

मनःपर्ययज्ञान के २ भेद–ऋजुमति, विपुलमति। मनुष्य, गर्भज, कर्मभूमिज, संख्याता वर्ष की आयु वाला, पर्जापता, समदृष्टि, संजती, अप्रमादी, लब्धिवन्त, इन ६ बोल वाले जीव को मनःपर्यय ज्ञान उत्पन्न होता है।

केवलज्ञान के ३ भेद–सजोगी, अजोगी, सिद्ध। सजोगी केवलज्ञान तेरहवें गुणस्थान वाले जीव को होता है। अजोगी केवलज्ञान चौदहवें गुणस्थान वाले जीवको होता है। सिद्धकेवलज्ञान के २ भेद–अनन्तर सिद्ध केवलज्ञान, परम्पर सिद्ध केवल-

---

* अवधिज्ञान का विशेष विस्तार श्री पन्नवणासूत्र के थोकड़ों का तीसरा भाग पृष्ठ ८३ से ८० तक (३३ वां अवधिपद) में दिया गया है।

ज्ञान। अनन्तर सिद्ध केवलज्ञान के १५ भेद-१ तीर्थसिद्ध, २ अतीर्थ सिद्ध, ३ तीर्थङ्कर सिद्ध, ४ अतीर्थङ्कर सिद्ध, ५ स्वयं-बुद्ध सिद्ध, ६ प्रत्येकबुद्ध सिद्ध, ७ बुद्धबोधित सिद्ध, ८ स्त्रीलिङ्ग सिद्ध, ९ पुरुष लिङ्ग सिद्ध, १० नपुंसक लिंगसिद्ध, ११ स्वलिंग सिद्ध, १२ अन्यलिंग सिद्ध, १३ गृहस्थ लिंग सिद्ध, १४ एक सिद्ध, १५ अनेक सिद्ध।

परस्परसिद्ध केवलज्ञान के १३ भेद-१ अपढमसमय सिद्ध २ द्विसमय सिद्ध, ३ तिसमय सिद्ध, ४ चतुसमय सिद्ध ५ पंच समय सिद्ध, ६ षट्समय सिद्ध, ७ सप्तसमय सिद्ध, ८ अष्टस-मय सिद्ध, ९ नवसमय सिद्ध, १० दससमय सिद्ध, ११ संख्यात समयसिद्ध, १२ असंख्यातसमय सिद्ध, १३ अनन्तसमयसिद्ध।

परोक्षज्ञान के २ भेद-मतिज्ञान, श्रुतज्ञान। मतिज्ञानके ३६० भेद-मतिज्ञान के २भेद--श्रुतनिश्रित, अश्रुतनिश्रित। अश्रुतनिश्रत के ४ भेद÷ (चार बुद्धि) १ उप्पत्तिया (औत्पत्तिकी), २

÷१-जो बुद्धि बिना देखे सुने और बिना सोचे हुए पदार्थों को सहसा ग्रहण करके कार्य को सिद्ध कर देती है उसे उप्पत्तिया (उत्पा-तिया-औत्पत्तिकी) बुद्धि कहते हैं; जैसे नटपुत्र रोह की बुद्धि थी।

२-गुरु महाराज की सेवा शुश्रूषा करने से जो बुद्धि प्राप्त होती है उसे वैनयिकी बुद्धि कहते हैं, जैसे-नैमित्तिक सिद्ध पुत्र के शिष्यों की थी।

३-कार्य करते करते जो बुद्धि प्राप्त हो उसे कम्मिया (कर्मजा) बुद्धि कहते हैं। जैसे-सुनार, किसान आदि कार्य करते करते अपने धन्धे में विशेष होशियार हो जाते हैं।

वेणइया (वैनयिकी), ३ कम्मिया (कर्मजा), ४ परिणामिया (पारिणामिकी)। श्रुतनिश्रित के ४ भेद–अवग्रह, ईहा, अवाय, धारणा। अवग्रह के २ भेद–अर्थावग्रह, व्यञ्जनावग्रह। अर्थावग्रह पांच इन्द्रिय और छठे मन से होता है। व्यञ्जनावग्रह चार इन्द्रियों से (श्रोत्रेन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, रसेन्द्रिय, स्पर्शनेन्द्रियसे) होता है। अर्थावग्रह की तरह ईहा, अवाय, धारणा के ६-६ भेद होते हैं। इसतरह कुल २८ (व्यञ्जनावग्रह के ४, अर्थावग्रह के ६, ईहा के ६, अवाय के ६, धारणा के ६ = २८) भेद हुए। इन २८ को + बहु, अबहु (अल्प), बहुविध, अबहुविध (अल्पविध), क्षिप्र, अक्षिप्र, निश्रित, अनिश्रित, संदिग्ध असंदिग्ध, ध्रुव, अध्रुव, इन १२ से गुणा करने से २८×१२= ३३६ भेद होते हैं अश्रुतनिश्रित के ४ भेद मिलाने से ३३६+ ४ = ३४० भेद हुए।

४–बहुत काल तक संसार के अनुभव से जो बुद्धि प्राप्त होती उसको परिणामिया (परिणामिकी) बुद्धि कहते हैं।

+(१–२) बहुग्राही, अबहुग्राही (अल्पग्राही)–बहु का मतलब अनेक है और अबहु (अल्प) का मतलब एक है। जैसे दो या दो अधिक पदार्थों को जानने वाले अवग्रह आदि ज्ञान बहुग्राही कहलाते और एक पदार्थ को जानने वाले अवग्रहादि ज्ञान अबहुग्राही (अल्पग्राही) कहलाते हैं।

(३–४) बहुविधग्राही, अबहु विधग्राही (अल्पविधग्राही) बहुविध का मतलब अनेक प्रकार से है और अबहुविध (अल्पविध) का मतलब एक प्रकार (तरीका) से है। जैसे–किसी एक पदार्थ को उसके आकार प्रकार

रूपरंग, लम्बाई, चौड़ाई, मोटाई आदि विविध प्रकार से जानना बहुविधग्राही कहलाता है और किसी पदार्थ को उसके आकार प्रकार, रंग आदि में से किसी एक ही तरह (तरीके) से जानना अबहुविधग्राही ।–अल्पविधग्राही कहलाता है।

बहु और अबहु का मतलब पदार्थ की संख्या से है। तथा बहुविध और अबहुविध का मतलब प्रकार, किस्म, जाति, तरीके की संख्या से है। यही दोनों का अन्तर है।

(५-६) क्षिप्रग्राही , अक्षिप्रग्राही–शीघ्र जानने वाले अवग्रह आदि को क्षिप्रग्राही और विलम्ब से जानने वाले को अक्षिप्रग्राही कहते हैं।

(७-८) निश्रितग्राही, अनिश्रितग्राही–किसी भी पदार्थ को अनुमान द्वारा जानना निश्रितग्राही है, जैसे–शीत, कोमल स्पर्श से तथा गन्ध से फूलों का ज्ञान करना। किसी भी पदार्थ को अनुमान के बिना ही जान लेना अनिश्रितग्राही अवग्रह आदि है।

(९-१०) संदिग्धग्राही, असंदिग्धग्राही–सन्देहयुक्त ज्ञान को संदिग्धग्राही कहते हैं और निश्चित रूप से जानने वाले ज्ञान को असंदिग्धग्राही कहते हैं।

(११-१२) ध्रुवग्राही, अध्रुवग्राही–

ध्रुव का मतलब अवश्यम्भावी और अध्रुव का मतलब कदाचिन्भावी है। सामग्री होने पर विषय को अवश्य जानने वाले ज्ञान को ध्रुवग्राही कहते हैं और सामग्री होने पर भी क्षयोपशम की मन्दता के कारण विषय को कभी ग्रहण करने वाले और कभी ग्रहण न करने वाले अवग्रहादि ज्ञान को अध्रुवग्राही कहते हैं।

* एगट्टिया (एकार्थक शब्द) के २० भेद इसप्रकार हैं–अवग्रह के ५ नाम–ओगेण्हणया-(अवग्रहणता)–प्रथम समय में आये हुए... -

सम्यक् प्रकार सुनने को श्रुतज्ञान कहते हैं। मिथ्या प्र मिथ्यात्वी के पास में असम्यग्पणे सुनना श्रुतअज्ञान है। श्रुतज्ञान के १४ भेद—* अक्षरश्रुत, अनक्षरश्रुत, संज्ञीश्रुत, असंज्ञीश्रुत,

---

* श्रुत ज्ञानावरणीय कर्म के क्षयोपशम से होने वाले शास्त्रों के ज्ञान को श्रुतज्ञान कहते हैं। चरण करणानुयोग, धर्मकथानुयोग, द्रव्यानुयोग, और गणि- तानुयोग की सारी बातें श्रुतज्ञान में आजाती हैं। इसके १४ भेद हैं—

१—अक्षरश्रुत—जिसका कभी नाश न हो उसे अक्षर कहते हैं। जीव उपयोग स्वरूप वाला होने से ज्ञान का कभी नाश नहीं होता। इसलिये यहाँ ज्ञान ही अक्षर है। ज्ञान का कारण होने से उपचार नय से अकारादि वर्ण भी अक्षर कहे जाते हैं। अक्षररूप श्रुत को अक्षरश्रुत कहते हैं।

२—अनक्षरश्रुत—अक्षरों के बिना ही शरीर की चेष्टा आदि से होने वाले ज्ञान को अनक्षरश्रुत कहते हैं, जैसे:—हँसी, खाँसी, छींक, उबासी आदि।

३—संज्ञिश्रुत—संज्ञा अर्थात् सोचने विचारने की शक्ति जिस जीव में हो उसे संज्ञी (सन्नी) कहते हैं संज्ञी के लिए बनाये गये श्रुत को संज्ञिश्रुत कहते हैं।

४—असंज्ञिश्रुत— संज्ञिश्रुत (सन्नीश्रुत) से उल्टा असंज्ञि- (असन्नी) श्रुत है।

५—सम्यक्श्रुत—सर्वज्ञ सर्वदर्शी तीर्थंकर भगवान् द्वारा प्रणीत आचा- रांगादि बारह अंग सूत्रों को सम्यक्श्रुत कहते हैं।

६—मिथ्याश्रुत— मिथ्यादृष्टियों के द्वारा अपनी स्वच्छन्द बुद्धि से [illegible] किये गये शास्त्रों को मिथ्याश्रुत कहते हैं।

७-८-९-१०, सादिश्रुत—अनादिश्रुत, सपर्यवसितश्रुत, अपर्यवसितश्रुत— बारह अंग सूत्र पर्यायार्थिक नय की अपेक्षा सादि, सपर्यवसित (आदि अन्त सहित) है और द्रव्यार्थिक नय की अपेक्षा अनादि, अपर्यवसित (आदि अन्त रहित) है।

समश्रुत, मिथ्याश्रुत, सादिश्रु त, अनादिश्रु त, सपर्यवसितश्रु त, अपर्यवसितश्रु त, गमिकश्रु त, अगमिकश्रु त, अंगप्रविष्ट, अनङ्ग-प्रविष्ट।

अवधिज्ञान से विपरीत होवे उसे विभंगज्ञान कहते हैं। विभंगज्ञान के ७ भेद और अनेक संठाण हैं।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नम्बर ७४)

श्री भगवतीजी सूत्र के आठवें शतक के दूसरे उद्दे शे में 'ज्ञान [illegible]ध' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

[illegible] काए, सुहुमपज्जत्ति भवत्थे य।
[illegible] सण्णी, लद्धी उवओग जोगे य ॥ १ ॥
लेस्सा कसाय वेए, आहारे णाणगोयरे।

११-गमिकश्रुत—अनेक जगह जिस पाठ का वारवार उच्चारण किया [illegible] है, उसे गमिकश्रु त कहते हैं। जैसे:-उत्तराध्ययन सूत्रके दसवें अध्ययन की [illegible]थाओं में 'समयं गोयम मा पमायए' का बारबार उच्चारण किया जाता है।

१२-अगमिकश्रु त—गमिक से विपरीत शास्त्र को अगमिकश्रु त कहते हैं। जैसे:-आचारांग आदि।

१३-अंगप्रविष्टश्रुत—आचारांग आदि बारह सूत्र (११अंग १दृष्टिवाद) अंगप्रविष्टश्रु त कहलाते हैं।

१४-अंगबाह्यश्रु त—बारह अंगसूत्रों के सिवाय जो शास्त्र हैं वे अंगबाह्य श्रु त कहलाते हैं। इनका विशेष विस्तार नंदी सूत्र में है।

काले अंतर अप्पाबहुयं, पज्जवा चेव दाराइं ॥ २ ॥

जीव में ज्ञान अज्ञान आसरी नियमा भजना के २१ द्वार—१ जीवद्वार, २ गतिद्वार, ३ इन्द्रियद्वार, ४ कायद्वार, ५ सूक्ष्मबादरद्वार, ६ पर्याप्तिद्वार, ७ भवस्थ (भवस्थ) द्वार, ८ भवसिद्धिद्वार, ९ सन्नी (संज्ञी) द्वार, १० लब्धिद्वार, ११ उपयोगद्वार, १२ योगद्वार, १३ लेश्याद्वार, १४ कषायद्वार, १५ वेदद्वार, १६ आहारद्वार, १७ ज्ञानगोचरद्वार, १८ कालद्वार, १९ अन्तरद्वार, २० अल्पबहुत्वद्वार, २१ पर्याय की अल्पाबोधद्वार ।

(१) जीवद्वार—समुच्चय जीव में ५ ज्ञान, ३ अज्ञान की भजना । पहली नारकी, भवनपति और वाणव्यन्तर देवता में ३ ज्ञान की नियमा, ३ अज्ञान की भजना । दूसरी नारकी से सातवीं नारकी तक, और ज्योतिषी से नवग्रैवेयक तक ३ ज्ञान, ३ अज्ञान की नियमा । पांच अनुत्तर विमान में ३ ज्ञान की नियमा । पांच स्थावर और असंज्ञी मनुष्य में २ अज्ञान की नियमा । तीन विकलेन्द्रिय (बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय) और असंज्ञी तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय में २ ज्ञान २ अज्ञान की नियमा। संज्ञी तिर्यञ्च में ३ ज्ञान, ३ अज्ञान की भजना । मनुष्य में ५ ज्ञान ३ अज्ञान की भजना । सिद्ध भगवान् में केवलज्ञान की नियमा ।

(२) गतिद्वार—*नरकगतिक और देवगतिक में ३ ज्ञान की

* नरक गति में जाता हुआ जीव जब तक अन्तराल-गति में रहता है, उत्पत्तिस्थान में पहुँचा नहीं तब तक उसको नरकगतिक (नरक-

नियमा, ३ अज्ञान की भजना । तिर्यञ्चगतिक में २ ज्ञान, २ अज्ञान की नियमा । मनुष्यगतिकमें ३ ज्ञान की भजना, २ अज्ञानकी नियमा । सिद्धगतिक में केवलज्ञान की नियमा ।

(३) इन्द्रियद्वार—सइन्द्रिय और पंचेन्द्रिय में ४ ज्ञान ३ अज्ञान की भजना । एकेन्द्रिय में २ अज्ञान की नियमा । तीन विकलेन्द्रिय में २ ज्ञान २ अज्ञान की नियमा । अनिन्द्रिय में केवलज्ञान की नियमा ।

(४) कायद्वार—सकायिक और त्रसकायिक में ५ ज्ञान, ३ अज्ञान की भजना । पृथ्वीकाय, अप्काय, तेउकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय में २ अज्ञान की नियमा । अकायिक में केवलज्ञान की नियमा ।

(५) सूक्ष्मबादरद्वार—*सूक्ष्म में २ अज्ञान की नियमा । बादर में ५ ज्ञान ३ अज्ञान की भजना । नोसूक्ष्म नोबादर में केवलज्ञान की नियमा ।

(६) पर्याप्तिद्वार—समुच्चय पर्याप्ता में ५ ज्ञान, ३ अज्ञान की भजना । पहली नरक से नवग्रैवेयक तक के पर्याप्तों में ३ ज्ञान ३ अज्ञान की नियमा । पांच अनुत्तर विमान के पर्याप्तों में ३ ज्ञान की नियमा । पांच स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय और

तिया) कहते हैं। इसी तरह देवगतिक, तिर्यञ्चगतिक और मनुष्यगतिक भी समझ लेना चाहिए।

*जिसका शरीर किसी को रोके नहीं तथा स्वयं भी किसी से रुके नहीं उसको सूक्ष्म कहते हैं। सूक्ष्म केवली सिवाय छद्मस्थ को नहीं दिखता है।

काले अंतर अप्पाबहुयं, पज्जवा चेव दाराई ॥ २ ॥

जीव में ज्ञान अज्ञान आसरी नियमा भजना के २१ द्वार—१ जीवद्वार, २ गतिद्वार, ३ इन्द्रियद्वार, ४ कायद्वार, ५ सूक्ष्मबादरद्वार, ६ पर्याप्तिद्वार, ७ भवत्थ (भवस्थ) द्वार, ८ भवसिद्धिद्वार, ९ सन्नी (संज्ञी) द्वार, १० लब्धिद्वार, ११ उपयोगद्वार, १२ योगद्वार, १३ लेश्याद्वार, १४ कषायद्वार, १५ वेदद्वार, १६ आहारद्वार, १७ ज्ञानगोचरद्वार, १८ कालद्वार, १९ अन्तरद्वार, २० अल्पबहुत्वद्वार, २१ पर्याय की अल्पाबोधद्वार ।

(१) जीवद्वार—समुच्चय जीव में ५ ज्ञान, ३ अज्ञान की भजना । पहली नारकी, भवनपति और वाणव्यन्तर देवता में ३ ज्ञान की नियमा, ३ अज्ञान की भजना । दूसरी नारकी से सातवीं नारकी तक, और ज्योतिषी से नवग्रैवेयक तक ३ ज्ञान, ३ अज्ञान की नियमा । पांच अनुत्तर विमान में ३ ज्ञान की नियमा । पांच स्थावर और असंज्ञी मनुष्य में २ अज्ञान की नियमा । तीन विकलेन्द्रिय (बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय) और असंज्ञी तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय में २ ज्ञान २ अज्ञान की नियमा । संज्ञी तिर्यञ्च में ३ ज्ञान, ३ अज्ञान की भजना । मनुष्य में ५ ज्ञान ३ अज्ञान की भजना । सिद्ध भगवान् में केवलज्ञान की नियमा ।

(२) गतिद्वार—*नरकगतिक और देवगतिक में ३ ज्ञान की

---

*नरक गति में जाता हुआ जीव जब तक अन्तराल-बीच में रहता है, उत्पत्तिस्थान में पहुँचा नहीं तब तक उसको नरकगतिक (नरकग

नियमा, ३ अज्ञान की भजना । तिर्यञ्चगतिक में २ ज्ञान, २ अज्ञान की नियमा । मनुष्यगतिकमें ३ ज्ञान की भजना, २ अज्ञानकी नियमा । सिद्धगतिक में केवलज्ञान की नियमा ।

(३) इन्द्रियद्वार—सइन्द्रिय और पंचेन्द्रिय में ४ ज्ञान ३ अज्ञान की भजना । एकेन्द्रिय में २ अज्ञान की नियमा । तीन विकलेन्द्रिय में २ ज्ञान २ अज्ञान की नियमा । अनिन्द्रिय में केवलज्ञान की नियमा ।

(४) कायद्वार—सकायिक और त्रसकायिक में ५ ज्ञान, ३ अज्ञान की भजना । पृथ्वीकाय, अप्काय, तेउकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय में २ अज्ञान की नियमा । अकायिक में केवलज्ञान की नियमा ।

(५) सूक्ष्मबादरद्वार—*सूक्ष्म में २ अज्ञान की नियमा । बादर में ५ ज्ञान ३ अज्ञान की भजना । नोसूक्ष्म नोबादर में केवलज्ञान की नियमा ।

(६) पर्याप्तिद्वार—समुच्चय पर्जापता में ५ ज्ञान, ३ अज्ञान की भजना । पहली नरक से नवग्रैवेयक तक के पर्जापतों में ३ ज्ञान ३ अज्ञान की नियमा । पांच अनुत्तर विमान के पर्जापतों में ३ ज्ञान की नियमा । पांच स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय और

तिया) कहते हैं । इसी तरह देवगतिक, तिर्यञ्चगतिक और मनुष्यगतिक भी समझ लेना चाहिए ।

*जिसका शरीर किसी को रोके नहीं तथा स्वयं भी किसी से रुके नहीं उसको सूक्ष्म कहते हैं । सूक्ष्म केवली सिवाय छद्मस्थ के नहीं दिखता है ।

असंज्ञी तिर्यंच के पर्जापतों में २ अज्ञान की नियमा । संज्ञी तिर्यंच के पर्जापतों में ३ ज्ञान ३ अज्ञान की भजना । मनुष्य के पर्जापतों में ५ ज्ञान ३ अज्ञान् की भजना । समुच्चय अपर्जापतों में ३ ज्ञान, ३ अज्ञान की भजना । पहली नारकी भवनपति और वाणव्यन्तर के अपर्जापतों में ३ ज्ञान की नियमा ३ अज्ञान की भजना । दूसरी नारकी से छठी नारकी तक और ज्योतिषी से नवग्रैवेयक तक के अपर्जापतों में ३ ज्ञान ३ अज्ञान की नियमा । सातवीं नारकी के अपर्जापतों में ३ अज्ञान की नियमा । पांच अनुत्तर विमान के अपर्जापतों में ३ ज्ञान की नियमा । पांच स्थावर और असंज्ञी मनुष्य के अपर्जापतों में २ अज्ञान की नियमा । तीन विकलेन्द्रिय, असंज्ञी तिर्यंच और संज्ञी तिर्यंच के अपर्जापतों में २ ज्ञान २ अज्ञान की नियमा । संज्ञी मनुष्य के अपर्जापतों में ३ ज्ञान की भजना, २ अज्ञान की नियमा । नो पर्जापता नो अपर्जापता में केवलज्ञान की नियमा।

(७) *भवत्था (भवस्थ) द्वार—नारक भवत्था और देव-भवत्था में ३ ज्ञान की नियमा, ३ अज्ञान की भजना । तिर्यंच भवत्था में ३ ज्ञान ३ अज्ञान की भजना । मनुष्यभवत्था में ५ ज्ञान ३ अज्ञान की भजना । अभवत्था (सिद्ध भगवान्)

---

*जो जीव मर कर अपने उत्पत्तिस्थान में जाकर उत्पन्न हो चुका है, उसे भवत्था कहते हैं । जैसे नरक में रहा हुआ जीव नरक भवत्था कहलाता है । इसी तरह तिर्यंचभवत्था, मनुष्यभवत्था, देवभवत्था भी समझ लेना चाहिए ।

में केवलज्ञान की नियमा ।

(८) भवसिद्धियाद्वार—भवसिद्धिया (भव्य) में ५ ज्ञान ३ अज्ञान की भजना। अभवसिद्धिया (अभव्य) में ३ अज्ञान की भजना। नोभवसिद्धिया नोअभवसिद्धिया (सिद्ध भगवान्) में केवलज्ञान की नियमा।

(६) संज्ञी (सन्नी) द्वार—संज्ञीमें ४ ज्ञान ३ अज्ञानकी भजना। असंज्ञी में २ ज्ञान २ अज्ञान की नियमा। नोसंज्ञी नोअसंज्ञी में (सिद्धभगवान् और तेरहवें चवदवें गुणस्थानवर्ती जीव) में केवलज्ञानकी नियमा।

(१०) लब्धिद्वार—लब्धि के १० भेद हैं—
१ ज्ञानलब्धि, २ दर्शनलब्धि, ३ चारित्र लब्धि, ४ चारित्राचारित्र लब्धि (देशविरति चारित्र लब्धि) ५ दान लब्धि, ६ लाभ लब्धि, ७ भोग लब्धि, ८ उपभोग लब्धि ६ वीर्यलब्धि, १० इंद्रियलब्धि।

ज्ञानलब्धि-ज्ञान के ५ भेद -मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्ययज्ञान, केवलज्ञान। अज्ञान के ३ भेद-मतिअज्ञान, श्रुतअज्ञान, विभंगज्ञान। समुच्चयज्ञान लद्धियामें ५ ज्ञानकी भजना। तस्स (उनके) अलद्धिया (ज्ञानके अलद्धिया) में ३ अज्ञानकी भजना। मतिज्ञान श्रुतज्ञानके लद्धिया में ४ ज्ञानकी भजना, तस्स अलद्धिया (मतिज्ञान श्रुतज्ञानके अलद्धिया) में ३ अज्ञानकी भजना, केवलज्ञान की नियमा। अवधिज्ञान लद्धिया और मनःपर्ययज्ञान के लद्धियामें ४

की भजना, तस्स अलद्धिया (अवधिज्ञान मनःपर्यय ज्ञानके अलद्धिया) में ४ ज्ञान ३ अज्ञानकी भजना। केवलज्ञान लद्धियामें केवलज्ञान की नियमा, तस्स अलद्धिया (केवलज्ञान का अलद्धिया) में ४ ज्ञान ३ अज्ञान की भजना। समुच्चय अज्ञान और मतिअज्ञान श्रुतअज्ञान के लद्धिया में ३ अज्ञान की भजना, तस्स अलद्धियो (समुच्चयअज्ञान, मतिअज्ञान, श्रुत अज्ञानके अलद्धिया) में ५ ज्ञान की भजना। विभंग ज्ञानके लद्धिया में ३ अज्ञान की नियमा, तस्स अलद्धिया (विभंग ज्ञानके अलद्धिया) में ५ ज्ञान की भजना, २ अज्ञानकी नियमा।

दर्शनलब्धि–दर्शन के ३ भेद–सम्यग्दर्शन, मिथ्यादर्शन सम्यग्मिथ्यादर्शन (मिश्रदर्शन) समुच्चय दर्शनमें ५ ज्ञान ३ अज्ञान की भजना। तस्स (उनका) अलद्धिया (समुच्चय दर्शनका अलद्धिया) कोई जीव नहीं। सम्यग्दर्शनका लद्धिया में ५ ज्ञान की भजना। तस्स अलद्धिया (सम्यग्दर्शनका अलद्धिया) में ३ अज्ञान की भजना। मिथ्यादर्शन लद्धिया और मिश्रदर्शन लद्धिया में ३ अज्ञान की भजना। तस्स अलद्धिया (मिथ्यादर्शन का अलद्धिया और मिश्रदर्शन का अलद्धिया) में ५ ज्ञान ३ अज्ञान की भजना।

चारित्र लब्धि—चारित्र के ५ भेद—सामायिक चारित्र छेदोपस्थापनीय चारित्र, परिहार विशुद्धि चारित्र, सूक्ष्मसम्पराय चारित्र, यथाख्यात चारित्र। समुच्चय चारित्र लद्धियामें ५ ज्ञान की भजना, तस्स अलद्धिया में ४ ज्ञान ३ अज्ञान की भजना

सामायिक चारित्र लद्धिया छेदोपस्थापनीय चारित्र लद्धिया, परिहार विशुद्धि चारित्र लद्धिया, सूक्ष्म सम्पराय चारित्र लद्धियामें ४ ज्ञानकी भजना। तस्स अलद्धिया (सामायिक चारित्रका अलद्धिया, छेदोपस्थापनीय चारित्रका अलद्धिया, परिहार विशुद्धि चारित्रका अलद्धिया, सूक्ष्मसम्पराय चारित्रका अलद्धिया) में ५ ज्ञान ३ अज्ञानकी भजना। यथाख्यात चारित्र लद्धिया में ५ ज्ञानकी भजना। तस्स अलद्धिया (यथाख्यात चारित्रका अलद्धिया में ५ ज्ञान ३ अज्ञान की भजना। चारित्राचारित्र लद्धिया में ३ ज्ञान की भजना। तस्स अलद्धिया—चारित्राचारित्रका अलद्धिया) में ५ ज्ञान ३ अज्ञान की भजना।

दानलद्धिया, लाभलद्धिया, भोगलद्धिया, उपभोगलद्धिया, वीर्यलद्धिया में ५ ज्ञान ३ अज्ञान की भजना। तस्स अलद्धिया [दान अलद्धिया लाभअलद्धिया भोग अलद्धिया, उपभोग अलद्धिया, वीर्य अलद्धिया] में केवलज्ञान की नियमा। बालवीर्य लद्धिया में ३ ज्ञान ३ अज्ञान की भजना। तस्स अलद्धिया (बाल वीर्य का अलद्धिया) में ५ ज्ञान की भजना। बाल पण्डित वीर्य लद्धिया में ३ ज्ञान की भजना। तस्स अलद्धिया (बाल पण्डित वीर्यका अलद्धिया) में ५ ज्ञान ३ अज्ञान की भजना। पण्डितवीर्य लद्धिया में ५ ज्ञान की भजना। तस्स अलद्धिया (पण्डित वीर्य का अलद्धिया) में ४ ज्ञान ३ अज्ञान की भजना।

इन्द्रियलब्धि—इन्द्रियाँ ५–श्रोत्रेन्द्रिय, चक्षुइन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, रसेन्द्रिय, स्पर्शेन्द्रिय। सइन्द्रिय लद्धिया में और स्पर्शेन्द्रिय लद्धिया में ४ ज्ञान ३ अज्ञान की भजना। तस्स अलद्धिया (समुच्चय इन्द्रियका अलद्धिया और स्पर्शेन्द्रिय का अलद्धिया) में केवलज्ञान की नियमा। श्रोत्रेन्द्रिय लद्धिया, चक्षुइन्द्रियलद्धिया और घ्राणेन्द्रियलद्धिया में ४ ज्ञान ३ अज्ञान की भजना। तस्स अलद्धिया (श्रोत्रेन्द्रिय का अलद्धिया, चक्षुइन्द्रिय का अलद्धिया घ्राणेन्द्रिय का अलद्धिया) में २ ज्ञान २ अज्ञान और केवलज्ञान की नियमा। रसेन्द्रिय लद्धिया में ४ ज्ञान ३ अज्ञान की भजना। तस्स अलद्धिया (रसेन्द्रिय का अलद्धिया) में केवलज्ञान की नियमा, २ अज्ञान की नियमा।

(११) उपयोगद्वार–* सागारोवउत्ता अणागारोवउत्ता में ५ ज्ञान ३ अज्ञान की भजना। मतिज्ञान श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनः पर्ययज्ञान में ४ ज्ञान की भजना। केवलज्ञान में एक केवलज्ञान की नियमा।

मतिअज्ञान, श्रुतअज्ञान में ३ अज्ञान की भजना। विभंग ज्ञान में ३ अज्ञान की नियमा।

चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन में ४ ज्ञान, ३ अज्ञान की भजना। अवधि दर्शन में ३ अज्ञान की नियमा, ४ ज्ञान की भजना। केवलदर्शन में एक केवलज्ञान की नियमा।

*सागोरोवउत्ता (साकार उपयोग) ज्ञान। अणागारो वउत्ता (अनाकार उपयोग) दर्शन।

(१२) योगद्वार–सयोगी, मन योगी वचन योगी, काय
गी में ५ ज्ञान ३ अज्ञान की भजना। अयोगी में केवलज्ञान
नियमा।

(१३) लेश्याद्वार—सलेशी और शुक्ललेशी में ५ ज्ञान
अज्ञान की भजना। कृष्णलेशी नीललेशी कापोतलेशी तेजो-
ी पद्मलेशी में ४ ज्ञान ३ अज्ञान की भजना। अलेशी में
लज्ञान की नियमा।

(१४) कषायद्वार–सकषायी क्रोधकषायी मानकषायी, माया-
यी, लोभकषायी में ४ ज्ञान ३ अज्ञान की भजना। अक-
ी में ५ ज्ञान की भजना।

(१५) वेदद्वार–सवेदी, स्त्रीवेदी, पुरुषवेदी, नपुंसकवेदी में
ान ३ अज्ञान की भजना। अवेदी में ५ ज्ञान की भजना।

(१६) आहारद्वार–आहारक में ५ ज्ञान ३ अज्ञान की
ना। अनाहारक में ४ ज्ञान [मनःपर्यय ज्ञान को छोड़कर]
अज्ञान की भजना।

(१७) ज्ञान गोचरद्वार–हरेक ज्ञानका विषय ४ प्रकार से
तलाया गया है–द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से, भाव से। मतिज्ञान
के २ भेद–श्रुत निश्रित, अश्रुतनिश्रित। मतिज्ञानी द्रव्य क्षेत्र
काल भाव से आदेसेण (सामान्य प्रकार से) सर्व द्रव्य क्षेत्र
काल भाव जानता देखता है *।

*भगवती सूत्र के आठवें शतक के दूसरे उद्देशे की टीका में कहा
–'अवायधारणे ज्ञानम्, अवग्रहे हे दर्शनम्' अर्थात् अवाय और धारणा

* श्रुतज्ञान के १४ भेद—१ अक्षरश्रुत, २ अनक्षरश्रुत, ३ संज्ञीश्रुत, ४ असंज्ञीश्रुत, ५ सम्यक्श्रुत, ६ मिथ्याश्रुत, ७ सादिश्रुत, ८ अनादिश्रुत, ९ सपर्यवसितश्रुत, १० अपर्यवसितश्रुत, ११ गमिकश्रुत, १२ अगमिकश्रुत, १३ अङ्ग प्रविष्ट श्रुत, १४ अङ्ग बाह्यश्रुत। श्रुतज्ञानी उपयोग सहित सर्व द्रव्य क्षेत्र काल भाव जानता देखता है।

* अवधिज्ञान के ६ भेद—१ अनुगामी, २ अननुगामी, ३ वर्द्धमान, ४ हीयमान, ५ प्रतिपाती, ६ अप्रतिपाती। अवधिज्ञानी उपयोग लगा कर द्रव्यसे जघन्य अनन्ता अनन्त रूपी द्रव्य जानता देखता है, उत्कृष्ट सर्व रूपी द्रव्य जानता देखता है। क्षेत्र से—जघन्य अंगुल का असंख्यातवां भाग जानता देखता है, उत्कृष्ट सर्व लोक और लोक सरीखा असंख्यात खण्ड अलोक में होवे तो जानता देखता है। कालसे—जघन्य आवलिका के असंख्यातवें भाग भूतकाल और भविष्यकाल जानता देखता है, उत्कृष्ट असंख्याती अवसर्पिणी उत्सर्पिणी जितना भूतकाल (अतीतकाल) भविष्यकाल (अनागतकाल) जानता देखता

ज्ञानरूप हैं तथा अवग्रह और ईहा दर्शनरूप हैं। इसलिये अवाय और धारणा की अपेक्षा से 'जाणइ' (जानना) कहा है तथा अवग्रह और ईहाकी अपेक्षा से 'पासइ' (देखना) कहा है।

जातिस्मरण मतिज्ञान के पेटे में (अन्तर्गत) है। इस कारण भगवती सूत्रमें 'जाणइ पासइ' कहा है। नन्दीसूत्र में—'जाणइ न पासइ' कहा है क्योंकि मतिज्ञान परोक्षज्ञान है।

* मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान के भेद प्रभेद और विस्तार नन्दीसूत्र में है।

है। भावसे-अनन्ता भाव जानता देखता है। सब भावोंके अनन्तवें भाग को जानता देखता है।

मनः पर्यायज्ञान के २ भेद हैं—ऋजुमति, विपुलमति। ऋजुमति मनःपर्यायज्ञानी द्रव्यसे-अनन्ता अनन्त प्रदेशी स्कन्ध को जानता देखता है। क्षेत्र से-जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट अधोदिशा में रत्नप्रभा पृथ्वी के ऊपरके और नीचे के क्षुल्लक (छोटे) प्रतरों को देखता है जैसा कि नंदीसूत्रका पाठ है:-

"खेत्तओ णं उज्जुमई अ जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जयं भागं उक्कोसेणं अहे जाव इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए उवरिम हिट्ठिल्ले खुड्डग पयरे।"

ऊर्ध्व दिशा (ऊँची दिशा) में ज्योतिषी के ऊपरके तल को जानता देखता है-तिर्यक् दिशा (तिरछी दिशा) में अढ़ाई अंगुल कम अढ़ाई द्वीप के संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव के मन के भावोंको जानता देखता है। कालसे-पलके असंख्यातवें भाग, भूत काल और आगामी काल सम्बन्धी जानता देखता है। भावसे-अनन्ता भाव जानता देखता है, सब भावोंके अनन्तवें भाग को जानता देखता है।

---

* नोट—चूँकि मनः पर्ययज्ञानी नीचे शिलावती विजय की अपेक्षा १००० योजन तक देख सकता है इसलिये रत्नप्रभा पृथ्वी के ऊपर के और नीचे के क्षुल्लक प्रतर इन्हीं १००० योजन के अन्दर ही समझना चाहिये।

ऋजुमति के समान ही विपुलमति का कथन कर देना चाहिए किन्तु इतनी विशेषता है कि क्षेत्र की अपेक्षा सम्पूर्ण अढाई द्वीप को जानता देखता है, और द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव में कुछ अधिक विस्तार सहित, विशुद्ध (निर्मल), अधिक स्पष्ट जानता देखता है।

केवलज्ञान के दो भेद—भवस्थ केवलज्ञान और सिद्ध केवलज्ञान, केवलज्ञान सर्व द्रव्य क्षेत्र काल भाव को जानता देखता है।

मति अज्ञानी द्रव्य क्षेत्र काल भाव से ग्रहण किये हुए पुद्गलों को जानता देखता है। श्रुत अज्ञानी द्रव्य क्षेत्र काल भाव से ग्रहण किये हुए पुद्गलों को कहता है, बतलाता है, प्ररूपणा करता है। विभंगज्ञानी द्रव्य क्षेत्र काल भाव से ग्रहण किये हुए पुद्गलों को जानता देखता है।

(१८) कालद्वार—ज्ञानी के ज्ञान की स्थिति की मर्यादा को काल कहते हैं। स्थिति दो प्रकार की है–१ साइया सपज्जवसिया (आदि अंत सहित), २ साइया अपज्जवसिया (आदि है किंतु अंत रहित) समुच्चय ज्ञानी में भांगा पावे २ साइया अपज्जवसिया और साइया सपज्जवसिया। साइया अपज्जवसिया की स्थिति नहीं। साइया सपज्जवसिया की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट ६६ सागर झाझेरी। मतिज्ञानी और श्रुतज्ञानी की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त की, उत्कृष्ट ६६ सागरोपम झाझेरी। अवधिज्ञान की स्थिति जघन्य १ समय की, उत्कृष्ट ६६ सागरोपम झाझेरी। मनःपर्ययज्ञान की स्थिति जघन्य

मय की, उत्कृष्ट देशोन (कुछ कम) कोड़ पूर्व की। केवल-
ान में भांगा पावे १ साइया अपज्जवसिया, केवलज्ञान उत्पन्न
ोकर फिर कभी नष्ट नहीं होता।

समुच्चय अज्ञान और मति अज्ञान श्रुत अज्ञान में भांगा
ावे ३ तीन—१ अणाइया अपज्जवसिया (आदि अन्त रहित)।
२ अणाइया सपज्जवसिया (आदि नहीं किन्तु अन्त है)। ३
ाइया सपज्जवसिया (आदि अन्त सहित)। पहला भांगा
अभवी जीवों में पाया जाता है। दूसरा भांगा भवी जीवों में
पाया जाता है। तीसरा भांगा पडिवाई भवी जीवों में पाया
जाता है। समुच्चय अज्ञान, मति अज्ञान, श्रुत अज्ञान में तीसरे
भांगे की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त की, उत्कृष्ट देशोन अर्द्ध पुद्गल
परावर्तन की। विभंग ज्ञान की स्थिति जघन्य १ समय की,
उत्कृष्ट ३३ सागर देशोन करोड़ पूर्व अधिक की।

(१९) * अन्तर द्वार—×समुच्चय ज्ञान में भांगा पावे दो—
१ साइया अपज्जवसिया २ साइया सपज्जवसिया। साइया

* एक वार उत्पन्न होकर नष्ट होने के समय से लगा कर दूसरी
वार उत्पन्न होने के समय तक बीच में जो आन्तरा (व्यवधान) पड़ता
है उसको अन्तर कहते हैं।

× समुच्चयअज्ञान मतिअज्ञान श्रुतअज्ञान के दो दो (१ अणाइया
अपज्जवसिया २ अणाइया सपज्जवसिया) भांगे के हिसाब से छः भांगे
और एक समुच्चय ज्ञानका भांगा साइया अपज्जवसिया और एक केव-
लज्ञान ये ८ भांगोंका आन्तरा नहीं होता। अज्ञान छोड़ कर बाकी सब
बोलों में आन्तरा पड़े तो देश ऊणा अर्द्ध पुद्गलिक काल का और समु-

अपज्जवसिया का आन्तरा नहीं, समुच्चय ज्ञानका दूसरा भांगा, मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान मनःपर्यय ज्ञान का आन्तरा जघन्य अन्तर्मुहूर्त का, उत्कृष्ट देशोनअर्द्ध पुद्गल परावर्तन का केवलज्ञान का आन्तरा नहीं। समुच्चय अज्ञान मति अज्ञान श्रुतअज्ञान के भांगे तीन तीन—१ अणाइया अपज्जवसिया, २ अणाइया सपज्जवसिया, ३ साइया सपज्जवसिया। पहले दूसरे भांगे का आन्तरा नहीं। तीसरे भांगे का आन्तरा जघन्य अन्तर्मुहूर्त का, उत्कृष्ट ६६ सागर झाझेरा। विभंग ज्ञान का आन्तरा जघन्य अन्तर्मुहूर्त का, उत्कृष्ट अनन्त काल का (वनस्पतिकाल जितना)।

(२०) अल्पबहुत्व द्वार—१ सब से थोड़ा मनःपर्यय-ज्ञानी, २ उससे अवधिज्ञानी असंख्यातगुणा, ३ उससे मतिज्ञानी श्रुतज्ञानी आपस में तुल्ला (बराबर) विशेषाहिया, ४ उससे केवलज्ञानी अनन्तगुणा, ५ उससे समुच्चयज्ञानी विशेषाहिया।

तीन अज्ञान का अल्प बहुत्व—१ सब से थोड़ा विभंग-ज्ञानी, २ उससे मतिअज्ञानी श्रुतअज्ञानी आपस में तुल्ला अनन्तगुणा, ३ उससे समुच्चय अज्ञानी विशेषाहिया।

ज्ञान अज्ञान दोनों की शामिल अल्पाबोध—१ सब से

...च्चयअज्ञान मतिअज्ञान श्रुतअज्ञान का तीसरा भांगा साइया सपज्ज-वसिया का आन्तरा जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट ६६ सागर झाझेरा। विभंग ज्ञानका आन्तरा पड़े तो जघन्य अन्तर मुहूर्त का उत्कृष्ट अनन्ताकाल का ...५ वनस्पति काल।

थोड़ा मनःपर्यायज्ञानी, २ उससे अवधिज्ञानी असंख्यातगुणा, ३ उससे मतिज्ञानी श्रुतज्ञानी आपस में तुल्ला विशेपाहिया, ४ उससे विभङ्गज्ञानी असंख्यात गुणा, ५ उससे केवलज्ञानी अनन्तगुणा, ६ उससे समुच्चयज्ञानी विशेपाहिया, ७ उससे मतिअज्ञानी श्रुतअज्ञानी आपस में तुल्ला अनन्तगुणा, ८ उससे समुच्चयअज्ञानी विशेपाहिया।

[२१] पर्याय की अल्प बहुत्व द्वार [परजवाद्वार]—एक एक ज्ञान के अनन्ताअनंत परजवा हैं। १ सब से थोड़े मनः-पर्यय ज्ञान के परजवा, २ उससे अवधिज्ञान के परजवा अनन्त गुणा, ३ उससे श्रुतज्ञान के परजवा अनन्त गुणा, ४ उससे मतिज्ञान के परजवा अनन्त गुणा, ५ उससे केवलज्ञान के परजवा अनन्त गुणा।

तीन अज्ञान के परजवा अनन्ता अनन्त हैं। इनकी अल्पा-बोध—१ सब से थोड़ा विभङ्गज्ञान के परजवा, २ उससे श्रुत अज्ञान के परजवा अनन्तगुणा, ३ उससे मतिअज्ञान के परजवा। अनन्त गुणा।

ज्ञान अज्ञान दोनों के परजवों की शामिल अल्पाबोध—१ सब से थोड़ा मनःपर्यय ज्ञान के परजवा, २ उससे विभंग ज्ञान के परजवा अनन्त गुणा, ३ उससे अवधिज्ञान के परजवा अनन्त गुणा, ४ उससे श्रुत अज्ञान के परजवा अनन्त गुणा, ५ उससे श्रुत ज्ञान के परजवा विशेपाहिया, ६ उससे मति अज्ञान के परजवा अनन्त गुणा, ७ उससे मतिज्ञान के परजवा विशेपा-हिया, ८ उससे केवलज्ञान के परजवा अनन्त गुणा।

सेवं भंते! सेवं भंते!!

० - (थोकड़ा नम्बर ७५)

श्री भगवतीजी सूत्र के आठवें शतक के तीसरे उद्देशे में 'वृक्ष' आदि का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१-अहो भगवान् ! वृक्ष कितने प्रकार के हैं ? हे गौतम ! वृक्ष तीन प्रकार के हैं-संख्यातजीवी, असंख्यातजीवी, अनन्तजीवी। संख्यातजीवी (संख्यात जीव वाले)-ताल, तमाल, तक्कली, तेतली, नारियल, आदि हैं। असंख्यात जीवी (असंख्यात जीव वाले) के दो भेद-एगट्ठिया और बहुबीजा। एगट्ठिया में एक बीज (गुठली) होता है-जैसे-नीम, आम, जामुन आदि अनेक भेद हैं। बहुबीजा (एक फल में बहुत बीज)-बड़, पीपल, उंबर आदि। अनन्त जीवी (अनन्त जीव वाले)-आलू, मूला आदि जमीकन्द हैं।

२-अहो भगवान् ! कछुआ, कछुए की श्रेणी, गोह, गोह की श्रेणी, गाय, गाय की श्रेणी, मनुष्य, मनुष्य की श्रेणी, महिष (भैंसा), महिष की श्रेणी, इन सब के दो तीन यावत् संख्याता खण्ड किये हों तो क्या बीच में जीव के प्रदेश फरसते हैं ? हाँ, गौतम ! फरसते हैं।

३—अहो भगवान् ! क्या शस्त्र प्रहार, अग्निताप आदि से उन प्रदेशों को बाधा पीड़ा होती है ? हे गौतम ! बाधा पीड़ा नहीं होती है *।

---

* वृक्षों का तथा कछुए आदि का विस्तार श्री पन्नवणा सूत्र के प्रथम पद में जानना।

४—अहो भगवान् ! पृथ्वियाँ कितनी हैं ? हे गौतम ! थ्वियाँ आठ हैं–१ रत्नप्रभा, २ शर्कराप्रभा, ३ वालुकाप्रभा, पंकप्रभा, ५ धूमप्रभा, ६ तमप्रभा, ७ तमतमाप्रभा, ८ ईसि-भारा (सिद्ध शिला) * ।

सेवं भंते ! सेवं भंते !

(थोकड़ा नम्बर ७६)

श्री भगवतीजी सूत्र के आठवें शतक के पांचवें उद्देशे में 'आजीविक' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! कोई श्रावक घर की सब वस्तुओं को वोसिरा (त्याग) कर सामायिक पौषध आदि व्रत करके उपाश्रय में बैठा है। कोई चोर उसकी वस्तु को चुरा ले गया। सामायिक पौषध पार कर वह श्रावक उस वस्तु की खोज करे तो क्या वह वस्तु उसी की है या दूसरे की है ? हे गौतम ! वह वस्तु उस श्रावक की ही है क्योंकि उस वस्तु पर श्रावक की ममता है, ममता छूटी नहीं। इसी तरह कोई श्रावक सब कुटुम्ब परिवार को वोसिरा कर सामायिक पौषध आदि व्रत कर उपाश्रय में बैठा है, उस वक्त कोई व्यभिचारी लम्पट पुरुष उस श्रावक की स्त्री को भोगता है तो क्या वह जाया (श्रावक की स्त्री को) भोगता है, या अजाया (श्रावक की स्त्री नहीं)

---

* रत्नप्रभा चरम है या अचरम है इत्यादि विस्तार श्री पन्नवणा सूत्र के थोकड़ों के प्रथम भाग (दसवां चरम पद) के पृष्ठ ६६ में जानना ।

को भोगता है ? हे गौतम ! उस श्रावक की जाया को भोगता है, अजाया को नहीं। क्योंकि श्रावक का उसपर प्रेमबन्ध है, प्रेमबन्ध छूटा नहीं।

श्रावक के त्याग पच्चक्खाण के करण (करना, कराना अनुमोदना), योग (मन, वचन, काया) आसरी ४६ भांगे हैं। अतीतकाल (भूतकाल) के पाप से निवृत्त होता है, वर्तमान में संवर करता है, और आगामी काल के पच्चक्खाण करता है। इस तरह तीन काल आसरी ४६×३=१४७ भांगे होते हैं। पांच अणुव्रत आसरी १४७×५=७३५ मूल भांगे होते हैं। ४६ भांगों के ४६×४६=२४०१ उत्तर भांगे होते हैं।

अहो भगवान् ! इस तरह करण योग के भांगे गोशालक के श्रावकों के होते हैं ? हे गौतम ! नहीं होते।

अहो भगवान् ! गोशालक के मुख्य श्रावक कितने हैं ? हे गौतम ! १२ हैं। उनके नाम इसप्रकार हैं—१ ताल, २ तालप्रलम्ब, ३ उद्विध, ४ संविध, ५ अवविध, ६ उदय, ७ नामोदय, ८ नर्मोदय, ९ अनुपालक, १० शंखपालक, ११ अयंबुल, १२ कातर। ये गोशालक को देव मानते हैं। माता पिता की सेवा करते हैं। पांच प्रकार के फल नहीं खाते—यथा १ उंबर का फल, २ बड़ का फल, ३ बोर, ४ सत्तर (शहतूत) का फल, ५ पीपल का फल। वे लहसुन, कांदा आदि कन्द मूल नहीं खाते। वे अनिर्लांछित (नपुंसक नहीं बनाये हुए) तथा नाक नहीं विंधे हुए बैलों से त्रस प्राणी की हिं

रहित व्यापार करके आजीविका करते हैं।

श्रमण भगवान् महावीरस्वामी के श्रावकों को १५ कर्मादान
करना, कराना, अनुमोदना नहीं कल्पता है।* १५ कर्मादानों

---

* पन्द्रह कर्मादान

जिन धंधों और कार्यों (कर्म) से उत्कट ज्ञानावरणीय आदि कर्मों का
न्ध होता है उन्हें कर्मादान कहते हैं। कर्मादान श्रावकों के जानने
ोग्य हैं पर आचरण योग्य नहीं हैं। ये कर्मादान पन्द्रह हैं:—

—इंगालकम्मे (अंगारकर्म)–जंगल को खरीदकर व ठेके लेकर
कोयले बनाने और बेचने का धंधा करना अंगारकर्म है। इसमें छः
काय का वध होता है।

—वणकम्मे (वनकर्म)–जंगल को खरीदकर वृक्षों को काटकर
बेचना और इससे आजीविका करना वनकर्म है।

—साड़ीकम्मे (शाकटिक कर्म)–वाहन सहित गाड़ी तांगा इक्का आदि
बनाने और बेचने का धंधा कर आजीविका करना शाकटिक कर्म है।

—भाड़ीकम्मे (भाटीकर्म)–गाड़ी आदि से दूसरों का सामान भाड़ेपर
लेजाना तथा बैल घोड़े आदि को भाड़े देना—इस प्रकार भाड़े से
आजीविका करना भाटी कर्म है।

—फोड़ी कम्मे (स्फोटककर्म)–हल, कुदाली, सुरंग आदि से भूमि
खान आदि फोड़ना और निकले हुए पत्थर आदि को बेचकर आ-
जीविका करना अथवा जमीन खोदने का ठेका लेकर जमीन खोदना
और इस प्रकार आजीविका करना स्फोटक कर्म है।

—दंतवाणिज्जे (दंतवाणिज्य)–हाथीदांत, शंख, चर्म, चामर आदि
खरीदने बेचने का धंधा कर आजीविका करना दन्त वाणिज्य है।
ये धंधे करनेवाले लोग हाथीदांत आदि निकालने वालों को पहले
इनके लिये अग्रिम मूल्य दे देते हैं और वे लोग हाथी आदि की
हिंसा कर हाथी दांत आदि लाकर देते हैं। इस प्रकार ये व्यापार
महा हिंसाकारी है।

के नाम- १ इंगालकम्मे, २ वणकम्मे, ३ साडीकम्मे, ४ भाडी-

७—लक्ख वाणिज्जे (लाक्षा वाणिज्य)-लाख का क्रय विक्रय कर आजी-विका करना लाक्षा वाणिज्य है। इसमें त्रस जीवों की बड़ी हिंसा होती है।

८—रस वाणिज्जे (रस वाणिज्य)-मदिरा आदि बनाने और बेचने का कलाल आदि का धंधा कर आजीविका करना रस वाणिज्य है। मदिरा बनाने में हिंसा तो होती ही है किन्तु इसके पीने से अन्य बहुत से दोषों का संभव है।

९—विसवाणिज्जे (विषवाणिज्य)-विष शंखिया आदि बेचने का धंधा करना विषवाणिज्य है। इसमें बहुत जीवों की हिंसा होती है।

१०-केसवाणिज्जे (केशवाणिज्य)-दासी को खरीद कर दूसरी जगह अधिक मूल्य में बेचने का धंधा करना केशवाणिज्य है।

११-जंतपीलण कम्मे (यन्त्र पीड़न कर्म)-तिल, ईख आदि पीलने के यन्त्र कोल्हू, चरखिये आदि से तिल आदि पीलने का धंधा करना यन्त्र पीड़न कर्म है। उस समय में प्रायः यही यन्त्र प्रसिद्ध थे। आज के युग के महारंभ पोषक जितने भी यन्त्र हैं उनको भी उप-लक्षण से यन्त्र पीड़न कर्म में शामिल किया जा सकता है।

१२-निल्लंछण कम्मे (निर्लाञ्छन कर्म)-बैल, घोड़े आदि को नपुंसक बनाने का धंधा करना निर्लाञ्छन कर्म है।

१३-दवग्गि दावणया (दावाग्नि दापनता)-क्षेत्रादि साफ करने के लिये जंगल में आग लगा देना दावाग्नि दापनता है। इस में लाखों जीवों की हिंसा होती है।

१४-सरदह तलाय सोसणया (सरोह्रदतडाग शोषणता)-गेहूं आदि धान बोने के लिये सरोवर ह्रद और तालाब को सुखाना सरोह्रदतडाग शोषणता है।

१५-असईजण पोसणया (असती जन पोषणता)-आजीविका के लिये दुश्चरित्र स्त्रियों का पोषण करना असतीजन पोषणता है।

कम्मे, ५ फोडीकम्मे, ६ दंतवाणिज्जे, ७ लक्खवाणिज्जे, ८ केसवाणिज्जे, ९ रसवाणिज्जे, १० विसवाणिज्जे, ११ जंतपीलणकम्मे, १२ निल्लंछणकम्मे, १३ दवग्गिदावणया, १४ सरदहतलायसोसणया, १५ असईजणपोसणया। ये श्रावक त्याग पच्चक्खाण का निर्मल पालन करके किसी एक देवलोक में उत्पन्न होते हैं।

अहो भगवान्! देवलोक कितने प्रकार के हैं? हे गौतम! चार प्रकारके हैं—भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिषी और वैमानिक।

सेवं भंते! सेवं भंते!!

(थोकड़ा नम्बर ७७)

श्री भगवतीजी सूत्र के आठवें शतक के छठे उद्देशे में—प्रासुक अप्रासुक आहार का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान्! तथारूप के श्रमण माहण(उत्तम साधु) को प्रासुक (अचित्त) एषणीय (निर्दोष) * अशन पान खादिम

*अशन—अशन उसे कहते हैं जिससे भूख शान्त हो। जैसे—दाल भात रोटी आदि अन्न की वस्तु तथा विगय।
पान—पान उसे कहते हैं जिससे तृषा (प्यास) शान्त हो। जैसे—जल धोवन आदि पीने की वस्तु।
खादिम—खादिम (खाद्य) उसे कहते हैं जिससे भूख और प्यास दोनों की शान्ति हो जैसे—दूध, छाछ, मेवा मिष्टान्न आदि।
स्वादिम—स्वादिम (स्वाद्य) उसे कहते हैं जिससे न तो भूख शान्त हो और न प्यास शान्त हो। किन्तु मुख को साफ करने के लिये भोजन के बाद खाने लायक स्वादिष्ट पदार्थ, जैसे—लोंग, सुपारी, इलायची, चूर्ण, गोली खटाई आदि।

स्वादिम देवे तो श्रावक को क्या फल होता है ? हे गौतम ! एकान्त निर्जरा होती है, किञ्चित्मात्र पाप कर्म नहीं होता।

२—अहो भगवान् ! तथारूप के श्रमण माहण (उत्तम साधु) को कोई श्रावक अप्रासुक (सचित्त) अनेपणीय-संगट्टादिक दोष सहित, तथा शंका आदि सूक्ष्म दोप सहित आहार पानी देवे तो क्या फल होता है ? हे गौतम ! × बहुत निर्जरा अल्प पाप होता है

३—अहो भगवान् ! तथारूप के असंजती अविरति (मिथ्यात्व के दिपाने वाले मतपक्षी साधु) को कोई श्रावक प्रासुक या अप्रासुक, एपणीय या अनेपणीय अशनादि देवे तो क्या फल होता है ? हे गौतम ! + एकान्त पाप (मिथ्यात्वरू

× जैसे कोई सन्त महात्मा विहार करके किसी गांव में पधारे। मौसम गर्मी का है और दिन बहुत चढगया है। धोवन पानी का कहीं भी पैठा नहीं। प्यास के मारे प्राण जाने तक की नौबत आगई। उस वक्त श्रावक ने अपने घर में धोवन पानी की तलाश की तो मालूम हुआ धोवनपानी पड़ा हुआ है किन्तु उसमें ककड़ी आदि का बीज पड़ा हुआ जिससे वह अप्रासुक अनेपणीय है तब उन सन्त महात्माओं की प्राण रक्षा के लिए उस श्रावक ने बीज को अलग निकाल दिया और उन सन्त महात्माओं के पास जाकर अर्ज किया कि धोवन पानी मेरे यहाँ पड़ा हुआ है। मुनिराज ने उसे निर्दोष समझ कर ले लिया। उस श्रावक को बीज निकालने का अल्प पाप लगा और सन्त महात्माओं के प्राण बच गये उससे महा निर्जरा हुई।

+ मिथ्यात्व को दिपाने वाले बाबा जोगी आदि को गुरुबुद्धि से दान देने से मिथ्यात्वरूपी पाप लगता है।

एकान्त पाप) होता है, किंचित् मात्र निर्जरा नहीं होती। ×

कोई साधु गृहस्थ के घर गोचरी जाय गृहस्थ उन्हें दो पिण्ड (दो रोटी अथवा दो लड्डू) देकर ऐसा कहे कि अहो श्रमण ! इनमें से एक आप खाना और एक स्थविरों को देना, तो वह साधु एक पिण्ड आप खावे और एक पिण्ड स्थविरों को देवे। यदि स्थविर साधु विहार कर गये होवें तो उनको खोजे, यदि मिल जांय तो उनको दे देवे। यदि खोज करने पर भी न मिले तो उस पिण्ड को न तो आप खावे और न दूसरों को देवे। किन्तु एकान्त प्रासुक (जीव रहित) भूमि देख कर ÷पूंज कर परठ देवे। इसी तरह ३, ४, ५, ६, ७, ८, ९, १०, तक कह देना। उनमें से ९ पिण्ड स्थविरों को देवे, स्थविर नहीं मिले तो परठ देवे। ये आहार सम्बन्धी ९ अलावा (आलापक) हुए। इसी तरह पातरा, पूंजणी, ओघा, चोलपट्टा, कम्बल, दण्ड संस्तारक के ९-९ अलावा कह देना। ये ८×९=७२ अलावा हुए। पहलेके ३ मिलाकर कुल ७५ अलावा दान आसरी हुए।

आलोयणा के ४८ अलावा कहते हैं-(१) कोई साधु गोचरी

× यहाँ तीनों जगह के पाठों में 'तहारूवं' पाठ आया है उसका अर्थ होता है 'साधु का रूप'। तीनों ही जगह 'पडिलाभे' पाठ आया है यह गुरुबुद्धि से दान देने का सूचक है। मंगते, भिखारी आदि को देने में 'पडिलाभे' पाठ नहीं आता किन्तु मंगते, भिखारी को देने का जहां भी पाठ आया है, वहाँ 'दलयइ या दलेज्जा' आदि पाठ आया है।

÷परठने का कारण यह है कि उस गृहस्थने स्थिवरों का नाम खोल कर दिया है इसलिये उस पिंड को या लड्डू को खुद खावे और दूसरे को देवे तो अदत्त (चोरी) लगता है।

गया वहाँ गृहस्थ के घर (२) अथवा निहार भूमि (शौच जाने स्थण्डिल भूमि) गया वहाँ (३) अथवा ग्रामादि में विहार करते करते किसी अनाचार का सेवन कर लिया फिर उस साधु के मन में ऐसा विचार उत्पन्न हो कि पहले मैं यहीं पर इस अनाचार की आलोचना प्रतिक्रमण निन्दा और गर्हा करूँ यावत् यथायोग्य प्रायश्चित्त रूप तप कर्म को स्वीकार करूँ – बाद स्थविरों के पास जाकर आलोचना करूँगा यावत प्रायश्चित्त करूँगा ऐसा विचार कर वह स्थविर साधु के पास आलोयणा करने के लिये रवाना हुआ, अभी वह उपाश्रय तक पहुंचा नहीं, मार्ग में जाते जाते (१) स्थविर की वाचा (जबान) बन्द होगई, अथवा (२) अपनी खुद की वाचा बन्द होगई, अथवा (३) स्थविर काल कर गये (मरगये), अथवा (४) आप खुद काल कर गया, ये चार अलावा मार्ग के, इसी तरह ४ अलावा उपाश्रय में पहुंचने के, इन ८ को गोचरी आदि पहले के ३ ठिकानों से गुणा करने से २४ अलावा हुए, इन २४ अलावों में स्थविर के पास जाकर आलोयणा नहीं कर सका परन्तु उसके भाव शुद्ध हैं, इस कारण से× रोमादि छेद कर जलाने के दृष्टान्त

– यह गीतार्थ साधु ही करता है।

× जैसे कोई पुरुष ऊन, सण या कपास के डोरे को काट कर जलाता है तो काटती वक्त 'काटा' कहलाता है, गिराती वक्त "गिराया" हुवा कहलाता है और जलाती वक्त 'जलाया' कहलाता है। कोई पुरुष नवीन सफेद वस्त्र को रंगे तो रंग में डालती वक्त 'डाला' कहलाता है और रंगती वक्त 'रंगा' कहलाता है। जैसे किसी पुरुष ने ग्रामादि जाने के लिए चलना शुरू किया तो वह 'चला' कहलाता है। इसी तरह वह दोषी साधु आलोयणा नहीं कर सका परन्तु आलोयणा करने के भाव से रवाना हुआ था, उसके भाव शुद्ध थे। इस कारण से वह आराधक [illegible] है, विराधक नहीं।

छेदनगति, उपपातगति, विहायोगति *।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नम्बर ७६)

श्री भगवतीजी सूत्र के आठवें शतक के आठवें उद्देशे में 'प्रत्यनीक' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! गुरु आसरी कितने प्रत्यनीक (द्वेषी-विरोधी-निन्दा करने वाले) कहे गये हैं ? हे गौतम ! गुरु आसरी तीन प्रत्यनीक कहे गये हैं—

१—आचार्य का प्रत्यनीक, २ उपाध्याय का प्रत्यनीक, ३ स्थविर का प्रत्यनीक।

२—अहो भगवान् ! गति आसरी (अपेक्षा) कितने प्रत्यनीक कहे गये हैं ? हे गौतम ! गति आसरी तीन प्रत्यनीक कहे गये हैं—१ इहलोक प्रत्यनीक (इन्द्रियादि से प्रतिकूल अज्ञान के न करने वाला), २ परलोक प्रत्यनीक (इन्द्रियों के विषय भोगों में तल्लीन रहने वाला), ३ उभयलोक प्रत्यनीक (चोरी आदि द्वारा इन्द्रियों के विषय भोगों में तल्लीन रहने वाला)।

३—अहो भगवान् ! समूह आसरी कितने प्रत्यनीक कहे गये हैं ? हे गौतम ! समूह आसरी तीन प्रत्यनीक कहे गये हैं—१ कुल (एक गुरु के शिष्य) का प्रत्यनीक, २ गण (बहुत गुरुओं के शिष्य) का प्रत्यनीक, ३ संघ (साधु साध्वी श्रावक श्राविका) का प्रत्यनीक

---

* श्री पन्नवणा सूत्र के थोकड़ा के दूसरे भाग के पृष्ठ ४१ से ४ में (सोलहवें प्रयोगपद में) गतिप्रपात का विस्तार है।

४—अहो भगवान् ! अनुकम्पा आसरी कितने प्रत्यनीक कहे गये हैं ? हे गौतम ! अनुकम्पा आसरी तीन प्रत्यनीक कहे गये हैं-१ तपस्वी का प्रत्यनीक, २ ग्लान (बीमार साधु) का प्रत्यनीक, ३ शैक्ष (नवदीक्षित साधु) का प्रत्यनीक।

५—अहो भगवान् ! श्रुत आसरी कितने प्रत्यनीक कहे गये हैं? हे गौतम ! श्रुत आसरी तीन प्रत्यनीक कहे गये हैं-१ सूत्र का प्रत्यनीक, २ अर्थ का प्रत्यनीक, ३ तदुभय (सूत्र अर्थ दोनों) का प्रत्यनीक।

६—अहो भगवान् ! भाव आसरी कितने प्रत्यनीक कहे गये हैं ? हे गौतम ! भाव आसरी तीन प्रत्यनीक कहे गये हैं—१ ज्ञानप्रत्यनीक, २ दर्शन प्रत्यनीक, ३ चारित्रप्रत्यनीक।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नम्बर ८०)

श्री भगवतीजी सूत्र के आठवें शतक के आठवें उद्देशे में 'व्यवहार' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! व्यवहार कितने प्रकार के कहे गये हैं ? हे गौतम ! * व्यवहार पांच प्रकार के कहे गये हैं–१ आगम

* मोक्षाभिलाषी जीवों की प्रवृत्ति और निवृत्ति को तथा प्रवृत्ति निवृत्ति के ज्ञान को व्यवहार कहते हैं।

१—आगम व्यवहार—केवलज्ञान, मनःपर्ययज्ञान, अवधिज्ञान, चौदह पूर्व, और दस पूर्व का ज्ञान आगम कहलाता है। आगमज्ञान से चलाई हुई प्रवृत्ति निवृत्तिको आगमव्यवहार कहते हैं।

२—श्रुत व्यवहार—(सूत्र व्यवहार) आचार कल्प आदि श्रुतज्ञान

छेदनगति, उपपातगति, विहायोगति * ।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नम्बर ५६)

श्री भगवतीजी सूत्र के आठवें शतक के आठवें उद्देशे में 'प्रत्यनीक' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! गुरु आसरी कितने प्रत्यनीक (द्वेषी-विरोधी-निन्दा करने वाले) कहे गये हैं ? हे गौतम ! गुरु आसरी तीन प्रत्यनीक कहे गये हैं—

१—आचार्य का प्रत्यनीक, २ उपाध्याय का प्रत्यनीक, ३ स्थविर का प्रत्यनीक ।

२—अहो भगवान् ! गति आसरी (अपेक्षा) कितने प्रत्यनीक कहे गये हैं ? हे गौतम ! गति आसरी तीन प्रत्यनीक कहे गये हैं—१ इहलोक प्रत्यनीक (इन्द्रियादि से प्रतिकूल अज्ञान के नष्ट करने वाला), २ परलोक प्रत्यनीक (इन्द्रियों के विषय भोगों में तल्लीन रहने वाला), ३ उभयलोक प्रत्यनीक (चोरी आदि द्वारा इन्द्रियों के विषय भोगों में तल्लीन रहने वाला) ।

३—अहो भगवान् ! समूह आसरी कितने प्रत्यनीक कहे गये हैं ? हे गौतम ! समूह आसरी तीन प्रत्यनीक कहे गये हैं—१ कुल (एक गुरु के शिष्य) का प्रत्यनीक, २ गण (बहुत गुरुओं के शिष्य) का प्रत्यनीक, ३ संघ (साधु साध्वी श्रावक श्राविका) का प्रत्यनीक

* श्री पन्नवणा सूत्र के थोकड़ा के दूसरे भाग के पृष्ठ ४१ से ४... में (सोलहवें प्रयोगपद में) गतिप्रपात का विस्तार है ।

न हो तो धारणा से व्यवहार चलाना चाहिए। धारणा व्यवहार न हो तो जीत व्यवहार से व्यवहार चलाना चाहिए।

इन पांच व्यवहारों से उचित प्रवृत्ति और पापसे निवृत्ति करता और कराता हुआ साधु भगवान् की आज्ञा का आराधक होता है।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नम्बर ८१)

श्री भगवतीजी सूत्र के आठवें शतक के आठवें उद्देशे में 'ईरियावही बन्ध' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! बन्ध कितने प्रकार का है ? हे गौतम ! बन्ध दो प्रकार का है–ईरियावही बन्ध और साम्परायिक बन्ध।

२—अहो भगवान् ! क्या ईरियावही बन्ध नारकी, तिर्यंच तिर्यंचणी, मनुष्य मनुष्यणी (मनुष्यस्त्री), देवता देवाङ्गना (देवी) बान्धती है ? हे गौतम ! * पूर्व प्रतिपन्न आसरी मनुष्य मनुष्यणी बान्धती है, बाकी ५ नहीं बान्धते हैं। ×

---

* जिसने पहले ईर्यापथिक कर्म का बन्ध किया हो उसको पूर्व प्रतिपन्न कहते हैं। अर्थात् जो ईर्यापथिक कर्म बन्ध के दूसरे तीसरे आदि समय में वर्तमान हो ऐसे बहुत पुरुष और स्त्रियाँ होती हैं इसके लिए इसका भांगा नहीं बनता, क्योंकि दोनों प्रकार के केवली (पुरुष केवली और स्त्री केवली) सदा होते हैं। ईर्यापथिक कर्म के बन्धक वीतराग-उपशान्त, क्षीणमोह और सयोगी केवली गुणस्थान में रहने वाले जीव होते हैं।

× जो जीव ईर्यापथिक बन्ध के प्रथम समय में वर्तमान होते हैं, उनको प्रतिपद्यमान कहते हैं। इनका विरह हो सकता है। इसलिए इनके असंजोगी ४ और द्विसंजोगी ४ ये ८ भांगे होते हैं।

व्यवहार, २ श्रुत व्यवहार (सूत्र व्यवहार), ३ आज्ञा व्यवहार, ४ धारणा व्यवहार, ५ जीत व्यवहार ।

इन पांच व्यवहारों में से जिसके पास आगमज्ञान हो उस को आगमज्ञान से व्यवहार चलाना चाहिये, वहाँ शेष ४ व्यवहारों की जरूरत नहीं । जिसके पास आगमज्ञान न हो तो उसे श्रुत (सूत्र) से व्यवहार चलाना चाहिये, वहाँ शेष तीन व्यवहारों की जरूरत नहीं । श्रुत (सूत्र) न हो तो आज्ञा से व्यवहार चलाना चाहिए, वहाँ शेष दो की जरूरत नहीं। आज्ञा व्यवहार

कहलाता है । श्रुतज्ञान से चलाई हुई प्रवृत्ति निवृत्ति को श्रुत व्यवहार कहते हैं ।

३—आज्ञा व्यवहार—अतिचारों की आलोचना करने के लिये किसी गीतार्थ साधुने अपने अगीतार्थ शिष्य के साथ दूसरे देश में रहे हुए गीतार्थ साधु के पास गूढ अर्थ वाले पद भेजे । उन गूढ अर्थ वाले पदों को समझ कर उस गीतार्थ साधु ने वापिस गूढ अर्थ वाले पदों में अतिचारों की शुद्धि के लिए प्रायश्चित्त भेजा । इसको आज्ञाव्यवहार कहते हैं ।

४—धारणा व्यवहार--द्रव्य क्षेत्र काल भाव का विचार करके गीतार्थ साधु ने जिस अपराध में जो प्रायश्चित्त दिया हो उसकी धारणा से वैसे ही अपराध में उसी प्रकार का प्रायश्चित्त देना धारणा व्यवहार कहलाता है । अथवा कोई साधु सब छेदसूत्र नहीं सीख सकता हो उसे गुरु महाराज जो प्रायश्चित्त पद सिखावें, उनको धारण करना धारणा व्यवहार कहलाता है ।

५—जीत व्यवहार—द्रव्य क्षेत्र काल भाव की अपेक्षा शारीरिक बल धैर्य आदि की हानि का विचार कर जो प्रायश्चित्त दिया जाता है वह जीत व्यवहार कहलाता है अथवा गीतार्थ साधु मिल कर जो मर्यादा बांधते हैं वह जीत व्यवहार कहलाता है।

(६) नपुंसक पच्छाकडा बहुत। दो संजोगी १२—(१) स्त्रीपच्छाकडा एक पुरुष पच्छाकडा एक, (२) स्त्रीपच्छाकडा एक पुरुषपच्छाकडा बहुत, (३) स्त्रीपच्छाकडा बहुत पुरुषपच्छाकडा एक, (४) स्त्रीपच्छाकडा बहुत पुरुषपच्छाकडा बहुत। (५-१२) जिस तरह ४ भांगे स्त्रीपच्छाकडा पुरुषपच्छाकडा के कहे हैं, उसीतरह ४ भांगे स्त्रीपच्छाकडा नपुंसक पच्छाकडा के और ४ भांगे पुरुषपच्छाकडा नपुंसक पच्छाकडा के कह देने चाहिए। तीनसंजोगी ८ भांगे—आंक १११, ११३, १३१, १३३, ३११, ३१३, ३३१, ३३३, । जैसे—(१) स्त्रीपच्छाकडा एक, पुरुषपच्छाकडा एक, नपुंसक पच्छाकडा एक। इसी तरह शेष ७ भांगे आंक के अनुसार बोल देना चाहिए। जहाँ १ का आंक है वहाँ एक कहना चाहिए और जहाँ ३ का आंक है वहाँ 'बहुत' कहना चाहिए।

४—अहो भगवान्! क्या जीवने इरियावही बन्ध—(१) बांधा, बांधता है, बांधेगा, (२) बांधा, बांधता है, नहीं बांधेगा, (३) बांधा, नहीं बांधता है, बांधेगा, (४) बांधा, नहीं बांधता है, नहीं बांधेगा, (५) नहीं बांधा, बांधता है, बांधेगा, (६) नहीं बांधा, बांधता है, नहीं बांधेगा, (७) नहीं बांधा, नहीं बांधता है, बांधेगा, (८) नहीं बांधा, नहीं बांधता है, नहीं बांधेगा? हे गौतम! एक भव आसरी भांगा पावे ७ छठा भांगा टला, बहुत भाव आसरी भांगा पावे ८*।

* बहुत भव आसरी—(१) पहला भांगा—बांधा था, बांधता है, बांधेगा—उस जीव में पाया जाता है जिसने गत काल (पूर्व भव) में उप-

प्रतिपद्यमान आसरी मनुष्य मनुष्यणी बान्धते हैं उसके ८ भांगे होते हैं—असंजोगी ४, दोसंजोगी ४। (१) मनुष्य एक, (२) मनुष्यणी एक, (३) मनुष्य बहुत, (४) मनुष्यणी बहुत, (५) मनुष्य एक मनुष्यणी एक, (६) मनुष्य एक, मनुष्यणी बहुत, (७) मनुष्य बहुत, मनुष्यणी एक, (८) मनुष्य बहुत मनुष्यणी बहुत।

३—अहो भगवान्! ईर्यापथिक कर्मको क्या स्त्री बान्धती है, या पुरुष बान्धता है, या नपुंसक बान्धता है, या बहुत स्त्रियाँ बांधती हैं या बहुत पुरुष बान्धते हैं, या बहुत नपुंसक बान्धते हैं, या नोस्त्री नोपुरुष नोनपुंसक बान्धता है? हे गौतम! स्त्री नहीं बान्धती, पुरुष नहीं बान्धता, नपुंसक नहीं बान्धता, बहुत स्त्रियाँ नहीं बान्धती, बहुत पुरुष नहीं बान्धते, बहुत नपुंसक नहीं बांधते, नोस्त्री नोपुरुष नोनपुंसक बांधता है। पूर्व प्रतिपन्न आसरी वेद-रहित (अवेदी) बहुत जीव बांधते हैं। वर्तमान प्रतिपन्न (प्रति-पद्यमान) आसरी वेदरहित एक जीव तथा बहुत जीव बांधते हैं। इसके (प्रतिपद्यमानके) २६ भांगे होते हैं—असंजोगी ६, दो संजोगी १२, तीन संजोगी ८। असंजोगी भांगा ६ इस प्रकार हैं-(१) स्त्रीपच्छाकडा एक, (२) पुरुषपच्छाकडा एक, (३) नपुंसक पच्छा-कडा एक, (४) पुरुषपच्छाकडा बहुत, (५) स्त्रीपच्छाकडा बहुत,

---

*जो जीव गत काल में स्त्री था, अब वर्तमान काल में अवेदी हो गया है, उसे स्त्रीपच्छाकडा कहते हैं। इसी तरह पुरुषपच्छाकडा और नपुंसकपच्छाकडा भी जान लेना चाहिए।

समय बाकी रहते (अन्तिम समय में) पाया जाता है तीसरा भांगा उपशम श्रेणी से गिरे हुये (पडिवाई) में पाया जाता है। चौथा भांगा चौदहवें गुणस्थान के पहले समय में पाया जाता है। पाँचवां भांगा ग्यारहवें या बारहवें गुणस्थान के पहले समय में पाया जाता है। छठा भांगा शून्य याने कहीं नहीं पाया जाता। सातवां भांगा दसवें गुणस्थान के अन्तिम समय में पाया जाता है। आठवां भांगा अभव्य आदि में पाया जाता है।

५—अहो भगवान् ! क्या जीव इरियावही बन्ध अणाइया अपज्जवसिया (अनादि अनन्त) बांधता है, (२) अणाइया सपज्जवसिया (अनादि सान्त) बांधता है, (३) साइया अपज्जवसिया (सादि अनन्त) बांधता है, (४) साइया सपज्जवसिया (सादि सान्त) बांधता है ? हे गौतम ! साइया सपज्जवसिया बांधता है बाकी तीन (अणाइया अपज्जवसिया, अणाइया सपज्जवसिया, साइया अपज्जवसिया) नहीं बान्धता।

६--अहो भगवान् ! क्या इरियावहीबन्ध देश से देश बांधता है, देश से सर्व बांधता है, सर्व से देश बांधता है, सर्व से सर्व बान्धता है ? हे गौतम ! देश से देश नहीं बांधता, देश से सर्व नहीं बांधता, सर्व से देश नहीं बांधता, किन्तु सर्व से सर्व

(८) आठवां भांगा—नहीं बांधा था, नहीं बांधता है, नहीं बांधेगा—अभवी जीव में पाया जाता है क्योंकि उसने पूर्वभव में नहीं बांधा था। वर्तमान भव में नहीं बांधता है और आगामी भव में नहीं बांधेगा।

एक भव आसरी पहला भांगा तेरहवें गुणस्थान में दो समय बाकी रहते पाया जाता है। दूसरा भांगा तेरहवें गुणस्थान में एक

शम श्रेणी की थी, उस में बांधा था, वर्तमान में उपशम श्रेणी में बांधता है और आगामी भव में श्रेणी करेगा उसमें बांधेगा।

(२) दूसरा भांगा–बांधा था, बांधता है, नहीं बांधेगा–उस जीव में पाया जाता है जिसने पूर्व भव में उपशम श्रेणी की थी उसमें बांधा था, वर्तमान में क्षपक श्रेणी में बांधता है, और फिर मोक्ष चला जायगा, इसलिए आगामी काल में नहीं बांधेगा।

(३) तीसरा भांगा–बांधा था, नहीं बांधता है, बांधेगा–उस जीव में पाया जाता है, जिसने पूर्व भव में उपशम श्रेणी की थी उसमें बांधा था। वर्तमान भव में श्रेणी नहीं करता है, इसलिये नहीं बांधता है, आगामी भव में उपशमश्रेणी या क्षपकश्रेणी करेगा इसलिए बांधेगा।

(४) चौथा भांगा–बांधा था, नहीं बांधता है, नहीं बांधेगा–उस जीव में पाया जाता है जो वर्तमान में चौदहवें गुणस्थान में है, उसने पूर्वभव में बांधा था, वर्तमान में नहीं बांधता है और आगामी काल में नहीं बांधेगा।

(५) पांचवां भांगा–नहीं बांधा था, बांधता है, बांधेगा–उस जीव में पाया जाता है जिसने पूर्व भव में नहीं बांधा, वर्तमान भव में उपशम श्रेणी में बांधता है, आगामी भव में उपशम श्रेणी या क्षपकश्रेणी में बांधेगा।

(६) छठा भांगा–नहीं बांधा था, बांधता है, नहीं बांधेगा–उस जीव में पाया जाता है जिसने पूर्व भव में नहीं बांधा था, वर्तमान भव में क्षपकश्रेणी में बांधता है, फिर मोक्ष चला जायगा इसलिए आगामी काल में नहीं बांधेगा।

(७) सातवां भांगा–नहीं बांधा था, नहीं बांधता है, बांधेगा–उस जीव में पाया जाता है जिसने पूर्वभव में नहीं बांधा था, वर्तमान भव में नहीं बांधता है, आगामी भव में उपशम श्रेणी या क्षपक श्रेणी में बांधेगा।

कड़ा बान्धता है या बहुत स्त्री पच्छाकड़ा बाँधते हैं या बहुत पुरुष पच्छाकड़ा बांधते हैं या बहुत नपुंसक पच्छाकड़ा बाँधते हैं? हे गौतम! स्त्री पच्छाकड़ा बाँधता है, पुरुष पच्छाकड़ा बाँधता है नपुंसक पच्छाकड़ा बांधता है, बहुत स्त्री पच्छाकड़ा बांधते हैं, बहुत पुरुष पच्छाकड़ा बांधते हैं, बहुत नपुंसक पच्छाकड़ा बांधते हैं जाव २६ भांगे इरियावही बंध के माफक कह देना।

४—अहो भगवान्! क्या जीव ने सम्पराय कर्म (१) बांधा है, बांधता है, बांधेगा? (२) बांधा है, बांधता है, नहीं बांधेगा? (३) बांधा है, नहीं बांधता है, बांधेगा? (४) बांधा है, नहीं बांधता है, नहीं बांधेगा? हे गौतम! जीव सम्पराय कर्म बांधा है, बांधता है, बांधेगा अभवी जीव की अपेक्षा। (२) बांधा है, बांधता है, नहीं बांधेगा भवी जीवकी अपेक्षा। (३) बांधा है, नहीं बांधता है, बांधेगा उपशम श्रेणी की अपेक्षा। (४) बांधा है नहीं बांधता है, नहीं बांधेगा क्षपक श्रेणी की अपेक्षा।

५—अहो भगवान्! क्या सम्पराय कर्म साइया सपज्जवसिया (आदि अन्त सहित) बांधता है? (२) साइया अपज्जवसिया (आदि सहित अन्त रहित) बांधता है (३) अणाइया सपज्जवसिया (अनादि सान्त) बांधता है? (४) अणाइया अपज्जवसिया (अनादि अनन्त) बांधता है? हे गौतम! साइया अपज्जवसिया (सादि अनन्त) को छोड़ कर बाकी तीन भांगे बान्धता है।

बांधता है (जीव का आत्म प्रदेश भी सर्व इरियावाह कर्म भी सर्व) ।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नम्बर ८२)

श्री भगवतीजी सूत्र के आठवें शतक के आठवें उद्देशे में 'सम्पराय बन्ध' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं:—

१—अहो भगवान् ! सम्पराय कर्म कौन बाँधता है ? हे गौतम ! नारकी तिर्यंच, तिर्यंचणी, मनुष्य, मनुष्यणी, देवता, देवी सम्पराय कर्म बाँधते हैं ?

२—अहो भगवान् ! सम्पराय बन्ध क्या स्त्री बान्धती है या पुरुष बाँधता है या नपुंसक बान्धता है या बहुत स्त्रियें बान्धती हैं या बहुत पुरुष बान्धते हैं या बहुत नपुंसक बान्धते हैं या नोस्त्री नोपुरुष नोनपुंसक बान्धते हैं ? हे गौतम स्त्री भी बान्धती है, पुरुष भी बान्धता है, नपुंसक भी बान्धता है, बहुत स्त्रियां भी बान्धती हैं, बहुत पुरुष भी बान्धते हैं बहुत नपुंसक भी बान्धते हैं। * अवेदी एक जीव भी बान्धता है बहुत जीव भी बान्धते हैं।

३—अहो भगवान् ! अवेदी बान्धते हैं तो स्त्री पच्छाकड़ा बान्धता है, या पुरुष पच्छाकड़ा बान्धता है या नपुंसक पच्छा

* यहाँ एक वचन बहुवचन जो कहा है वह पूछने वाले की अपेक्षा से है। वैसे सभी सकषायी जीव संपराय कर्म बान्धते ही हैं। म... केवली गम्य।

८—स्त्री परीषह—स्त्रियों से होने वाला कष्ट।

९—चर्या परीषह—चलने फिरने से या विहार में होने वाला कष्ट।

१०—निसीहिया परीषह—स्वाध्याय आदि करने की भूमिमें किसी प्रकार का उपद्रव होने से होने वाला कष्ट। अथवा बैठे रहने में होने वाला कष्ट।

११—शय्या परीषह—रहने के स्थान अथवा संस्तारक (संथारा) की प्रतिकूलता से होने वाला कष्ट।

१२—आक्रोश परीषह—कठोर वचनों से होने वाला कष्ट।

१३—वध परीषह—लकड़ी आदि से पीटा जाने पर होने वाला कष्ट

१४—याचना परीषह—भिक्षा मांगने में होने वाला कष्ट।

१५—अलाभ परीषह—भिक्षा आदि के न मिलने पर होने वाला कष्ट।

१६—रोग परीषह—रोग के कारण होने वाला कष्ट।

१७—तृण स्पर्श परीषह—घास पर सोते समय शरीर में चुभने से या मार्ग में चलते समय तृण आदि पैर में चुभ जाने से होने वाला कष्ट।

१८—जल्ल परीषह—शरीर और वस्त्र आदि में चाहे जितना मैल लगे किन्तु उद्वेग को प्राप्त न होना तथा स्नान की इच्छा न करना।

१९—सत्कार पुरस्कार परीषह—जनता द्वारा मान पूजा मिलने पर हर्षित न होना, मान पूजा न मिलने पर खेदित न होना।

२०—प्रज्ञा परीषह—प्रज्ञा-बुद्धि का गर्व न करना।

२१—अज्ञान परीषह—विशिष्ट बुद्धि न होने पर खेदित न होना।

२२—दर्शन परीषह—दूसरे मत वालों की ऋद्धि तथा आडम्बर को देख कर सम्यक्त्व से विचलित न होना।

६—अहो भगवान् ! क्या सम्परायबन्ध देश से देश बान्धता है ? (२) देश से सर्व बांधता है ? (३) सर्व से देश बान्धता है ? (४) सर्व से सर्व बान्धता है ? हे गौतम ! सर्व से सर्व बान्धता है, बाकी तीन भांगे नहीं बांधता ।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नम्बर ८३)

श्री भगवतीजी सूत्र के आठवें शतक के आठवें उद्देशे में 'कर्म और परीषह' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! कर्म प्रकृतियाँ कितनी हैं ? हे गौतम ! कर्म प्रकृतियाँ आठ हैं—१ ज्ञानावरणीय, २ दर्शनावरणीय, ३ वेदनीय, ४ मोहनीय, ५ आयु, ६ नाम, ७ गोत्र, ८ अन्तराय ।

२—अहो भगवान् ! परीषह कितने हैं ? हे गौतम ! परीषह २२ हैं—* १ क्षुधा परीषह, २ पिपासा (पिपासा) परीषह,

---

* १—क्षुधा परीषह—भूख का परीषह ।

२—पिपासा परीषह—प्यास का परीषह ।

३—शीत परीषह—ठण्ड का परीषह ।

४—उष्ण परीषह—गरमी का परीषह ।

५—दंशमशक परीषह—डाँस, मच्छर, खटमल आदि का परीषह

६—अचेल परीषह—नग्नता का परीषह अथवा प्रमाणोपेत (प्रमाण युक्त) वस्त्रों का परीषह ।

७—अरति परीषह—संयम में अरति-अरुचि उत्पन्न होने से आर्त ध्यान आजाता है उससे होने वाला कष्ट (परीषह) ।

[शी]त परीषह, ४ उष्ण परीषह, ५ दंशमशक परीषह, ६ अचेल

[७]—स्त्री परीषह—स्त्रियों से होने वाला कष्ट।
८—स्त्री परीषह—स्त्रियों से होने वाला कष्ट।
९—चर्या परीषह—चलने फिरने से या विहार में होने वाला कष्ट।
१०—निसीहिया परीषह—स्वाध्याय आदि करने की भूमिमें किसी प्रकार का उपद्रव होने से होने वाला कष्ट। अथवा बैठे रहने में होने वाला कष्ट।
११—शय्या परीषह—रहने के स्थान अथवा संस्तारक (संथारा) की प्रतिकूलता से होने वाला कष्ट।
१२—आक्रोश परीषह—कठोर वचनों से होने वाला कष्ट।
१३—वध परीषह—लकड़ी आदि से पीटा जाने पर होने वाला कष्ट
१४—याचना परीषह—भिक्षा मांगने में होने वाला कष्ट।
१५—अलाभ परीषह—भिक्षा आदि के न मिलने पर होने वाला कष्ट।
१६—रोग परीषह—रोग के कारण होने वाला कष्ट।
१७—तृण स्पर्श परीषह—घास पर सोते समय शरीर में चुभने से या मार्ग में चलने समय तृण आदि पैर में चुभ जाने से होने वाला कष्ट।
१८—जल्ल परीषह—शरीर और वस्त्र आदि में चाहे जितना मैल लगे किन्तु उद्वेग को प्राप्त न होना तथा स्नान की इच्छा न करना।
१९—सत्कार पुरस्कार परीषह—जनता द्वारा मान पूजा मिलने पर हर्षित न होना, मान पूजा न मिलने पर खेदित न होना।
२०—प्रज्ञा परीषह—प्रज्ञा-बुद्धि का गर्व न करना।
२१—अज्ञान परीषह—विशिष्ट बुद्धि न होने पर खेदित न होना।
२२—दर्शन परीषह—दूसरे मत वालों की ऋद्धि तथा आड॰ को देख कर सम्यक्त्व से विचलित न होना

परीषह, ७ अरति परीषह, ८ स्त्री परीषह, ९ चर्या परीषह, १० निसीहिया परीषह, ११ शय्या परीषह, १२ आक्रोश परीषह १३ वध परीषह, १४ याचना परीषह, १५ अलाभ परीषह, १६ रोग परीषह, १७ तृणस्पर्श परीषह, १८ जल्ल परीषह, १९ सत्कार पुरस्कार परीषह, २० प्रज्ञा परीषह, २१ अज्ञान परीषह, २२ दर्शन परीषह।

२—अहो भगवान्! कितने कर्मों के उदय से परीषह आते हैं? हे गौतम! ज्ञानावरणीय, वेदनीय, मोहनीय, अन्तराय, इन चार कर्मों के उदय से परीषह आते हैं। ज्ञानावरणीय के उदय से दो परीषह (प्रज्ञापरीषह और अज्ञान परीषह) आते हैं। वेदनीय के उदय से ११ परीषह (क्षुधा परीषह, पिपासा परीषह, शीत परीषह, उष्ण परीषह, दंशमशक परीषह, चर्या परीषह, शय्या परीषह, वध परीषह, रोग परीषह, तृणस्पर्श परीषह, जल्ल परीषह) आते हैं। मोहनीय कर्म के उदय से ८ परीषह आते हैं (दर्शन मोहनीय के उदय से एक-दर्शन परीषह। चारित्र मोहनीय के उदय से सात परीषह-अचेल परीषह, अरति परीषह, स्त्री परीषह, निसीहिया परीषह, आक्रोश परीषह, याचना परीषह, सत्कार पुरस्कार परीषह) अन्तराय कर्म के उदय से एक परीषह (अलाभ परीषह) आता है।

३—अहो भगवान् एक जीव के एक साथ कितने परीषह होते हैं? हे गौतम! सात कर्म (तीसरा, आठवां, नवमा गुणस्थान) आठ कर्म (तीसरे को छोड़ कर सात गुणस्थान

परीपह, ७ अरति परीपह, ८ स्त्री परीपह, ६ चर्या परीपह, १० निर्षाद्दिया परीपह, ११ शय्या परीपह, १२ आक्रोश परीपह, १३ वध परीपह, १४ याचना परीपह, १५ अलाभ परीपह, १६ रोग परीपह, १७ तृणस्पर्श परीपह, १८ जल्ल परीपह, १६ सत्कार पुरस्कार परीपह, २० प्रज्ञा परीपह, २१ अज्ञान परीपह, २२ दर्शन परीपह।

२—अहो भगवान्! कितने कर्मों के उदय से परीपह आते हैं? हे गौतम! ज्ञानावरणीय, वेदनीय, मोहनीय, अन्तराय, इन चार कर्मों के उदय से परीपह आते हैं। ज्ञानावरणीय के उदय से दो परीपह (प्रज्ञापरीपह और अज्ञान परीपह) आते हैं। वेदनीय के उदय से ११ परीपह (क्षुधा परीपह, पिपासा परीपह, शीत परीपह, उष्ण परीपह, दंशमशक परीपह, चर्या परीपह, शय्या परीपह, वध परीपह, रोग परीपह, तृणस्पर्श परीपह, जल्ल परीपह) आते हैं। मोहनीय कर्म के उदय से ८ परीपह आते हैं (दर्शन मोहनीय के उदय से एक-दर्शन परीपह। चारित्र मोहनीय के उदय से सात परीपह—अचेल परीपह, अरति परीपह, स्त्री परीपह, निषीद्दिया परीपह, आक्रोश परीपह, याचना परीपह, सत्कार पुरस्कार परीपह) अन्तराय कर्म के उदय से एक परीपह (अलाभ परीपह) आता है।

३—अहो भगवान् एक जीव के एक साथ कितने परीपह होते हैं? हे गौतम! सात कर्म (तीसरा, आठवां, नवमा गुणस्थानवर्ती) आठ कर्म (तीसरे को छोड़ कर सात गुणस्थान

तक) बांधने वाले जीव के २२ परीषह होते हैं परन्तु वह एक समय में २० परीषह वेदता है। शीत, उष्ण दोनों परीषहों में से एक वेदता है, चर्या, निसीहिया दोनों परीषहों में से एक वेदता है। छह कर्मों के (आयुष्य, मोह वर्ज कर) बन्धक सरागी छद्मस्थ दसवें गुणस्थान में तथा एक कर्म के (वेदनीय) बन्धक वीतरागी छद्मस्थ ग्यारहवें बारहवें गुणस्थान में १४ परीषह (२२ परीषहों में से मोहनीय कर्म के ८ परीषहों को छोड़ कर) होते हैं, किन्तु एक साथ १२ परीषह वेदते हैं (शीत, उष्ण में से एक और चर्या, शय्या में से एक वेदते हैं)। तेरहवें गुणस्थान में एक कर्म के बन्धक को और चौदहवें गुणस्थान में अबन्धक को वेदनीय के ११ परीषह होते हैं, एक साथ ९ वेदते हैं (शीत, उष्ण में से एक और चर्या, शय्या में से एक वेदते हैं)।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नम्बर ८४)

श्री भगवतीजी सूत्र के आठवें शतक के नवमें उद्देशे में बन्ध (प्रयोग बन्ध, विस्रसा बन्ध) का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं।

१ अहो भगवान् ! बन्ध कितने प्रकार के हैं ? हे गौतम ! बन्ध दो प्रकार के हैं-* प्रयोगबन्ध और विस्रसाबन्ध (वीससाबन्ध)।

---

*जो मन वचन काया के योगों की प्रवृत्ति से बन्धता है उसे प्रयोग

२ अहो भगवान् ! विस्रसा बन्ध के कितने भेद हैं ? हे गौतम ! विस्रसा बन्ध के दो भेद हैं–सादि विस्रसा बन्ध, और अनादि विस्रसाबन्ध ।

३–अहो भगवान् ! अनादि विस्रसाबन्ध के कितने भेद हैं? हे गौतम ! अनादि विस्रसाबन्ध के ३ भेद हैं–धर्मास्तिकाय अन्योन्य अनादि विस्रसा बन्ध, अधर्मास्तिकाय अन्योन्य अनादि विस्रसा बन्ध, आकाशास्तिकाय अन्योन्य अनादि विस्रसा बंध। ये तीनों देश बंध हैं, सर्व बन्ध नहीं। इन तीनों की स्थिति सव्वद्धा (सदा काल) है।

४–अहो भगवान् ! सादि विस्रसाबन्ध के कितने भेद हैं? हे गौतम ! तीन भेद हैं–*बन्धनप्रत्ययिक, भाजनप्रत्ययिक और परिणाम प्रत्ययिक ।

बन्ध कहते हैं ।

जो स्वाभाविक रूप से बन्धता है उसको विस्रसा (वीससा) बन्ध कहते हैं ।

* स्निग्धता आदि गुणों से परमाणुओं का जो बन्ध होता है उसे बन्धन प्रत्ययिक बन्ध कहते हैं ।

(पन्नवणा का चौदहवां भाग इतना पद १३वें से पृष्ठ ११-२० के देखिये)

भाजन यानी आधार के निमित्त से जो बन्ध होता है उसे भाजन प्रत्ययिक बन्ध कहते हैं । जैसे–घड़े में रखी हुई पुरानी मदिरा गाढ़ी हो जाती है, पुराना गुड़ या पुराने चांवलों का पिण्ड बन्ध जाता है, यह भाजन प्रत्ययिक बन्ध कहलाता है ।

परिणाम यानी रूपान्तर जस के निमित्त से जो बन्ध होता है उसको परिणाम प्रत्ययिक बन्ध कहते हैं ।

बन्धनप्रत्ययिक बन्ध एक परमाणु से लेकर अनन्तप्रदेशी तक जघन्य गुण वर्जकर निद्ध निद्ध (स्निग्ध स्निग्ध) का विषम बन्ध होता है समबन्ध नहीं होता। लुक्ख लुक्ख (रूक्ष रूक्ष) का जघन्य गुण वर्ज कर विषम बन्ध होता है, समबन्ध नहीं होता। एक गुण वर्ज कर निद्ध लुक्ख का समबंध और विषमबंध दोनों होते हैं।

भाजनप्रत्ययिक (बर्तन सम्बन्धी) बंध—बर्तन में रखी हुई पुरानी मदिरा गाढ़ी पड़ जाती है, पुराना गुड़ चावल आदि का पिण्ड बंध जाता है।

परिणामप्रत्ययिक बन्ध—अभ्र (बादल) अभ्रवृक्ष आदि का परिणाम से बन्ध हो जाता है।

५—अहो भगवान्! इन तीनों बन्धों की स्थिति कितनी है? हे गौतम! बन्धनप्रत्ययिक बंध की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट असंख्यातकाल की। भाजनप्रत्ययिक बंध की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त की, उत्कृष्ट संख्याता काल की। परिणामप्रत्ययिकबंध की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट ६ मास की।

६—अहो भगवान्! प्रयोगबंध के कितने भेद हैं? हे गौतम! तीन भेद हैं— (१) अणाइया अपज्जवसिया (अनादि अनन्त), (२) साइया अपज्जवसिया (सादि अनन्त), (३) साइया सपज्जवसिया (सादि सान्त)। जीव के आठ मध्य-प्रदेशों में से तीन तीन प्रदेशों में अणाइया अपज्जवसिया बंध

है। सिद्ध भगवान् के जीव प्रदेशों का बन्ध साइया अपज्जव-सिया है। साइया सपज्जवसिया के ४ भेद-* १ अल्लावणबंध [आलापन बंध], २ अल्लियावण बंध [आलीन बंध], ३ शरीर बंध, ४ शरीर प्रयोग बंध। घास का भार, लकड़ी का भार आदि को रस्सी आदि से बांधना अलावण बन्ध [आलापन बंध] है। अल्लियावणबंध [आलीन बंध] के ४ भेद-१ लेसणा बंध [श्लेषणाबन्ध], २ उच्चयबंध, ३ समुच्चय बंध, ४ संहनन बन्ध,। मिट्टी, चूना, लाख आदि से लेपन करना श्लेषणाबन्ध है। तृण, काष्ठ, पत्र, भुसा, कचरा आदि के ढेर का उपरा उपरी बन्ध होना उच्चयबन्ध है। कुआ, बावड़ी तालाब घर हाट आदि बंधवाना सो समुच्चय बन्ध है। संहनन बन्ध के दो भेद-देश संहनन बन्ध और सर्व संहनन बन्ध गाड़ी, रथ, पालकी आदि को बांधना देशसंहनन बन्ध है दूध और पानी का शामिल एकमेक हो जाना सर्वसंहनन बंध

---

* आलापन बंध-रस्सी आदि से तृणादि को बांधना आलापन बन्ध है।

आलीनबन्ध-लाख आदि के द्वारा एक पदार्थ का दूसरे पदार्थ के साथ बन्ध होना आलीन बन्ध है। शरीरबन्ध-समुद्घात करते समय विस्तारित और संकोचित जीवप्रदेशों के सम्बन्ध से तैजसादि शरीर प्रदेशों का सम्बन्ध शरीरबन्ध है अथवा समुद्घात करते समय संकुचित हुए आत्मप्रदेशों का सम्बन्ध शरीर बन्ध है।

शरीरप्रयोगबन्ध-औदारिकादि शरीर की प्रवृत्ति से शरीर के पुद्गलों का ग्रहण करने रूप बन्ध है।

। आलापनबन्ध और आलीनबन्ध इन दोनों की स्थिति
न्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट संख्याता काल की है ।
शरीर बंध के २ भेद-पूर्वप्रयोगप्रत्ययिक और प्रत्युत्पन्न
योग प्रत्ययिक । नारकादि संसारी जीव वेदनीय कषायादि
समुद्घात द्वारा तैजस कार्मण शरीर के प्रदेशों को लम्बा चौड़ा
विस्तृत कर पीछा संकोच कर बांधे सो पूर्व प्रयोग प्रत्ययिक शरीर
बंध है । केवली भगवान् के केवली समुद्घात करते हुए पांचवें
समय में तैजस कार्मण शरीर का जो बंध होता है सो प्रत्युत्पन्न-
योगप्रत्ययिक बन्ध है ।

७-अहो भगवान् ! शरीर प्रयोगबन्ध के कितने भेद हैं? हे
गौतम! शरीर प्रयोगबन्ध के ५भेद हैं--१ औदारिक शरीरप्रयोग-
बन्ध, २ वैक्रियशरीरप्रयोग बन्ध, ३ आहारक शरीरप्रयोग-
ध, ४ तैजसशरीर प्रयोग बन्ध, ५ कार्मणशरीर प्रयोग बन्ध ।
सेवं भंते !! सेवं भंते !

(थोकड़ा नम्बर ८५)

श्री भगवतीजी सूत्र के आठवें शतक के नवमें उद्देशे
देशबन्ध सर्वबन्ध' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! औदारिक शरीर कितने बोलों
बंधता है? हे गौतम ! आठ बोलों से बंधता है-१ वीर्य

---

* यथा-हवेली का दृष्टान्त—२ द्रव्य-चूना, ईंट आदि, १ वीर्य
खरीदने में पराक्रम, ३ सयोग सो वस्तु का संयोग मिलाना, ४ योग
कारीगर आदि का व्यापार, ५ कर्म सो शुभ उदय हो तो हवेली

२ सयोग (मन आदि), ३ द्रव्य, ४ प्रमाद, ५ कर्म, ६ योग (काया आदि), ७ भव, ८ आयुष्य।

२—अहो भगवान्! औदारिक शरीर कितने ठिकाने (स्थान में) पाया जाता है? हे गौतम! औदारिक शरीर १२ ठिकाने पाया जाता है–१ समुच्चय जीव, २ समुच्चय एकेन्द्रिय, ३–७ पांच स्थावर (पृथ्वीकाय, अप्काय, तेउकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय), ८–१० तीन विकलेन्द्रिय (बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय), ११ तिर्यञ्च पंचेन्द्रिय, १२ मनुष्य।

३—अहो भगवान्! बारह बोलोंके * सर्वबन्ध की स्थिति कितनी है? हे गौतम! जघन्य उत्कृष्ट एक समय की।

आयुष्य सो हवेली बनाने वाले का आयुष्य पूरा हो तो हवेली पूरी होवे, ७ भव सो जिसमें जैसी शक्ति होती है वैसी हवेली बनाता है किन्तु मनुष्य बिना हवेली बन नहीं सकती। ८ काल सो तीसरे चौथे पांचवें आरे में हवेली बनती है। अब ये ८ बोल शरीर पर उतारे जाते हैं— १ द्रव्य सो पुद्गल, २ वीर्य सो इकट्ठा करना, ३ सयोग सो मन के परिणाम सहित, ४ योग सो काया का व्यापार, ५ कर्म सो जैसा शुभाशुभ कर्म किया हो वैसा शुभाशुभ शरीर बनता है। ६ आयुष्य सो यदि आयुष्य लम्बा हो तो शरीर पूरा बनता है, नहीं तो अपर्याप्त अवस्था में ही मरण हो जाता है। ७ भव सो तिर्यंच और मनुष्य के बिना शरीर नहीं बनता। ८ काल सो जो जो काल हो वैसी अवगाहना होती है।

* उत्पन्न होते समय जीव पहले समय जो आहार लेता है उसे सर्वबन्ध कहते हैं। पहले समय के बाद जो आहार लेता है उसे देश बन्ध कहते हैं।

४—अहो भगवान् ! बारह बोलों के देशबन्ध की स्थिति
ितनी है ? हे गौतम ! समुच्चय जीव, तिर्यंच पंचेन्द्रिय और
नुष्य इन तीन बोलों की स्थिति जघन्य १ समय की, उत्कृष्ट
ीन पल्योपम में एक समय ऊणी (कम) । समुच्चय एकेन्द्रिय
ौर वायुकाय की स्थिति जघन्य एक एक समय की उत्कृष्ट
ापनी अपनी स्थिति से एक एक समय ऊणी । चार स्थावर और
ीन विकलेन्द्रिय के देशबन्ध की स्थिति जघन्य एक * खुड्डाग
व (क्षुल्लक भव) में तीन तीन समय ऊणी उत्कृष्ट अपनी
ापनी स्थिति से एक एक समय ऊणी ।

५—अहो भगवान् ! समुच्चय जीव के सर्व बन्धका अन्तर
आन्तरा) कितना है ? हे गौतम ! जघन्य एक खुड्डाग भव में
ीन समय ऊणा, उत्कृष्ट ३३ सागर कोड़ पूर्व से एक समय
ाधिक × ।

६—अहो भगवान् ! समुच्चय जीव के देश बन्ध का

---

* एक अन्तमुर्हूर्त में ६५५३६ खुड्डाग भव (क्षुल्लक भव) होते
। एक श्वासोच्छ्वास में १७ झाझेरा (कुछ ज्यादा) खुड्डाग भव
ोते हैं ।

+ पहला समय तो सर्व बन्ध में रहा । एक समय कम करोड़ पूर्व
ेबन्ध में रहा और ३३ सागर देवता में रहा । देवता से चव कर
ापिस आते हुए दो समय वाटे बहते (विग्रह गति में) लगे । इसप्रकार
र्व बन्धक का अन्तर एक समय अधिक पूर्व कोटि (कोड़ पूर्व) और
३ सागर होता है ।

अन्तर कितना है ?

हे गौतम ! जघन्य एक समय, उत्कृष्ट ३३ सागर में दो समय अधिक * ।

७—अहो भगवान् ! ग्यारह बोलों का (समुच्चय एकेन्द्रिय, पाँच स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय, तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य का) अन्तर कितना है ? हे गौतम ! इन ग्यारह बोलों का अन्तर दो प्रकार का है—सकाय (स्वकाय) आसरी, परकाय आसरी × । सकाय आसरी ग्यारह बोलों के सर्व बन्ध का अन्तर जघन्य एक खुड्डाग भव में तीन समय ऊणा उत्कृष्ट अपनी अपनी स्थिति से एक समय अधिक । सकाय आसरी देशबन्ध का अन्तर ४ बोलों का (समुच्चय एकेन्द्रिय, वायुकाय, तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य का) जघन्य एक समय का उत्कृष्ट अन्तर मुहूर्त का । बाकी ७ बोलों का सकाय आसरी देश बन्ध का अन्तर जघन्य एक समय का उत्कृष्ट तीन समय का । परकाय आसरी ११ बोलों में से समुच्चय एकेन्द्रिय के सर्व बन्ध का अन्तर जघन्य दो खुड्डाग भव में ३ समय ऊणा, देश बन्ध का

* तेतीस सागर देवता में रहा। दो समय वाटे वहते (विग्रह गति में) लगे। एक समय सर्व बन्ध में लगा। इस तरह ३३ सागर में ३ समय अधिक हुए।

× एकेन्द्रिय मर कर वापिस एकेन्द्रिय में उत्पन्न होवे उसे सकाय (स्वकाय) कहते हैं और एकेन्द्रिय मर कर एकेन्द्रिय को छोड़ कर दूसरी काया में उत्पन्न होवे उसे परकाय कहते हैं।

अन्तर जघन्य एक खुड्डाग भव से एक समय अधिक उत्कृष्ट २००० सागर झाझेरा (कुछ अधिक)। वनस्पतिकाय के सर्व बन्ध का अन्तर जघन्य दो खुड्डाग भव में ३ समय ऊणा (कम), देशबंध का अंतर जघन्य एक खुड्डाग भव से एक समय अधिक उत्कृष्ट असंख्यात काल (पुढवी काल)। नव बोलों का (११ बोलों में से समुच्चय एकेंद्रिय और वनस्पति को छोड कर बाकी ९ बोलों का) सर्वबंध का अंतर जघन्य दो खुड्डाग भव में तीन समय ऊणा (कम), उत्कृष्ट अनंत काल (वनस्पति काल) का। देशबंध का अंतर जघन्य एक खुड्डाग भव से एक समय अधिक, उत्कृष्ट अनंत काल (वनस्पति काल) का।

८—अल्पबहुत्व—सब से थोड़े औदारिक शरीर के सर्वबन्धक, उससे अबन्धक विशेषाहिया, उससे देशबन्धक असंख्यातगुणा।

९—अहो भगवान्! वैक्रिय शरीर कितने बोलों से बन्धता है? हे गौतम! ९ बोलों से बन्धता है-आठ बोल तो औदारिक शरीर में कहे सो कह देना और नवमा बोल वैक्रिय लब्धि कहनी।

१०—अहो भगवान्! वैक्रिय शरीर कितने ठिकाणे (स्थान में) पाया जाता है? हे गौतम! छह ठिकाने पाया जाता है–१ समुच्चय जीव, २ नारकी, ३ देवता, ४ वायुकाय, ५ तिर्यंच पंचेन्द्रिय, ६ मनुष्य।

११—अहो भगवान! वैक्रिय शरीर के सर्वबन्ध की स्थिति

अन्तर कितना है ?

हे गौतम ! जघन्य एक समय, उत्कृष्ट ३३ सागर से तीन समय अधिक * ।

७—अहो भगवान्! ग्यारह बोलों का (समुच्चय एकेन्द्रिय, पाँच स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय, तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य का) अन्तर कितना है ? हे गौतम ! इन ग्यारह बोलों का अन्तर दो प्रकार का है—सकाय (स्वकाय) आसरी, परकाय आसरी × । सकाय आसरी ग्यारह बोलों के सर्व बन्ध का अन्तर जघन्य एक खुड्डाग भव में तीन समय ऊणा उत्कृष्ट अपनी अपनी स्थिति से एक समय अधिक । सकाय आसरी देशबन्ध का अन्तर ४ बोलों का (समुच्चय एकेन्द्रिय, वायुकाय, तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य का) जघन्य एक समय का उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त का । बाकी ७ बोलों का सकाय आसरी देश बन्ध का अन्तर जघन्य एक समय का उत्कृष्ट तीन समय का । परकाय आसरी ११ बोलों में से समुच्चय एकेन्द्रिय के सर्व बन्ध का अन्तर जघन्य दो खुड्डाग भव में ३ समय ऊणा, देश बन्ध का

---

* तेतीस सागर देवता में रहा। दो समय वाटे बहते (विग्रह गति में) लगे । एक समय सर्व बन्ध में लगा । इस तरह ३३ सागर से ३ समय अधिक हुए ।

× एकेन्द्रिय मर कर वापिस एकेन्द्रिय में उत्पन्न होवे उसे सकाय (स्वकाय) कहते हैं और एकेन्द्रिय मर कर एकेन्द्रिय को छोड़ कर दूसरी काया में उत्पन्न होवे उसे परकाय कहते हैं ।

अन्तर जघन्य एक खुड्डाग भव से एक समय अधिक उत्कृष्ट २००० सागर झाझेरा (कुछ अधिक)। वनस्पतिकाय के सर्व बन्ध का अन्तर जघन्य दो खुड्डाग भव में ३ समय ऊणा (कम), देशबंध का अंतर जघन्य एक खुड्डाग भव से एक समय अधिक उत्कृष्ट असंख्यात काल (पुढवी काल)। नव बोलों का (११ बोलों में से समुच्चय एकेंद्रिय और वनस्पति को छोड कर बाकी ९ बोलों का) सर्वबंध का अंतर जघन्य दो खुड्डाग भव में तीन समय ऊणा (कम), उत्कृष्ट अनंत काल (वनस्पति काल) का। देशबंध का अंतर जघन्य एक खुड्डाग भव से एक समय अधिक, उत्कृष्ट अनंत काल (वनस्पति काल) का।

८–अल्प बहुत्व—सब से थोड़े औदारिक शरीर के सर्वबन्धक, उससे अबन्धक विशेषाहिया, उससे देशबन्धक असंख्यातगुणा।

९—अहो भगवान्! वैक्रिय शरीर कितने बोलों से बन्धता है? हे गौतम! ९ बोलों से बन्धता है–आठ बोल तो औदारिक शरीर में कहे सो कह देना और नवमा बोल वैक्रिय लब्धि कहनी।

१०–अहो भगवान्! वैक्रिय शरीर कितने ठिकाणे (स्थान में) पाया जाता है? हे गौतम! छह ठिकाने पाया जाता है–१ समुच्चय जीव, २ नारकी, ३ देवता, ४ वायुकाय, ५ तिर्यंच पंचेन्द्रिय, ६ मनुष्य।

११–अहो भगवान! वैक्रिय शरीर के सर्वबन्ध की स्थिति

कितनी है? हे गौतम! समुच्चय जीवमें जघन्य एक समयकी, उत्कृष्ट दो समय की। बाकी ५ बोलों (नारकी, देवता, वायुकाय, तिर्यंच पंचेन्द्रिय, मनुष्य) के सर्वबन्ध की स्थिति जघन्य उत्कृष्ट एक समय की।

१२—अहो भगवान्! वैक्रिय शरीर के देशबन्ध की स्थिति कितनी है? हे गौतम! समुच्चय जीव में जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट ३३ सागर में एक समय ऊणी। वायुकाय, तिर्यंच पंचेंद्रिय के देशबंध की स्थिति जघन्य एक समय की, उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की। नारकी, देवता के वैक्रिय शरीर के देशबन्ध की स्थिति जघन्य १०००० वर्ष में ३ समय ऊणी, उत्कृष्ट ३३ सागर में एक समय ऊणी।

१३—अहो भगवान्! वैक्रिय शरीर के सर्वबन्ध और देशबंध का अंतर कितना है? हे गौतम! समुच्चय जीव में जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट अनंत काल (वनस्पतिकाल) का। वायुकाय का सकाय (अपनी काय, याने वायुकाय) आसरी अंतर जघन्य अंतमुर्हूर्त का, उत्कृष्ट असंख्यात काल (क्षेत्र पल्योपम के असंख्यातवें भाग) का। परकाय (अन्य काय याने वायुकाय के सिवाय दूसरी काय) आसरी जघन्य अन्तर्मुहूर्त का, उत्कृष्ट अनंतकाल (वनस्पति काल) का। तिर्यंच पंचेंद्रिय और मनुष्य का सकाय आसरी सर्वबंध और देशबंध का अंतर जघन्य अंतर्मुहूर्त का, उत्कृष्ट प्रत्येक कोड पूर्व का, परकाय आसरी जघन्य अन्तर्मुहूर्त का, उत्कृष्ट अनंतकाल

(वनस्पति काल) का । नारकी, देवता का सकाय आसरी अंतर नहीं, परकाय आसरी नारकी से लगा कर आठवें देवलोक तक सर्वबंध का अंतर जघन्य अपनी अपनी स्थिति से अन्तर्मुहूर्त अधिक, उत्कृष्ट अनंत काल (वनस्पतिकाल) का । देशबंध का अन्तर जघन्य अन्तर्मुहूर्त का, उत्कृष्ट अनंतकाल (वनस्पति काल) का । नवमें देवलोक से लगा कर नवग्रीवेयक तक सर्वबन्ध का अन्तर जघन्य अपनी अपनी स्थिति से प्रत्येक वर्ष अधिक, उत्कृष्ट अनंत काल (वनस्पति काल) का । देशबन्ध का अन्तर जघन्य प्रत्येक वर्ष का, उत्कृष्ट अनंत काल (वनस्पति काल) का । चार अनुत्तर विमान का सर्वबन्ध का अन्तर जघन्य अपनी अपनी स्थिति से प्रत्येक वर्ष अधिक, उत्कृष्ट संख्याता सागरोपम का । देशबन्ध का अन्तर जघन्य प्रत्येक वर्ष का, उत्कृष्ट संख्याता सागरोपम का । सर्वार्थ सिद्ध का सर्वबन्ध और देशबन्ध का अन्तर नहीं ।

१४–अल्पबहुत्व–सब से थोड़े वैक्रियशरीर के सर्व बन्ध, उससे देशबंधक असंख्यातगुणा, उससे अबंधक अनन्तगुणा ।

१५–अहो भगवान् ! आहारक शरीर कितने बोलों से बन्धता है ? हे गौतम ! ९ बोलों से बन्धता है--आठ तो औदारिक माफक कह देना, नवमा बोल आहारक लब्धि कहना ।

१६--अहो भगवान् ! आहारक शरीर कितने ठिकाणे (स्थानमें) पाया जाता है ? हे गौतम ! दो ठिकाणे पाया जाता है—समुच्चय जीव और मनुष्य में ।

१७--अहो भगवान् ! आहारकशरीर के सर्वबन्ध और देश बन्ध की स्थिति कितनी है ? हे गौतम ! सर्व बन्ध की स्थिति जघन्य उत्कृष्ट एक समय की, देशबन्ध की जघन्य उत्कृष्ट अन्तमुहूर्त की ।

१८--अहो भगवान् ! आहारकशरीर के सर्वबन्ध और देश-बन्ध का अंतर कितना है ? हे गौतम ! आहारक शरीर के सर्व-बन्ध और देशबन्ध का अंतर जघन्य अन्तमुहूर्त का, उत्कृष्ट देश ऊणा (कुछ कम) अर्द्ध पुद्गल परावर्तन काल का ।

१९--अल्पबहुत्व--सब से थोड़े आहारक शरीर के सर्व-बन्धक, उससे देशबन्धक संख्यातगुणा उससे अबन्धक अनंतगुणा

२०--अहो भगवान् ! तैजस कार्मण शरीर कितने बोलों से बँधता है ? हे गौतम ! सवीर्यता, सयोगता, सद्द्रव्यता यावत् आयुष्य इन आठ बोलों से तैजस कार्मण शरीर प्रयोग नाम कर्म के उदय से तैजस कार्मण शरीर का बन्ध होता है ।

२१--अहो भगवान् ! तैजस कार्मण शरीर कितने ठिकाणे पाया जाता है ? हे गौतम ! चौवीस ही दण्डक के जीवों में पाया जाता है ।

२२--अहो भगवान् ! तैजस कार्मण शरीर (प्रयोग बंध) क्या देश बंध है या सर्व बंध है ? हे गौतम ! देशबन्ध है सर्व बंध नहीं ।

२३--अहो भगवान् ! तैजसकार्मणशरीर देश बन्ध की स्थिति कितनी है ? हे गौतम ! तैजसकार्मणशरीर के दो भांगे होते हैं--अणा

इया अपज्जवसिया (अनादि अनन्त) अभवी आसरी। अणाइया सपज्जवसिया (अनादि सान्त) भवी आसरी।

२४–अहो भगवान्! तैजसकार्मणशरीर का अंतर कितना है? हे गौतम! तैजसकार्मणशरीर का अन्तर नहीं होता है।

२५–अल्पबहुत्व–सबसे थोड़े तैजसकार्मणशरीर के अबंधक, उससे देशबंधक अनंतगुणा।

२६–पांच शरीरों के देशबंध, सर्वबंध और अबंध की शामिल (भेली) अल्पबहुत्व--१ सब से थोड़े आहारकशरीर के सर्वबंधक, २ उससे आहारक शरीर के देशबंधक संख्यातगुणा, ३ उससे वैक्रिय शरीर के सर्वबन्धक असंख्यातगुणा, ४, उससे वैक्रियशरीर के देशबंधक असंख्यातगुणा, ५ उससे तैजस कार्मणशरीरके अबन्धक अनंतगुणा, ६ उससे औदारिक शरीरके सर्व बंधक अनंतगुणा, ७ उससे औदारिक शरीर के अबंधक विशेषाहिया, ८ उससे औदारिक शरीर के देशबंधक असंख्यातगुणा, ९ उससे तैजसकार्मणशरीर के देशबन्धक विशेषाहिया, १० उससे वैक्रिय शरीर के अबन्धक विशेषाहिया, ११ उससे आहारक शरीर के अबन्धक विशेषाहिया।

सेवं भंते! सेवं भंते!!

(थोकड़ा नम्बर ८६)

श्री भगवतीजी सूत्र के आठवें शतक के दशवें उद्देशे में 'आराधना पद' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१----अहो भगवान् ! आराधना कितने प्रकार की है ? हे गौतम ! आराधना तीन प्रकार की है--*१ ज्ञान आराधना, २ दर्शन आराधना, ३ चारित्र आराधना।

ज्ञान आराधना के तीन भेद--१ उत्कृष्ट ज्ञान आराधना २ मध्यम ज्ञान आराधना, ३ जघन्य ज्ञान आराधना। इसी तरह दर्शनआराधना के और चारित्र आराधना के भी उत्कृष्ट मध्यम, जघन्य ये तीन तीन भेद कह देना।

उत्कृष्ट ज्ञानआराधना में १४ पूर्व का ज्ञान, मध्यम ज्ञान आराधना में ११ अंग का ज्ञान, जघन्य ज्ञानआराधना में ८ प्रवचन दया माता का ज्ञान है। उत्कृष्ट दर्शनआराधना में क्षायिक समकित, मध्यम दर्शनआराधना में उत्कृष्ट क्षायोप

---

* १--योग्य काल में पढ़ना- विनय बहुमान आदि आठ प्रकार के ज्ञाना चार का निरतिचार पालन करना ज्ञान आराधना है।

(विस्तृत विवेचन देखिये--श्री जैनसिद्धान्त बोलसंग्रह भाग तीसरा पृष्ठ ५ से ६ तक)।

२--निस्संकिय निकंखिय आदि आठ प्रकार के दर्शनाचार का निरति चार पालन करना दर्शन आराधना है।

(विस्तृत विवेचन देखिये--श्री पन्नवणा सूत्र के थोकड़ों का पहला भाग पृष्ठ ४ से ५ तक)

३--पाँच समिति तीन गुप्ति रूप आठ प्रकार के चारित्राचार का निर तिचार (अतिचार रहित) पालन करना चारित्र आराधना है।

(इसका विस्तृत विवेचन--श्री उत्तराध्ययन सूत्रके २४ वें अध्ययन में दे

शमिक समकित, जघन्य दर्शनआराधना में जघन्य क्षायोपशमिक समकित पाई जाती है। उत्कृष्ट चारित्र आराधना में यथाख्यात चारित्र, मध्यम चारित्र आराधना में सूक्ष्मसम्परायचारित्र और परिहारविशुद्धि चारित्र, जघन्य चारित्र आराधना में छेदोपस्थापनीय चारित्र और सामायिक चारित्र पाया जाता है।

उत्कृष्ट ज्ञान आराधना में दर्शन आराधना पावे २ (उत्कृष्ट दर्शन आराधना और मध्यम दर्शन आराधना)। उत्कृष्ट दर्शन आराधना में ज्ञान आराधना पावे ३। उत्कृष्ट ज्ञान आराधना में चारित्र आराधना पावे २ (उत्कृष्ट, मध्यम)। उत्कृष्ट चारित्र आराधना में ज्ञानआराधना पावे ३। उत्कृष्ट दर्शन आराधना में चारित्र आराधना पावे ३। उत्कृष्ट चारित्र आराधना में १ उत्कृष्ट दर्शन आराधना की नियमा। आंक ३३३, ३३२, ३२२, २३३, २३२, २३१, २२२, २२१, २१२, २११, १३३, १३२, १३१, १२२, १२१, ११२, १११ *।

उत्कृष्ट ज्ञान आराधना, उत्कृष्ट दर्शन आराधना, उत्कृष्ट चारित्र आराधना वाला जीव जघन्य उसी भव में मोक्ष जाता है, उत्कृष्ट दो भव में मोक्ष जाता है। मध्यमज्ञानआराधना, मध्यम-

---

* जहाँ ३ है वहाँ 'उत्कृष्ट' कहना। जहाँ २ है वहाँ 'मध्यम' कहना। जहाँ १ है वहाँ 'जघन्य' कहना। जैसे ३३३ के आंक में उत्कृष्ट ज्ञान आराधना, उत्कृष्ट दर्शन आराधना, उत्कृष्ट चारित्र आराधना कहना। २३१ के आंक में मध्यम ज्ञान आराधना, उत्कृष्ट दर्शन आराधना जघन्य चारित्र आराधना कहना। इसी तरह दूसरे आंकों के लिए भी कह देना चाहिये

दर्शन आराधना, मध्यम चारित्र आराधना वाला जीव जघन्य दो भव से मोक्ष जाता है, उत्कृष्ट ३ भव से मोक्ष जाता है। जघन्य ज्ञान आराधना, जघन्य दर्शन आराधना जघन्य चारित्र आराधना वाला जीव जघन्य ३ भव से मोक्ष जाता है, उत्कृष्ट ७-८ भव से मोक्ष जाता है।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नम्बर ८७)

श्री भगवतीजी सूत्र के आठवें शतक के दशवें उद्देशे में 'पुद्गल परिणाम का तथा कर्मों' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं।

१-अहो भगवान् ! पुद्गल परिणाम कितने प्रकार का है? हे गौतम ! पाँच प्रकार का है-वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श, संठाण (संस्थान)। वर्ण के ५ भेद-काला, नीला, लाल, पीला, सफेद। गन्ध के दो भेद-सुरभिगन्ध, दुरभिगन्ध। रस के ५ भेद-तीखा, कड़वा, कषैला, खट्टा, मीठा। स्पर्श के ८ भेद-खरदरा, सुंहाला, हल्का, भारी, ठण्डा, गरम लूखा (रूक्ष), चिकना (स्निग्ध)। संठाण के ५ भेद-परिमंडल (चूड़ी जैसा गोल) वट्ट (वृत्त-कुम्हार के चक्र जैसा गोल) त्र्यस्र, (सिंघाड़े जैसा त्रिकोण) चतुरस्र (बाजोठ जैसा चतुष्कोण)—आयत (डंडे जैसा लम्बा)। इस तरह पुद्गल परिणाम के कुल २५ भेद हैं।

२-अहो भगवान् ! पुद्गलास्तिकाय के कितने भांगे होते

हैं ? हे गौतम ! पुद्गलास्तिकाय के एक प्रदेश से लगाकर यावत् अनन्त प्रदेशों तक ८ भांगे होते हैं-१-द्रव्य एक २-द्रव्यदेशएक, ३-द्रव्य बहुत, ४-द्रव्यदेश बहुत, ५-द्रव्य एक, द्रव्यदेश एक, ६-द्रव्य एक द्रव्य देश बहुत, ७-द्रव्य बहुत द्रव्य देश एक, ८-द्रव्य बहुत द्रव्य देश बहुत। इन आठ भांगों में से परमाणु में भांगा पावे दो—१-कदाचित् द्रव्य, २—कदाचित् द्रव्य देश। दो प्रदेशी में भांगा पावे पाँच—१-कदाचित् द्रव्य, २-कदाचित् द्रव्य देश, ३-कदाचित् बहुत द्रव्य, ४-कदाचित् बहुत द्रव्य देश ५-कदाचित् द्रव्य एक द्रव्य देश एक। तीन प्रदेशी में भांगा पावे सात—१-कदाचित् द्रव्य एक, २-कदाचित् द्रव्य देश एक, ३-कदाचित् द्रव्य बहुत, ४-कदाचित् द्रव्य देशबहुत, ५ कदाचित् द्रव्य एक द्रव्य देश एक, ६-कदाचित् द्रव्यएक द्रव्यदेश बहुत, ७-कदाचित् द्रव्यबहुत द्रव्य देश एक। चार प्रदेशी मे यावत् अनन्त प्रदेशी तक दश बोलों में भांगा पावे आठ आठ—१-कदाचित् द्रव्य एक, २-कदाचित् द्रव्य देश एक, ३-कदाचित् द्रव्य बहुत, ४-कदाचित् द्रव्य देशबहुत, ५-कदाचित् द्रव्य एक द्रव्य देश एक, ६-कदाचित् द्रव्य एक द्रव्य देश बहुत, ७-कदाचित् द्रव्य बहुत द्रव्य देश एक, ८—कदाचित् द्रव्य बहुत द्रव्य देश बहुत। ये सब मिलाकर ६४ अलावे हुए।

३—अहो भगवान्! लोकाकाश के कितने प्रदेश हैं? हे गौतम! असंख्याता प्रदेश हैं।

४—अहो भगवान्! एक जीवके कितने प्रदेश हैं? हे गौतम!

लोकाकाश के जितने प्रदेश हैं उतने ही एक जीव के प्रदेश हैं।

५–अहो भगवान् ! कर्म कितने हैं? हे गौतम ! कर्म आठ हैं–१ ज्ञानावरणीय, २ दर्शनावरणीय, ३ वेदनीय, ४ मोहनीय, ५ आयुष्य, ६ नाम, ७ गोत्र, ८ अन्तराय। २४ ही दण्डक के जीवों के आठ आठ कर्म हैं।

६–अहो भगवान् ! ज्ञानावरणीय के कितने * अविभाग-परिच्छेद हैं? हे गौतम ! अनन्त हैं। इसी तरह शेष ७ कर्मों के भी अनन्त अनन्त अविभाग परिच्छेद हैं। २४ ही दंडक के जीवों के आठ ही कर्म के अनन्त अनन्त अविभाग परिच्छेद हैं।

७–समुच्चय जीव में एक एक जीव प्रदेश अनन्त अविभाग परिच्छेदों से सिय आवेढिय परिवेढिय (कर्मों के आंटे लगे हुए) हैं × सिय नो आवेढिय परिवेढिय हैं। मनुष्य में ४ घाती कर्मों (ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय, अन्तराय) की भजना, ४ अघाती कर्मों (वेदनीय, आयुष्य, नाम, गोत्र)

---

* केवलज्ञानी भी जिसके विभाग की कल्पना न कर सके ऐसे सूक्ष्म अंशको अविभाग परिच्छेद कहते हैं, ये कर्म परमाणुओं की अपेक्षा अथवा ज्ञान के जितने अविभाग परिच्छेदों को ढक रखा है उनकी अपेक्षा ये अनन्त हैं।

× केवलज्ञानी की अपेक्षा आवेढिय परिवेढिय नहीं होता क्योंकि उनके ज्ञानावरणीय कर्म नहीं होने से ज्ञानावरणीय कर्म के अविभाग परिच्छेदों से उनके प्रदेश आवेढिय परिवेढिय नहीं होते। दूसरे जीवों के अनन्त अविभाग परिच्छेदों से आवेढिय परिवेढिय होते हैं।

की नियमा। २३ दण्डक में आठ कर्मों की नियमा। सिद्ध भगवान् में कर्म नहीं। ८ कर्मों की नियमा भजना के २८ भांगे होते हैं (ज्ञानावरणीय से ७–दर्शनावरणीय से ६, वेदनीय से ५, मोहनीय से ४, आयुष्य से ३, नाम से २ गोत्र से १) १–ज्ञानावरणीय में दर्शनावरणीय की नियमा, दर्शनावरणीय में ज्ञानावरणीय की नियमा। २-ज्ञानावरणीय में वेदनीय की नियमा, वेदनीय में ज्ञानावरणीय की भजना। ३-ज्ञानावरणीय में मोहनीय की भजना, मोहनीय में ज्ञानावरणीय की नियमा। ४-ज्ञानावरणीय में आयुष्य की नियमा, आयुष्य मे ज्ञानावरणीय की भजना। ५-ज्ञानावरणीय में नाम कर्म की नियमा, नामकर्म में ज्ञानावरणीय की भजना। ६-ज्ञानावरणीय में गोत्र की नियमा, गोत्र में ज्ञानावर्णीय की भजना। ७-ज्ञानावरणीय में अन्तराय की नियमा, अन्तरायमें ज्ञानावर्णीय की नियमा। ८-दर्शनावर-र्णीय में वेदनीय की नियमा, वेदनीय में दर्शनावरणीयकी भजना। ९-दर्शनावरणीय में मोहनीय की भजना, मोहनीय में दर्शनावर्णीय की नियमा। १०-दर्शनावर्णीय में आयुष्य की नियमा, आयुष्य में दर्शनावरणीय की भजना। ११-दर्शनावर्णीय में नाम कर्म की नियमा, नाम कर्म में दर्शनावरणीय की भजना। १२-दर्शनावर्णीय में गोत्र की नियमा, गोत्र में दर्शनवरणीय की भजना। १३–दर्शनावरणीय में अन्तराय की नियमा, अन्तराय में दर्शनावरणीय की नियमा। १४–वेदनीय में मोहनीय की भजना, मोहनीय में वेदनीय की नियमा। १५–वेदनीय में

आयुष्य की नियमा, आयुष्य में वेदनीय की नियमा। १६-वेदनीय में नाम कर्म की नियमा, नाम कर्म में वेदनीय की नियमा। १७-वेदनीय में गोत्रकी नियमा, गोत्र में वेदनीय की नियमा। १८-वेदनीय में अन्तरायकी भजना, अन्तराय में वेदनीय की नियमा। १९-मोहनीय में आयुष्य की नियमा, आयुष्य में मोहनीय की भजना। २०-मोहनीय में नाम कर्म की नियमा, नाम कर्म में मोहनीय की भजना। २१-मोहनीय में गोत्र की नियमा, गोत्र में मोहनीय की भजना। २२-मोहनीय में अन्तराय की नियमा, अन्तराय में मोहनीय की भजना। २३-आयुष्य में नाम कर्म की नियमा, नाम कर्म में आयुष्य की नियमा। २४-आयुष्य में गोत्र की नियमा, गोत्र में आयुष्य की नियमा। २५-आयुष्य में अन्तराय की भजना, अन्तराय में आयुष्यकी नियमा। २६-नाम कर्म में गोत्र की नियमा, गोत्र में नाम कर्म की नियमा। २७-नाम कर्म में अन्तराय की भजना, अन्तराय में नाम कर्म की नियमा। २८-गोत्र में अन्तराय की भजना, अन्तराय में गोत्र की नियमा।

८-अहो भगवान्! जीव पोग्गली (पुद्गली) है या पोग्गले (पुद्गल) है? हे गौतम! जीव पोग्गली भी है और पोग्गले भी है। अहो भगवान्! आप इस तरह किस कारण से कहते हैं? हे गौतम! जिस पुरुष के पास छत्र हो वह छ[illegible] हो वह दण्डी, घट हो वह घटी [illegible] वह पटी [illegible]। इसी प्रकार जीव भी श्रोत्रे[illegible]

और स्पर्शनेन्द्रिय की अपेक्षा पोग्गली और जीवकी अपेक्षा पोग्गले कहा जाता है। इस कारण से हे गौतम ! जीव पोग्गली भी है और पोग्गले भी है। इसी तरह २४ दण्डक कह देना।

६–अहो भगवान् ! सिद्ध पोग्गली है या पोग्गले है ? हे गौतम ! सिद्ध पोग्गले है पोग्गली नहीं। सिद्ध भगवान् जीव की अपेक्षा से * पोग्गले है।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नम्बर ८८)

श्री भगवती सूत्र के नवमें शतक के २८ उद्देशों में (तीसरे से तीसवें तक दक्षिण दिशाके २८ अन्तरद्वीप) और दसवें शतक के २८ उद्देशों में (सातवें से चौतीसवें तक, उत्तर दिशा के २८ अन्तरद्वीप) ये ५६ अन्तरद्वीपों का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

श्री भगवतीजी सूत्र के नवमें शतक के तीसरे उद्देशे से तीसवें उद्देशे तक २८ उद्देशों में दक्षिण दिशा के २८ अन्तरद्वीपों का वर्णन है। इसी तरह दसवें शतक के सातवें उद्देशे से चौतीसवें उद्देशे तक २८ उद्देशों में उत्तर दिशा के २८ अन्तरद्वीपों का वर्णन है। इन अन्तरद्वीपों में अन्तरद्वीपों के नाम वाले युगलिया मनुष्य निवास करते हैं। २८ अन्तरद्वीपों के नाम इस प्रकार हैं—

* पोग्गले–गये काल में पुद्गल ग्रहण किये हैं उस अपेक्षा से जीव को पोग्गले कहा है।

जम्बूद्वीप में दक्षिण दिशा में चुल्लहिमवान् पर्वत है। पूर्व और पश्चिम की तरफ जहाँ लवण समुद्र के जल से इस पर्वत का स्पर्श होता है वहाँ इस पर्वत से दोनों तरफ चारों विदिशाओं में गजदन्ताकार दो दो *दाढाएं निकली हैं। एक एक दाढा पर सात सात अन्तरद्वीप हैं। इस तरह चार दाढाओं पर २८ अन्तरद्वीप हैं।

पूर्व दिशा में ईशान कोण में जो दाढा निकली है उस पर सात अन्तरद्वीप इस तरह हैं–(१) लवण समुद्र में ३०० योजन जाने पर एकोरुक (एगोरुय) नाम का पहला अन्तरद्वीप आता है। यह अन्तरद्वीप जम्बूद्वीप की जगती से ३०० योजन दूर है। इसका विस्तार ३०० योजन है और परिधि ९४९ योजन से कुछ कम है। (२) एकोरुक द्वीप से ४०० योजन जाने पर हयकर्ण नाम का दूसरा अन्तरद्वीप आता है। हयकर्ण अन्तरद्वीप जम्बूद्वीप की जगती से ४०० योजन दूर है। इसका विस्तार ४०० योजन है। इसकी परिधि १२६५ योजन से कुछ कम है। (३) हयकर्णद्वीप से ५०० योजन जाने पर आदर्शमुख नामक तीसरा अन्तरद्वीप आता है। यह जगती से ५०० योजन दूर है, इसका ५०० योजन का विस्तार है और १५८१ योजन की परिधि है। (४) आदर्शमुख द्वीप से ६०० योजन जाने पर अश्वमुख

* वास्तविक में ये दाढाएं नहीं हैं दाढाओं के आकार से द्वीप रहा हुआ है।

रसा मणियंगा गेहागारा अणियणा ये दस जाति के कल्पवृक्ष वीससा (विश्रसा-स्वाभाविक) परिणम्या इच्छा पूरी करते हैं। वहाँ राजा राणी चाकर ठाकर मेला महोत्सव विवाह सगाई रथ पालकी डाँस मच्छर संग्राम रोग शोक कांटा खीला कंकर अशुचि दुर्गन्ध सुकाल दुष्काल वृष्टि आदि बातें नहीं होती हैं। हाथी घोड़ा होते हैं किन्तु उनपर कोई असवारी नहीं करता। गायें भैंसें होती हैं किन्तु युगलियों के काम में नहीं आती हैं। सिंह सर्पादि हैं किन्तु वे किसी को दुःख नहीं देते। उनको किसी भी वस्तु पर गृद्धिपणा नहीं होता। युगलिये ३२ लक्षणों युक्त होते हैं। एकान्तरे (एकदिन के अन्तर से) आहार करते हैं। छींक उबासी लेते ही काल कर जाते हैं। काल करके भवनपति वाणव्यन्तर देवों में उत्पन्न होते हैं *।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

---

७ चित्तरसा (चित्ररसा)—विविध प्रकार के भोजन देने वाले।

८ मणियंगा (मण्यङ्गा)—आभूषण देने वाले।

९ गेहागारा (गेहाकारा)—मकान के आकार परिणत हो जाने वाले अर्थात् मकान की तरह आश्रय देने वाले।

१० अणियणा (अनग्ना) वस्त्र आदि देने वाले।

इन दस प्रकार के कल्पवृक्षों से युगलियों की आवश्यकतायें पूरी हो जाती हैं। अतः ये कल्पवृक्ष कहलाते हैं।

* अन्तर्द्वीपों का और युगलियों का विशेष विस्तार पूर्वक वर्णन श्री जीवाभिगम सूत्र में है।

श्री भगवती सूत्र के नवें शतक के ३१ वें उद्देशे में असोच्चा केवली का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

(१) अहो भगवान् ! क्या कोई जीव केवली, केवली के श्रावक, * केवली की श्राविका, केवली के उपासक, केवली की उपासिका, केवली के पाक्षिक यानी स्वयंबुद्ध, स्वयंबुद्ध के श्रावक, स्वयंबुद्ध की श्राविका, स्वयंबुद्ध के उपासक, स्वयंबुद्ध की उपासिका से सुने बिना केवलीप्ररूपित श्रुत धर्म का लाभ प्राप्त करता है? हे गौतम ! कोई जीव केवली यावत् स्वयंबुद्ध की उपासिका से सुने बिना ही केवली प्ररूपित श्रुत धर्म का लाभ प्राप्त करता है और कोई जीव नहीं करता । अहो भगवान् ! आप ऐसा किस कारण से फरमाते हैं ? हे गौतम ! जिस जीवने ज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशम किया है वह केवली यावत् स्वयंबुद्ध की उपासिका से सुने बिना भी केवली प्ररूपित श्रुत धर्म का लाभ प्राप्त करता है और जिस जीवने ज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशम नहीं किया है वह श्रुत धर्म का लाभ प्राप्त नहीं करता । हे गौतम ! इस कारण मैंने ऐसा कहा है ।

२-अहो भगवान् ! क्या कोई जीव केवली यावत् स्वयंबुद्ध की उपासिका से सुने बिना शुद्ध सम्यग्दर्शन की प्राप्ति कर सकता

---

* जिसने स्वयं केवलज्ञानी से पूछा है अथवा उनके समीप सुना है वह केवली के श्रावक । केवलज्ञानी की उपासना करते हुए, केवली द्वारा दूसरे को कहे जाने पर जिसने सुना हो वह केवली के उपासक । केवली के पाक्षिक से आशय स्वयंबुद्ध से है ।

है ? हे गौतम ! केवली यावत् स्वयंबुद्ध की उपासिका से सुने बिना भी कोई जीव शुद्ध सम्यग्दर्शन प्राप्त कर सकता है और कोई जीव इनसे सुने बिना शुद्ध सम्यग्दर्शन की प्राप्ति नहीं कर सकता। हे भगवन् ! आप ऐसा किस कारण से फरमाते हैं ? हे गौतम ! जिस जीव ने दर्शनावरणीय यानी दर्शन मोहनीय कर्म का क्षयोपशम किया है वह केवली यावत् स्वयंबुद्ध की उपासिका से सुने बिना भी शुद्ध सम्यग्दर्शन प्राप्त कर सकता है और जिस जीव ने दर्शनावरणीय यानी दर्शन मोहनीय कर्म का क्षयोपशम नहीं किया है वह शुद्ध सम्यग्दर्शन प्राप्त नहीं करता। हे गौतम ! इस कारण मैंने ऐसा कहा है।

३—अहो भगवान् ! क्या कोई जीव, केवली यावत् स्वयंबुद्ध की उपासिका से सुने बिना, गृहवास छोड़कर मुंड होकर शुद्ध अनगारपन की प्रव्रज्या स्वीकार करता है ? हे गौतम ! कोई जीव केवली यावत् स्वयंबुद्ध से सुने बिना भी गृहवास छोड़कर मुंड होकर शुद्ध अनगार पन की प्रव्रज्या स्वीकार करता है और कोई जीव नहीं करता है। हे भगवन् ! ऐसा आप किस कारण से फरमाते हैं ? हे गौतम ! जिस जीवने धर्मान्तरायकर्म यानी वीर्यान्तराय तथा चारित्र मोहनीय कर्म का क्षयोपशम किया है वह केवली यावत् स्वयंबुद्ध की उपासिका से सुने बिना भी गृहवास को छोड़कर मुंड होकर शुद्ध अनगारपन की प्रव्रज्या को स्वीकार करता है और जिस जीवने वीर्यान्तराय तथा चारित्र

मोहनीयकर्म का क्षयोपशम नहीं किया है वह केवली यावत् स्वयं-बुद्ध की उपासिका से सुने बिना गृहवास छोड़कर मुंड होकर शुद्ध अनगारपन की प्रव्रज्या स्वीकार नहीं करता। हे गौतम ! इस कारण मैंने यह कहा है।

४—हे भगवन् ! क्या कोई जीव केवली यावत् स्वयंबुद्ध की उपासिका से सुने बिना शुद्ध ब्रह्मचर्यवास धारण करता है? हे गौतम ! कोई जीव केवली यावत् स्वयंबुद्ध की उपासिका से सुने बिना भी शुद्ध ब्रह्मचर्यवास धारण करता है और कोई जीव इन से सुने बिना शुद्ध ब्रह्मचर्य वास धारण नहीं करता। हे भगवन् ! आप ऐसा किस कारण से फरमाते हैं। हे गौतम ! जिस जीव ने चारित्रावरणीय कर्मों का क्षयोपशम किया है वह केवली यावत् स्वयंबुद्ध की उपासिका से सुने बिना भी शुद्ध ब्रह्मचर्यवास धारण करता है। जिस जीव ने चारित्रावरणीय कर्मोंका क्षयोपशम नहीं किया है वह शुद्ध ब्रह्मचर्यवास धारण नहीं करता। इस कारण, हे गौतम ! मैंने ऐसा कहा है।

५—अहो भगवान् ! इन दस के पास केवलीप्ररूपित धर्म को सुने बिना क्या कोई शुद्ध संयम के द्वारा संयमयतना* करता है? हे गौतम ! कोई संयमयतना करता है और कोई नहीं करता। अहो भगवान् ! इसका क्या कारण है? हे गौतम ! जिस

* संयम (चारित्र) को स्वीकार करके उसके दोष को त्याग करने का प्रयत्न विशेष करना संयमयतना कहलाती है।

जीव के यतनावरणीय * कर्म का क्षयोपशम हुआ हो वह शुद्ध संयम के द्वारा संयमयतना करता है और जिस जीव के यतनावरणीय कर्म का क्षयोपशम नहीं हुआ हो वह शुद्ध संयम के द्वारा संयमयतना नहीं करता।

६—अहो भगवान्! इन दस के पास केवली प्ररूपित धर्म को सुने बिना क्या शुद्ध संवर के द्वारा आश्रवों को रोकता है? हे गौतम! कोई रोकता है और कोई नहीं रोकता। अहो भगवान्! इसका क्या कारण है? हे गौतम! जिस जीवके अध्यवसानावरणीय (भाव चारित्रावरणीय) कर्मका क्षयोपशम हुआ हो वह शुद्ध संवर के द्वारा आश्रवों को रोकता है और जिस जीव के अध्यवसानावरणीय कर्म का क्षयोपशम नहीं हुआ हो वह शुद्ध संवर द्वारा आश्रव को नहीं रोकता।

७—अहो भगवान्! इन दस के पास केवली प्ररूपित धर्मको सुने बिना क्या कोई जीव शुद्ध आभिनिबोधिक ज्ञान (मतिज्ञान) उत्पन्न करता है? हे गौतम! कोई करता है और कोई नहीं करता। अहो भगवान्! इसका क्या कारण? हे गौतम! जिस जीव के आभिनिबोधिक ज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशम हुआ हो वह शुद्ध आभिनिबोधिक ज्ञान उत्पन्न करता है और जिस

---

* चारित्र के विषय में प्रवृत्ति करना यतना कहलाती है। उसको आच्छादित करने वाला कर्म यतनावरणीय (वीर्यान्तराय) कहलाता है। चारित्रावरणीय और वीर्यान्तराय कर्म के क्षयोपशम को यतनावरणीय कर्म का क्षयोपशम कहते हैं।

जीव के आभिनिवोधिक ज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशम नहीं हुआ हो वह आभिनिवोधिक ज्ञान उत्पन्न नहीं करता।

८–१० इसी तरह श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनः पर्ययज्ञान का भी कह देना। किन्तु श्रुतज्ञान में श्रुतज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशम कहना। अवधिज्ञान में अवधिज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशम कहना और मनः पर्यय ज्ञान में मनः पर्ययज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशम कहना।

११–अहो भगवान्! इन दस के पास केवली प्ररूपित धर्म को सुने विना क्या कोई जीव केवलज्ञान उत्पन्न कर सकता है? हे गौतम! कोई जीव कर सकता है और कोई नहीं कर सकता। अहो भगवान्! इसका क्या कारण? हे गौतम! जिस जीव के केवलज्ञानावरणीय कर्म का क्षय हुआ हो वह केवलज्ञान उत्पन्न [illegible] सकता है और जिस जीव के केवलज्ञानावरणीय कर्म का क्षय [illegible]आ हो वह केवलज्ञान उत्पन्न नहीं कर सकता है।

सेवं भंते! सेवं भंते!!

क्या किसी जीव को केवली प्ररूपित धर्म का बोध यावत् ० केवलज्ञान होता है ? हे गौतम ! किसी जीव को होता है और किसी को नहीं। अहो भगवान् ! इसका क्या कारण है ? हे गौतम ! जिस जीव के ज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशम हुआ हो यावत् केवलज्ञानावरणीय कर्म का क्षय हुआ हो उसको केवली प्ररूपित धर्म का बोध यावत् केवलज्ञान होता है और जिस जीव के ज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशम नहीं हुआ हो यावत् केवलज्ञानावरणीय कर्म का क्षय नहीं हुआ हो उसको केवली प्ररूपित धर्म का बोध यावत् केवलज्ञान नहीं होता।

२—अहो भगवान् ! उस जीव को केवलज्ञान किस तरह उत्पन्न होता है ?

हे गौतम ! कोई बाल तपस्वी निरन्तर बेले बेले पारणा करे, दोनों हाथ ऊंचा करके सूर्य के सामने आतापना लेवे उसे प्रकृति की भद्रता से, प्रकृति की उपशान्तता से प्रकृति (स्वभाव) मे क्रोध मान माया लोभ पतले होने से, प्रकृति की कोमलता और नम्रता से, कामभोगों में आसक्ति न होने से, भद्रता और विनीतता से किसी दिन शुभ अध्यवसाय से शुभ परिणामों से, विशुद्ध लेश्या से विभंग ज्ञानावरणीय कर्म के क्षयोपशम से, ईहा, अपोह, मार्गणा गवेषणा करते हुए विभंग ज्ञान पैदा होता है

० जिस तरह पहले के 'असोच्चा केवली' के थोकड़े में कहा है उसी तरह यहाँ भी कह देना अर्थात् धर्म श्रवण (बोध) से लेकर केवलज्ञान होने तक सारे बोल यहाँ भी कह देना चाहिये।

जिससे जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग को जानता देखता है, उत्कृष्ट असंख्यात हजार योजन जानता देखता है, वह जीवों को जानता है, अजीवों को जानता है, पाखण्डी, आरम्भ वाले, परिग्रह वाले संक्लेश को प्राप्त हुए जीवों को जानता है, और विशुद्ध जीवों को भी जानता है। इसके बाद वह समकित को प्राप्त करता है। फिर श्रमण धर्म पर रुचि करता है, रुचि करके चारित्र को अङ्गीकार करता है, फिर लिङ्ग स्वीकार करता है। मिथ्यात्व के परिणाम घटते घटते और सम्यग्दर्शन के परिणाम बढ़ते बढ़ते वह विभंग ज्ञान सम्यक्त्व युक्त होकर अवधिज्ञानपणे परिणमता है।

३—अहो भगवान्! वह अवधिज्ञानी जीव कितनी लेश्याओं में होते हैं? हे गौतम! तेजोलेश्या, पद्मलेश्या, शुक्ललेश्या इन तीन विशुद्ध लेश्याओं में होते हैं।

४—अहो भगवान्! वे अवधिज्ञानी जीव कितने ज्ञानों में होते हैं? हे गौतम! मतिज्ञान, श्रुतज्ञान और अवधिज्ञान इन तीन ज्ञानों में होते हैं।

५—अहो भगवान्! वे अवधिज्ञानी जीव सयोगी होते हैं या अयोगी होते हैं? हे गौतम! सयोगी होते हैं, अयोगी नहीं होते। उनके मन, वचन और काया ये तीनों योग होते हैं।

६—अहो भगवान्! वे अवधिज्ञानी साकार (ज्ञान) उपयोग वाले होते हैं या अनाकार (दर्शन) उपयोग वाले होते हैं? हे गौतम! वे साकार उपयोग वाले भी होते हैं और

अनाकारोपयोग वाले भी होते हैं।

७—अहो भगवान् ! वे अवधिज्ञानी कौन से संहनन में होते हैं ? हे गौतम ! वे वज्रऋषभनाराच संहनन में होते हैं।

८—अहो भगवान् ! वे अवधिज्ञानी किस संस्थान में होते हैं ? हे गौतम ! वे छह संस्थानों में से किसी एक संस्थान में होते हैं।

९—अहो भगवान् ! वे अवधिज्ञानी कितनी ऊंचाई वाले होते हैं ? हे गौतम ! जघन्य सात हाथ, उत्कृष्ट ५०० धनुष की ऊँचाई वाले होते हैं।

१०—अहो भगवान् ! वे कितनी आयुष्य वाले होते हैं ? हे गौतम ! जघन्य आठ वर्ष से कुछ अधिक और उत्कृष्ट करोड़ पूर्व आयुष्य वाले होते हैं।

११—अहो भगवान् ! वे वेद सहित होते हैं या वेद रहित होते हैं ? हे गौतम ! वे वेद सहित होते हैं, वेद रहित नहीं होते।

१२—अहो भगवान् ! वे वेद सहित होते हैं तो क्या स्त्रीवेदी, पुरुषवेदी, नपुंसकवेदी, पुरुष नपुंसकवेदी * होते हैं ? हे गौतम ! वे स्त्रीवेदी और नपुंसकवेदी नहीं होते किन्तु पुरुषवेदी या पुरुषनपुंसकवेदी होते हैं।

१३—अहो भगवान् ! वे अवधिज्ञानी सकषायी होते हैं

---

* लिंग का छेद करने से जो नपुंसक बना है अर्थात् जो कृत्रिम नपुंसक है उसे पुरुष नपुंसक कहते हैं।

या अकषायी होते हैं ? हे गौतम ! वे सकषायी होते हैं, अकषायी नहीं होते ।

१४—अहो भगवान् ! वे सकषायी होते हैं तो उनमें कितनी कषाय होती हैं ? हे गौतम ! उनमें संज्वलन के क्रोध, मान, माया, लोभ ये चार कषाय होती है ।

१५—अहो भगवान् ! उनके कितने अध्यवसाय होते हैं ? हे गौतम ! उनके असंख्याता अध्यवसाय होते हैं ।

१६—अहो भगवान् ! उनके अध्यवसाय प्रशस्त होते हैं या अप्रशस्त ? हे गौतम ! उनके अध्यवसाय प्रशस्त होते हैं, अप्रशस्त नहीं ।

फिर बढते हुए प्रशस्त अध्यवसायों से वे नरक, तिर्यंच, मनुष्य और देवगति के अनन्त भवों से अपनी आत्मा को मुक्त करते हैं । क्रमशः अनन्तानुबन्धी, अप्रत्याख्यानी, प्रत्याख्यानी संज्वलन के क्रोध मान माया लोभ का क्षय करते हैं । ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, अन्तराय और मोहनीय का क्षय करते हैं जिससे उनको अनन्त, अनुत्तर, (प्रधान) व्याघात रहित, आवरण रहित, सर्व पदार्थों को ग्रहण करने वाला, प्रतिपूर्ण श्रेष्ठ केवलज्ञान, केवलदर्शन उत्पन्न होता है ।

१७—अहो भगवान् ! क्या वे केवली भगवान् केवली-प्ररूपित धर्म का उपदेश देते हैं यावत् प्ररूपणा करते हैं ? हे गौतम ! णो इणट्ठे समट्ठे—वे केवली भगवान् धर्म का उपदेश

नहीं देते यावत् प्ररूपणा नहीं करते किन्तु * एक न्याय (उदाहरण) अथवा एक प्रश्न उत्तर के सिवाय वे धर्म का उपदेश नहीं देते।

१८—अहो भगवान्! क्या वे केवली भगवान् किसी को प्रव्रज्या देते हैं, मुण्डित करते हैं? हे गौतम! णो इणट्ठे समट्ठे—वे केवली भगवान् किसी को प्रव्रज्या नहीं देते, मुण्डित नहीं करते परन्तु 'अमुक के पास दीक्षा लो' ऐसा उपदेश करते हैं (दूसरों के पास दीक्षा लेने के लिए कहते हैं)

१९—अहो भगवान्! क्या वे केवली भगवान् उसी भव में सिद्ध बुद्ध मुक्त होकर सब दुःखों का अन्त करते हैं? हां, गौतम! उसी भव में सिद्ध बुद्ध मुक्त होकर सब दुःखों का अन्त करते हैं।

२०—अहो भगवान्! वे केवली भगवान् क्या ऊर्ध्व लोक में होते हैं या अधोलोक में होते हैं या तिर्च्छालोक में होते हैं? हे गौतम! वे केवली भगवान् ऊर्ध्व लोक में भी होते हैं, अधोलोक में भी होते हैं और तिर्च्छालोक में भी होते हैं। ऊर्ध्वलोक में होते हैं तो सद्दावाई वियडावाई, गन्धावाई और माल्यवन्त

---

* प्राचीन धारणा इस प्रकार की है कि असोच्चा केवली आयुष्य कम होने से वेष नहीं पलटते हैं, उपदेश भी नहीं देते हैं और शिष्य भी नहीं बनाते हैं। यदि आयुष्य लम्बा हो तो वेष पलट लेते हैं और वेष पलटने के बाद उपदेश भी देते हैं और दीक्षा देकर शिष्य भी बनाते हैं।

नामक वृत्त (गोल) वैताढय पर्वत पर होते हैं, संहरण आसरी मेरु पर्वत के सोमनस वन और पाण्डुक वन में होते हैं। अधोलोक में होते हैं तो अधोलोकग्रामादि विजय में या गुफा में होते हैं, संहरण आसरी पाताल में तथा भवनपतियों के भवनों में होते हैं। तिर्च्छालोक में होते हैं तो पन्द्रह कर्म भूमि में होते हैं, संहरण आसरी अढाई द्वीप समुद्रों के एक भाग में होते हैं।

२१—अहो भगवान् ! वे केवली भगवान् एक समय में कितने होते हैं ? हे गौतम ! जघन्य १, २, ३, उत्कृष्ट १० होते हैं।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नम्बर ६१)

श्री भगवतीजी सूत्र के नवमें शतक के ३१ वें उद्देशे में 'सोच्चा-केवली' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१—अहो भगवान् ! क्या केवली, केवली के श्रावक श्राविका उपासक उपासिका, केवली पाक्षिक (स्वयंबुद्ध), केवली पाक्षिक के श्रावक श्राविका उपासक उपासिका, इन दस के पास केवली प्ररुपित धर्म सुन कर किसी जीव को धर्मका बोध होता है यावत् केवलज्ञान उत्पन्न होता है ? हे गौतम ! किसी जीव को होता है और किसी जीव को नहीं होता है। यह सारा वर्णन ११ ही बोल 'असोच्चा' के समान कह देना किन्तु यहाँ पर 'सोच्चा' (सुनकर) ऐसा कहना। जिस जीव ने ज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशम किया है उसको धर्म का बोध होता है यावत् जिस

जीव ने केवलज्ञानावरणीय कर्म का क्षय किया है उसको केवलज्ञान होता है।

कोई साधु निरन्तर तेले तेले पारणा करता हुआ आत्मा को भावित करता हुआ विचरता है। उसको प्रकृति की भद्रता विनीतता आदि गुणों से यावत् अवधिज्ञानावरणीय कर्म के क्षयोपशम से अवधिज्ञान उत्पन्न हो जाता है। वह उस अवधिज्ञान के द्वारा जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग को जानता देखता है, उत्कृष्ट अलोक में लोक प्रमाण असंख्यात खण्डों को जानता देखता है।

२–अहो भगवान्! वे (अवधिज्ञानी) जीव कितनी लेश्याओं में होते हैं? हे गौतम!* कृष्ण यावत् शुक्ल छही लेश्या में होते हैं।

३–अहो भगवान्! वे अवधिज्ञानी कितने ज्ञानों में होते हैं? हे गौतम! मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, इन तीनों ज्ञानों में होते हैं अथवा मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान मनः पर्ययज्ञान इन चार ज्ञानों में होते हैं।

४–अहो भगवान्! वे अवधिज्ञानी सयोगी होते हैं या अयोगी होते हैं? हे गौतम! वे सयोगी होते हैं, अयोगी नहीं होते। जिस तरह योग, उपयोग, संहनन, संस्थान, ऊंचाई और आयुष्य 'असोच्चा' में कहा उसी तरह यहाँ 'सोच्चा' में भी

* यहाँ जो छह लेश्या कही गई हैं, ये द्रव्यलेश्या की अपेक्षा समझना चाहिए। भावलेश्या की अपेक्षा तीन प्रशस्त भावलेश्या ही होती हैं, क्योंकि अवधिज्ञान प्रशस्त भावलेश्याओं में ही होता है।

कह देना चाहिए ।

५–अहो भगवान् ! वे अवधिज्ञानी सवेदी होते हैं या वेदी होते हैं ? हे गौतम ! वे सवेदी होते हैं अथवा अवेदी ते हैं । सवेदी होते हैं तो स्त्रीवेदी, पुरुषवेदी, पुरुषनपुंसकवेदी ते हैं । यदि अवेदी होते हैं तो क्षीणवेदी होते हैं, उपशान्त- ी नहीं होते ।

६–अहो भगवान् ! वे (अवधिज्ञानी) सकषायी होते हैं या अकषायी होते हैं । हे गौतम ! सकषायी भी होते हैं अकषायी भी होते हैं । सकषायी होते हैं तो संज्वलन का चोक होता है, त्रिक (मान, माया, लोभ) होता है, द्विक (माया, लोभ) होता है, एक (लोभ) होता है । यदि अकषायी होते हैं तो क्षीणकषायी होते हैं, उपशान्त कषायी नहीं होते।

७–अहो भगवान् ! उन अवधिज्ञानी के कितने अध्यवसाय होते हैं ? हे गौतम ! उनके असंख्यात प्रशस्त अध्यवसाय होते हैं । उन प्रशस्त अध्यवसायों के बढ़ने से यावत् केवलज्ञान केवल- दर्शन उत्पन्न हो जाते हैं ।

८–अहो भगवान् ! क्या वे 'सोच्चा' केवली भगवान् केवली प्ररू- पित धर्म का उपदेश करते हैं यावत् प्ररूपणा करते हैं ? हाँ, गौतम ! वे केवली प्ररूपित धर्म का उपदेश करते हैं यावत् प्ररूपणा करते हैं ।

९–अहो भगवान् ! क्या वे केवलीभगवान् किसी को प्रव्रज्या (दीक्षा) देते हैं, मुण्डित करते हैं ? हाँ गौतम ! प्रव्रज्या देते मुण्डित करते हैं ।

१०–अहो भगवान् ! क्या उन केवली भगवान् के शिष्य

जीव ने केवलज्ञानावरणीय कर्म का क्षय किया है उसको केवलज्ञान होता है।

कोई साधु निरन्तर तेले तेले पारणा करता हुआ आत्माको भावितकरता हुआ विचरता है। उसकी प्रकृति की भद्रता विनीतता आदि गुणों से यावत् अवधिज्ञानावरणीय कर्मके क्षयोपशम से अवधिज्ञान उत्पन्न हो जाता है। वह उस अवधिज्ञान के द्वारा जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग को जानता देखता है, उत्कृष्ट अलोक में लोक प्रमाण असंख्यात खण्डों को जानता देखता है।

२–अहो भगवान् ! वे (अवधिज्ञानी) जीव कितनी लेश्याओं में होते हैं ? हे गौतम !* कृष्ण यावत् शुक्ल छही लेश्या में होते हैं।

३–अहो भगवान् ! वे अवधिज्ञानी कितने ज्ञानों में होते हैं ? हे गौतम ! मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, इन तीनों ज्ञानों में होते हैं अथवा मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान मनः पर्यय ज्ञान इन चार ज्ञानों में होते हैं।

४–अहो भगवान् ! वे अवधिज्ञानी सयोगी होते हैं या अयोगी होते हैं ? हे गौतम ! वे सयोगी होते हैं, अयोगी नहीं होते। जिस तरह योग, उपयोग, संहनन, संस्थान, ऊंचाई और आयुष्य 'असोच्चा' में कहा उसी तरह यहाँ 'सोच्चा' में भी

* यहाँ जो छह लेश्या कही गई हैं, ये द्रव्यलेश्या की अपेक्षा समझना चाहिए। भावलेश्या की अपेक्षा तीन प्रशस्त भावलेश्या ही होती है क्योंकि अवधिज्ञान प्रशस्त भावलेश्याओं में ही होता है।

कह देना चाहिए।

५–अहो भगवान्! वे अवधिज्ञानी सवेदी होते हैं या अवेदी होते हैं? हे गौतम! वे सवेदी होते हैं अथवा अवेदी होते हैं। सवेदी होते हैं तो स्त्रीवेदी, पुरुषवेदी, पुरुषनपुंसकवेदी होते हैं। यदि अवेदी होते हैं तो चीणवेदी होते हैं, उपशान्तवेदी नहीं होते।

६–अहो भगवान्! वे (अवधिज्ञानी) सकपायी होते हैं या अकपायी होते हैं। हे गौतम! सकपायी भी होते हैं अकपायी भी होते हैं। सकपायी होते हैं तो संज्वलन का चौक होता है, त्रिक (मान, माया, लोभ) होता है, द्विक (माया, लोभ) होता है, एक (लोभ) होता है। यदि अकपायी होते हैं तो चीणकपायी होते हैं, उपशान्त कपायी नहीं होते।

७–अहो भगवान्! उन अवधिज्ञानी के कितने अध्यवसाय होते हैं? हे गौतम! उनके असंख्यात प्रशस्त अध्यवसाय होते हैं। उन प्रशस्त अध्यवसायों के बढ़ने से यावत् केवलज्ञान केवलदर्शन उत्पन्न हो जाते हैं।

८–अहो भगवान्! क्या वे 'सोच्चा' केवली भगवान् केवली प्ररूपित धर्म का उपदेश करते हैं यावत् प्ररूपणा करते हैं? हाँ, गौतम! वे केवली प्ररूपित धर्म का उपदेश करते हैं यावत् प्ररूपणा करते हैं।

९–अहो भगवान्! क्या वे केवलीभगवान् किसी को प्रव्रज्या (दीचा) देते हैं, मुण्डित करते हैं? हाँ गौतम! प्रव्रज्या देते हैं, मुण्डित करते हैं।

१०–अहो भगवान्! क्या उन केवली भगवान् के शिष्य

प्रशिष्य भी किसी को प्रव्रज्या देते हैं, मुण्डित करते हैं ? हाँ, गौतम ! उनके शिष्य, प्रशिष्य भी प्रव्रज्या देते हैं, मुण्डित करते हैं।

११—अहो भगवान् ! क्या वे केवलीभगवान् उसी भव में सिद्ध, बुद्ध, मुक्त, होकर सब दुःखों का अन्त करते हैं ? हाँ, गौतम ! वे उसी भव में सिद्ध, बुद्ध, मुक्त होकर सब दुःखों का अन्त करते हैं।

१२—अहो भगवान् ! क्या उन केवली भगवान् के शिष्य प्रशिष्य भी सिद्ध, बुद्ध, मुक्त होकर सब दुःखों का अन्त करते हैं ? हाँ, गौतम ! वे भी सिद्ध, बुद्ध, मुक्त होकर सब दुःखों का अन्त करते हैं।

१३—अहो भगवान् ! वे केवली भगवान् ऊर्ध्वलोक में होते हैं या अधोलोक में होते हैं या तिर्च्छालोक में होते हैं ? हे गौतम ! वे ऊर्ध्वलोक में भी होते हैं, अधोलोक में भी होते हैं, तिर्च्छालोक में भी होते हैं, यह सारा वर्णन 'असोच्चा' केवली की माफिक कह देना चाहिए।

१४—अहो भगवान् ! वे केवली भगवान् ! एक समय में कितने सिद्ध होते हैं ? हे गौतम ! जघन्य १, २, ३, उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते हैं।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!

(थोकड़ा नम्बर ६२)

श्री भगवतीजी सूत्र के नवमें शतक के ३२ वें उद्देशे में 'गांगेय अणगार के भांगों' का थोकड़ा चलता है सो कहते हैं—

१— तेईसवें तीर्थंकर भगवान् पार्श्वनाथ स्वामी के शिष्य श्री गांगेय अणगार ने श्रमण भगवान् श्री महावीर स्वामी से पूछा कि अहो भगवान् ! क्या नारकी के नेरीये नारकी में सान्तर * उपजते हैं या निरन्तर उपजते हैं ? हे गांगेय ! नारकी के नेरीये × सान्तर भी उपजते हैं और निरन्तर भी उपजते हैं। इसी तरह पाँच स्थावर के सिवा शेष १८ दण्डक और कह देना।

२—अहो भगवान् ! क्या पांच स्थावर के जीव सान्तर उपजते हैं या निरन्तर उपजते हैं ? हे गांगेय ! पांच स्थावर के जीव सान्तर नहीं उपजते किन्तु निरन्तर उपजते हैं।

३—अहो भगवान् ! क्या नारकी के नेरीये सान्तर उवटते हैं (नारकी से निकल कर दूसरी गति में जाते हैं) ? या निरन्तर उवटते हैं ? हे गांगेय ! सान्तर भी उवटते हैं और निरन्तर भी उवटते हैं। इसी तरह पांच स्थावर के सिवा शेष १८ दण्डक

---

* जिन जीवों की उत्पत्ति में समय आदि काल का अन्तर (व्यवधान) हो उसे सान्तर कहते हैं और जिन जीवों की उत्पत्ति में समय आदि काल का अन्तर (व्यवधान) न हो उसे निरन्तर कहते हैं।

× नरक में उत्पन्न होने वाले जीव दूसरी गति से आते हुए रास्ते में (वाटे बहते हुए) नरक का आयुष्य भोगते हैं, इसलिये उनको नारकी के नेरीये कहा है।

और कह देना किन्तु ज्योतिषी और वैमानिक देवों में चवना कहना।

४—अहो भगवान्! क्या पांच स्थावर के जीव सान्तर उवटते हैं या निरन्तर उवटते हैं ? हे गांगेय! सान्तर नहीं उवटते किन्तु निरन्तर उवटते हैं।

५—अहो भगवान्! ※ प्रवेशनक (उत्पत्ति) के कितने भेद हैं ? हे गांगेय! प्रवेशनक चार प्रकार का कहा गया है—१ नैरयिक प्रवेशनक, २ तिर्यंचयोनि प्रवेशनक, ३ मनुष्य प्रवेशनक, ४ देव प्रवेशनक।

६—अहो भगवान्! नैरयिक प्रवेशनक के कितने भेद कहे गये हैं ? हे गांगेय! नैरयिक प्रवेशनक के ७ भेद कहे गये हैं—रत्नप्रभा पृथ्वी प्रवेशनक यावत् तमतमापृथ्वीप्रवेशनक। इसी तरह तिर्यंचयोनि प्रवेशनक के ५ भेद हैं—एकेन्द्रिय, बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, पंचेन्द्रिय। मनुष्य प्रवेशनक के २ भेद हैं—सम्मूर्च्छिम और गर्भज। देव प्रवेशनक के ४ भेद हैं-भुवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिषी, वैमानिक।

※ एक गति से निकल कर दूसरी गति में उत्पन्न होने को प्रवेशनक कहते हैं।

एकादि जीव जिस गति में प्रवेश करते हैं उनके पद विकल्प भांगा संक्षेप में बतलाये जाते हैं—

जीव	स्थान के पद	१२ देवलोक संजोगी पद	नरक संजोगी पद	तिर्यञ्च संजोगी पद	मनुष्य संजोगी पद	देव संजोगी पद
	१	१२	७	५	२	४
२	३	६६	२१	१०	१	६
३	७	२२०	३५	१०		४
४	१५	४९५	३५	५		१
५	३१	७९२	२१	१		
६	६३	९२४	७			
७	१२७	७९२	१			
८	२५५	४९५				
९	५११	२२०				
१०	१०२३	६६				
११	२०४७	१२				
१२	४०९५	१				

नरक में १० जीव जावे उनके संजोगी विकल्प ४६६ होते हैं। वे विकल्प बनाने की रीति यह है—दस जीवों के विकल्प करने हों तो एक ऊपर लिखना और नीचे नौ का अंक

लिखना । इस तरह दो संजोगी ६ विकल्प हुए । नौ के अंकको आठ से गुणा करके दो का भाग देना तो तीन संजोगी ३६ विकल्प हुए । छत्तीस को सात से गुणा करके तीनका भागदेना तो चार संजोगी ८४ विकल्प हुए । चौरासी को छह से गुणा करके चार का भाग देना तो पांच संजोगी १२६ विकल्प हुए। एक सौ छब्बीस को पांच से गुणा करके पांच का भाग देना तो छह संजोगी १२६ विकल्प हुए । एक सौ छब्बीस को चार से गुणा करके छहका भाग देना तो सात संजोगी ८४ विकल्प हुए । फिर पद को विकल्प के साथ गुणा करने पर जो संख्या आवे उसको भांगा समझ लेना । इस प्रकार सब जगह जान लेना चाहिए।

स्थान के पद बनाने की रीति---सात नारकी के असंजोगी ७ पद हुए । इन सात को छह से गुणा करके दो का भाग देना, तोदो संजोगी २१ पद हुए।इक्कीस को पांच से गुणा करके तीन का भाग देना तो तीन संजोगी ३५ पद हुए । पैंतीस को चार से गुणा करके चार का भाग देना तो चार संजोगी ३५ पद हुए । पैंतीस को तीन से गुणा करके पांच का भाग देना तो पांच संजोगी २१ पद हुए । इक्कीस को दो से गुणा करके छह का भाग देना तो छह संजोगी ७ पद हुए । सातको एक से गुणा सात का भाग देना तो सातसंजो...

चार गति में एकादि जीवों के भांगों का यंत्र

जीव	नरक के भांगे	तिर्यंच के भांगे	मनुष्य के भांगे	देवता के भांगे
१	७	५	२	४
२	२८	१५	३	१०
३	८४	३५	४	२०
४	२१०	७०	५	३५
५	४६२	१२६	६	५६
६	९२४	२१०	७	
७	१७१६		८	
८	३००३		९	
९	५००५		१०	
१०	८००८		११	
संख्याता	३३३७			
असंख्याता	३६५८			
उत्कृष्ट	६४			

जैसे—सात नारकी में १ जीव जावे तो ७ भांगा, २ जीव जावे तो २८ भांगा, ३ जीव जावे तो ८४ भांगा, ४ जीव जावे तो २१० भांगा, जीव १० जीव जावे तो ८००८ भांगा, संख्याता जीव जावे तो ३३३७ भांगा, असंख्याता जीव जावे तो ३६५८ भांगा, उत्कृष्ट जीव जावे तो ६४ भांगा।

नरक के पद १२७ होते हैं। असंजोगी ७ पद * १, २,

---

* जहाँ १ का अंक है वहाँ पहली नरक,
जहाँ २ का अंक है वहाँ दूसरी नरक,

३, ४, ५, ६, ७। दो संजोगी २१ पद–१-२, १-३, १-४, १-५, १-६, १-७, २-३, २-४, २-५, २-६, २-७, ३-४, ३-५, ३-६, ३-७, ४-५, ४-६, ४-७, ५-६, ५-७, ६-७। दो संजोगी २१।

तीन संजोगी ३५ पद–१-२-३, १-२-४, १-२-५, १-२-६, १-२-७, १-३-४, १-३-५, १-३-६, १-३-७, १-४-५, १-४-६, १-४-७, १-५-६, १-५-७, १-६-७, २-३-४, २-३ ५,

---

जहाँ ३ का अंक है वहाँ तीसरी नरक,
जहाँ ४ का अंक है वहाँ चौथी नरक,
जहाँ ५ का अंक है' वहाँ पाँचवी नरक,
जहाँ ६ का अंक है, वहाँ छठी नरक,

जहाँ ७ का अंक है, वहाँ सातवीं नरक, समझना चाहिए। जैसे-एक जीव कोई पहली नरक में जाता है, कोई दूसरी नरकमें जाता है यावत् कोई सातवीं नरक में जाता है। इसी तरह दो जीव नरक में जाते हैं तो अ-संयोगी भांगे तो ऊपर बताये अनुसार बनते हैं। पहली दूसरी यावत् सातवीं नरक में जाते हैं। दो संयोगी जाते हैं तो एक पहली में एक दूसरी में, एक पहली में एक तीसरी में, एक पहली में एक चौथी में, इसीतरह यावत् एक छठी में एक सातवीं में यहाँ तक २१ पद कह देना चाहिये इसी तरह तीन संयोगी-एक पहली में, एक दूसरी में, एक तीसरी, में यावत् एक पाँचवीं में एक छठी में एक सातवीं में जाते हैं यहाँ तक ३५ पद कह देना चाहिए। इसी तरह सात संयोगी तक कह देना चाहिए।

२-३-६, २-३-७, २-४-५, २-४-६, २-४-७, २-५-६,
२-५-७, २-६-७, ३-४-५, ३-४-६, ३-४-७, ३-५-६,
३-५-७, ३-६-७, ४-५-६, ४-५-७, ४-६-७, ५-६-७।
तीन संजोगी ३५ पद हुए।

चार संजोगी ३५ पद- १-२-३-४, १-२-३-५, १-२-३-६,
१-२-३-७, १-२-४-५, १-२-४-६, १-२-४-७, १-२-५-६,
१-२-५-७, १-२-६-७, १-३-४-५, १-३-४-६, १-३-४-७,
१-३-५-६, १-३-५-७, १-३-६-७, १-४-५-६, १-४-५-७,
१-४-६-७, १-५-६-७, २-३-४-५, २-३-४-६, २-३-४-७,
२-३-५-६, २-३-५-७, २-३-६-७, २-४-५-६, २-४-५-७,
२-४-६-७, २-५-६-७, ३-४-५-६, ३-४-५-७, ३-४-६-७,
३-५-६-७, ४-५-६-७। चार संजोगी ३५ पद हुए।

पांचसंजोगी—२१ पद १-२-३-४-५, १-२-३-४-६, १-२-३-४-७, १-२-३-५-६, १-२-३-५-७, १-२-३-६-७, १-२-४-५-६, १-२-४-५-७, १-२-४-६-७, १-२-५-६-७, १-३-४-५-६, १-३-४-५-७, १-३-४-६-७, १-३-५-६-७, १-४-५-६-७, २-३-४-५-६, २-३-४-५-७, २-३-४-६-७, २-३-५-६-७, २-४-५-६-७, ३-४-५-६-७। पांचसंजोगी २१ पद हुए।

छहसंजोगी ७ पद—१-२-३-४-५-६, १-२-३-४-५-७, १-२-३-४-६-७, १-२-३-५-६-७, १-२-४-५-६-७, १-३-४-५-६-७, २-३-४-५-६-७। छह संजोगी ७ पद हुए।

सात संजोगी १ पद-१-२-३-४-५-६-७। सात संजोगी १ पद हुआ।
ये सब मिलाकर १२७ पद हुए।

इस रीति से अपने २ ठिकाने के पद समझ लेना चाहिए।

सात नारकी में ७ जीव जाते हैं उनके विकल्प ६४ होते हैं।

असंजोगी १ विकल्प—७ जीव एक साथ जावे।

दो संजोगी ६ विकल्प—१-६, २-५, ३-४, ४-३, ५-२, ६-१

तीन संजोगी १५ विकल्प—१-१-५, १-२-४, २-१-४, १-३-३, २-२-३, ३-१-३, १-४-२, २-३-२, ३-२-२, ४-१-२, १-५-१, २-४-१, ३-३-१, ४-२-१, ५-१-१।

चार संयोगी २० विकल्प—१-१-१-४, १-१-२-३, १-२-१-३, २-१-१-३, १-१-३-२, १-२-२-२, २-१-२-२, १-३-१-२, २-२-१-२, ३-१-१-२, १-१-४-१, १-२-३-१, २-१-३-१, १-३-२-१, २-२-२-१, ३-१-२-१, १-४-१-१, २-३-१-१, ३-२-१-१, ४-१-१-१।

पांच संयोगी १५ विकल्प—१-१-१-१-३, १-१-१-२-२, १-१-२-१-२, १-२-१-१-२, २-१-१-१-२, १-१-१-३-१, १-१-२-२-१, १-२-१-२-१, २-१-१-२-१, १-१-३-१-१, १-२-२-१-१, २-१-२-१-१, १-३-१-१-१, २-२-१-१-१, ३-१-१-१-१।

छह संजोगी ६ विकल्प—१-१-१-१-१-२, १-१-१-१-२-१, १-१-१-२-१-१, १-१-२-१-१-१, १-२-१-१-१-१, २-१-१-१-१-१,

सात संयोगी १ विकल्प—१-१-१-१-१-१-१।

सात जीव सात नारकी में जावे तो असंजोगी ७ भांगे बनते हैं–जैसे–७ जीव पहली नारकी में जाते हैं यावत ७ जीव सातवीं नारकी में जाते हैं। इस तरह ७ भांगे होते हैं।

सात जीव सात नारकी में दो संयोगी होकर जावें तो एक जीव पहली नारकी में, छह जीव दूसरी नारकी में, एक जीव पहली नारकी में, छह जीव तीसरी नारकी में, यावत् एक जीव पहली नारकी में, छह जीव सातवीं नारकी में, इस तरह १-६ विकल्प से ६ भांगे हुए।

दो जीव पहली में ५ जीव दूसरी में, २ जीव पहली में ५ जीव तीसरी में यावत् दो जीव पहली में ५ जीव सातवीं में, इस तरह २-५ विकल्प से ६ भांगे हुए। इस तरह दो संयोगी ६ विकल्प में पहली नारकी से ३६ भांगे हुए। दूसरी नारकी से ३०, तीसरी नारकी से २४, चौथी नारकी से १८, पांचवीं नारकी से १२, छठी सातवीं नारकी से ६। इस तरह दो संयोगी १२६ भांगे हुए।

इसी तरह तीन संयोगी के ५२५ भांगे हुए।

चार संयोगी के ७००, पांच संयोगी के ३१५, छह संयोगी के ४२, सात संयोगी का १। सब मिलाकर १७१६ (७+१२६+५२५+७००+३१५+४२+१=१७१६) भांगे हुए।

सात जीव सात नारकी में जाते हैं उनके पद १२७, जीवों के विकल्प ६४, और भांगे १७१६ होते हैं।

इसका विशेष खुलासा भगवती सूत्र के थोकड़े के तीसरे भाग के पृष्ठ ४ पर थोकड़ा नं० ७० देखिये।

नरक में एकादि जीवों का असंजोगादि भांगों का यंत्र

जीव	असंजोगी	दोसंजोगी	तीनसंजोगी	चारसंजोगी	पांचसंजोगी	छहसंजोगी	सातसंजोगी	भांगोंका जोड़
१	७	०	०	०	०	०	०	७
२	७	२१	०	०	०	०	०	२८
३	७	४२	३५	०	०	०	०	८४
४	७	६३	१०५	३५	०	०	०	२१०
५	७	८४	२१०	१४०	२१	०	०	४६२
६	७	१०५	३५०	३५०	१०५	७	०	९२४
७	७	१२६	५२५	७००	३१५	४२	१	१७१६
८	७	१४७	७३५	१२२५	७३५	१४७	७	३००३
९	७	१६८	९८०	१९६०	१४७०	३९२	२८	५००५
१०	७	१८९	१२६०	२९४०	२६४६	८८२	८४	८००८
संख्याता	७	२३१	७३५	१०८५	८६१	३५७	६१	३३३७
असंख्याता	७	२५२	८०५	११९०	९४५	३९२	६७	३६५८
उत्कृष्ट	१	६	१५	२०	१५	६	१	६४

इस तरह अपने अपने ठिकानेके संजोगी भांगे समझ लेना चाहिये।

एक जीव नरक में जावे उसके ७ भांगे होते हैं। सात को आठ से गुणा करके दो का भाग देने से दो जीवों के २८ भांगे होते हैं। अट्ठाईस को ९ से गुणा करके तीन का भाग देने से

तीन जीवों के ८४ भांगे होते हैं। इस तरह सब भांगे समझ लेना चाहिए।

जिस तरह से नरक के भांगे, पद, विकल्प कहे उसी तरह से बाकी तीन प्रवेशनक (तिर्यंच, मनुष्य, देव) के भी * भांगे, पद, विकल्प कर लेना चाहिए। उत्कृष्ट जीव प्रवेशनक आसरी नरक में जावे तो पहली नरक में जावे। तिर्यंच में जावे तो एकेन्द्रिय में जावे, मनुष्य में जावे तो सम्मूर्च्छिम मनुष्य में जावे, देव में जावे तो ज्योतिषी में जावे।

नरक प्रवेशनक की अल्पबहुत्व—

१ सब से थोड़ा सातवीं नरक प्रवेशनक।
२ उससे छठी नरक प्रवेशनक असंख्यात गुणा।
३ उससे पांचवीं नरक प्रवेशनक असंख्यात गुणा।
४ उससे चौथी नरक प्रवेशनक असंख्यात गुणा।
५ उससे तीसरी नरक प्रवेशनक असंख्यात गुणा।
६ उससे दूसरी नरक प्रवेशनक असंख्यात गुणा।
७ उससे पहली नरक प्रवेशनक असंख्यात गुणा।

तिर्यंच प्रवेशनक की अल्पबहुत्व—

१ सब से थोड़ा पचेन्द्रिय तिर्यंच प्रवेशनक
२ उससे चौइन्द्रिय प्रवेशनक विशेषाहिया
३ उससे तेइन्द्रिय प्रवेशनक विशेषाहिया

---

* विशेष विस्तार देखना हो तो इसी संस्था द्वारा प्रकाशित प्रस्तार रत्नावली में देखिये।

नरक में एकादि जीवों का असंजोगादि भांगों का यंत्र

जीव	असंजोगी	दोयसंजोगी	तीनसंजोगी	चारसंजोगी	पांचसंजोगी	छहसंजोगी	सातसंजोगी	भांगोंका योग
१	७	०	०	०	०	०	०	७
२	७	२१	०	०	०	०	०	२८
३	७	४२	३५	०	०	०	०	८४
४	७	६३	१०५	३५	०	०	०	२१०
५	७	८४	२१०	१४०	२१	०	०	४६२
६	७	१०५	३५०	३५०	१०५	७	०	९२४
७	७	१२६	५२५	७००	३१५	४२	१	१७१
८	७	१४७	७३५	१२२५	७३५	१४७	७	३००
९	७	१६८	९८०	१९६०	१४७०	३९२	२८	५००
१०	७	१८९	१२६०	२९४०	२६४६	८८२	८४	८००
संख्याता	७	२३१	७३५	१०८५	८६१	३५७	६१	३३३७
असंख्याता	७	२५२	८०५	११९०	९४५	३९२	६७	३६५८
उत्कृष्ट	१	६	१५	२०	१५	६	१	६४

इस तरह अपने अपने ठिकानेके संजोगी भांगे समझ लेना चाहिये।

एक जीव नरक में जावे उसके ७ भांगे होते हैं। सात को आठ से गुणा करके दो का भाग देने से दो जीवों के २८ भांगे होते हैं। अट्ठाईस को ९ से गुणा करके तीन का भाग देने से

तीन जीवों के ८४ भांगे होते हैं। इस तरह सब भांगे समझ लेना चाहिए।

जिस तरह से नरक के भांगे, पद, विकल्प कहे उसी तरह से बाकी तीन प्रवेशनक (तिर्यंच, मनुष्य, देव) के भी * भांगे, पद, विकल्प कर लेना चाहिए। उत्कृष्ट जीव प्रवेशनक आसरी रक में जावे तो पहली नरक में जावे। तिर्यंच में जावे तो केन्द्रिय में जावे, मनुष्य में जावे तो सम्मूर्च्छिम मनुष्य में जावे, देव में जावे तो ज्योतिषी में जावे।

नरक प्रवेशनक की अल्पबहुत्व—

१ सब से थोड़ा सातवीं नरक प्रवेशनक।
२ उससे छठी नरक प्रवेशनक असंख्यात गुणा।
३ उससे पांचवीं नरक प्रवेशनक असंख्यात गुणा।
४ उससे चौथी नरक प्रवेशनक असंख्यात गुणा।
५ उससे तीसरी नरक प्रवेशनक असंख्यात गुणा।
६ उससे दूसरो नरक प्रवेशनक असंख्यात गुणा।
उससे पहली नरक प्रवेशनक असंख्यात गुणा।

तिर्यंच प्रवेशनक की अल्पबहुत्व—

१ सब से थोड़ा पंचेन्द्रिय तिर्यंच प्रवेशनक
२ उससे चौइन्द्रिय प्रवेशनक विशेषाहिया
३ उससे तेइन्द्रिय प्रवेशनक विशेषाहिया

* विशेष विस्तार देखना हो तो इसी संस्था द्वारा प्रकाशित प्रस्तार रत्नावली में देखिये।

४ उससे बेइन्द्रिय प्रवेशनक विशेषाहिया
५ उससे एकेन्द्रिय प्रवेशनक विशेषाहिया।

मनुष्य प्रवेशनक की अल्पबहुत्व—
१ सब से थोड़े गर्भज मनुष्य प्रवेशनक
२ उससे सम्मूर्च्छिम मनुष्य प्रवेशनक असंख्यात गुणा।

देव प्रवेशनक की अल्पबहुत्व—
१ सब से थोड़े वैमानिक देव प्रवेशनक
२ उससे भवनपति देव प्रवेशनक असंख्यात गुणा
३ उससे वाणव्यन्तर देव प्रवेशनक असंख्यात गुणा
४ उससे ज्योतिषी देव प्रवेशनक संख्यात गुणा।

चारों गति की सामिल अल्पबहुत्व—
१ सब से थोड़े मनुष्य प्रवेशनक
२ उससे नरक प्रवेशनक असंख्यात गुणा
३ उससे देव प्रवेशनक असंख्यात गुणा
४ उससे तिर्यंच प्रवेशनक असंख्यात गुणा।

लोक शाश्वत है, इसलिये नरकादि २४ ही दण्डक के जी
स्वयमेव उत्पन्न होते हैं, यह बात श्रमण भगवान् महावीर स्वा
केवलज्ञान के द्वारा स्वयमेव जानते हैं।

नरक के जीव अशुभ कर्म के उदय से देव शुभ कर्म
उदय से, मनुष्य और तिर्यंच शुभाशुभ कर्मों के उदय से स्व
मेव उन गतियों में उत्पन्न होते हैं।

पार्श्वनाथ भगवान् के शिष्य गांगेय अनगार ने यह सा

अधिकार श्रमण भगवान महावीर स्वामी से सुना, सुन कर यह निश्चित रूप से जान लिया कि श्रमण भगवान महावीर स्वामी केवलज्ञानी हैं। फिर चतुर्याम (चार महाव्रत) धर्म से पंच महाव्रत धर्म स्वीकार किया, यावत् सब दुःखों का अन्त कर मोक्ष पधारे।

सेवं भंते ! सेवं भंते !!